त्रैमासिक पत्रिका । वर्ष 2, अंक 3 । जनवरी–मार्च 2012

विज्ञान परिचर्चा

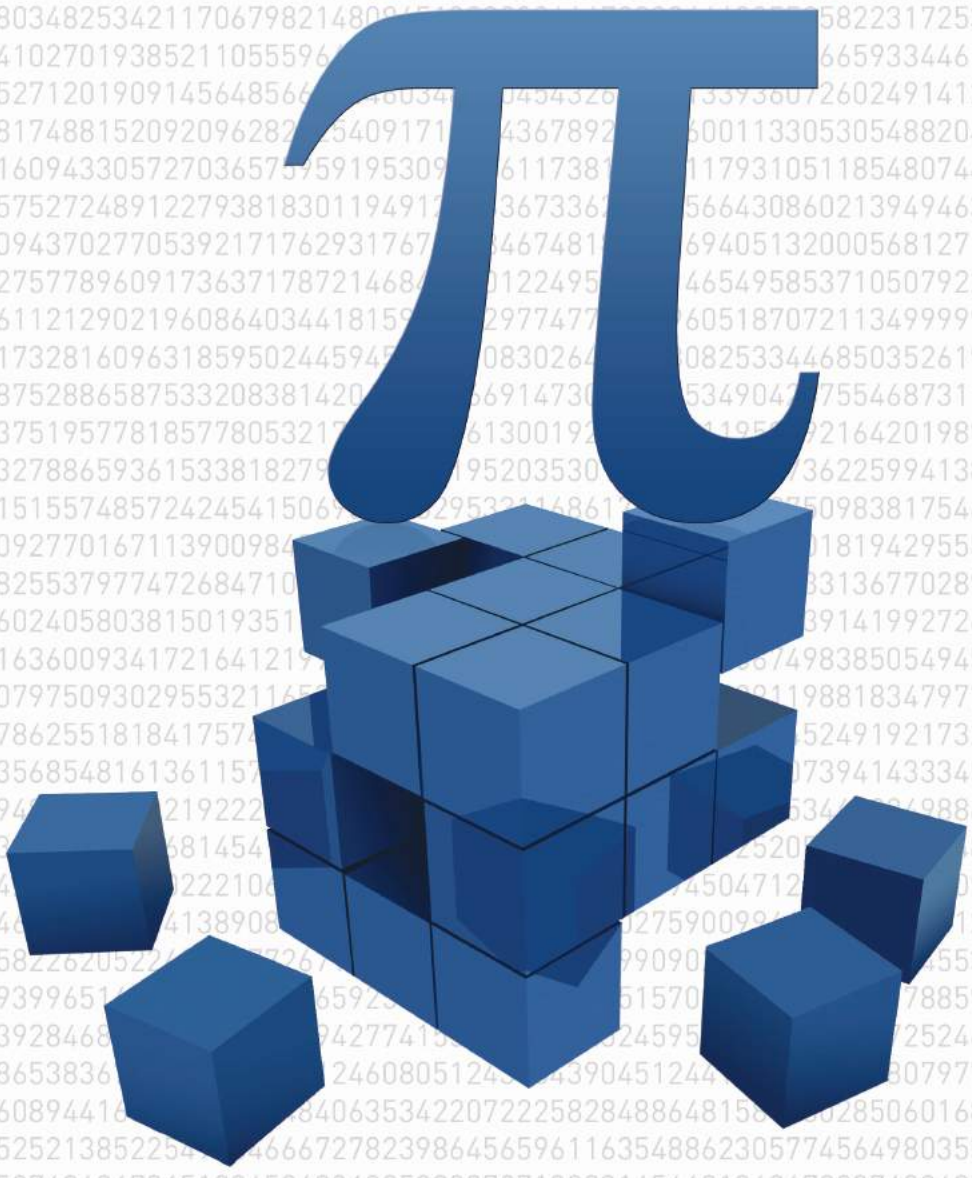

राष्ट्रीय गणित वर्ष २०१२

अधिशासी सम्पादक

देवी प्रसाद उनियाल,
वरिष्ठ वैज्ञानिक अधिकारी, उत्तराखंड राज्य विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी परिषद्, (यूकॉस्ट)

प्रबन्ध सम्पादक

कमला पन्त,
अध्यक्ष, पीपुल्स एसोसिएशन ऑफ हिल एरिया लांचर्स (पहल)

प्रधान सम्पादक

मुकुन्द नीलकण्ठ जोशी
एसोशिएट प्रोफेसर (से.नि.),
डी.बी.एस. कालेज, देहरादून

सम्पादन सहयोग

शशिकान्त गुप्त
एसोशिएट प्रोफेसर (से.नि.),
डी.बी.एस. कालेज, देहरादून

अजय कुमार बियानी
एसोशिएट प्रोफेसर,
डी.बी.एस. कालेज, देहरादून

नीलाम्बर पुनेठा
जिला समन्वयक, यू–कास्ट, पिथौरागढ़

अशोक कुमार पंत
राज्य समन्वयक,
राष्ट्रीय बाल विज्ञान कांग्रेस, उत्तराखण्ड

दिनेश चन्द्र शर्मा
ग्रा० व पोस्ट मस्वासी,
तहसील स्वार, रामपुर, (उ.प्र.)

सलाहकार मण्डल

प्रो. ए.एन. पुरोहित,
पूर्व कुलपति,
हे.न.ब. गढ़वाल विश्वविद्यालय, आलमी आँचल,
डोभालवाला, देहरादून

डॉ. राजेन्द्र डोभाल,
महानिदेशक,
उत्तराखण्ड राज्य विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी परिषद,
देहरादून

डॉ. एस.एस. नेगी,
निदेशक,
वन अनुसंधान संस्थान,
देहरादून

प्रो. एस.सी. सक्सेना,
निदेशक,
भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान,
रूड़की

डॉ. ए.के. गुप्ता,
निदेशक, वाड़िया हिमालय भूविज्ञान संस्थान,
देहरादून

डॉ. मनोज पटेरिया,
निदेशक,
राष्ट्रीय विज्ञान एवं प्रोद्योगिकी संचार परिषद्,
नई दिल्ली

डॉ लीलाधर जगूड़ी,
सीताकुटीर, बदरीपुर,
देहरादून

डॉ. एम.ओ. गर्ग,
निदेशक,
भारतीय पेट्रोलियम संस्थान,
देहरादून

प्रो. धीरेन्द्र शर्मा,
निदेशक,
सेंटर फॉर साइंस पॉलिसी रिसर्च, निर्मल निलय,
भगवंतपुर, देहरादून

डॉ. रवि चोपड़ा,
पीपुल्स साइंस इंस्टीट्यूट,
252, वसंत विहार, फेज–1,
देहरादून

डॉ. बी.एस. बिष्ट,
कुलपति,
जी.बी.पन्त कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय,
पन्तनगर

डॉ. जी.एस. रौतेला,
महानिदेशक,
राष्ट्रीय विज्ञान संग्रहालय परिषद्,
कोलिकाता

डॉ. डी.के. पाण्डे,
राष्ट्रीय विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी संचार परिषद,
नई दिल्ली

डॉ अनुज सिन्हा,
सलाहकार, विज्ञान प्रसार
विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी विभाग,
भारत सरकार

डॉ एल.एम.एस. पालनी,
निदेशक,
गोविन्द बल्लभ पन्त हिमालय पर्यावरण विकास संस्थान, कटारमल कोसी,
अल्मोड़ा

प्रो० रामसागर,
निदेशक,
आर्यभट्ट प्रेक्षण विज्ञान संस्थान,
नैनीताल

डा० जगदीश चन्द्र भट्ट,
निदेशक,
विवेकानन्द पर्वतीय कृषि अनुसंधान संस्थान,
अल्मोड़ा

© vigyan pricharcha, 2010

प्रकाशकीय कार्यालय
मृत्युंजय धाम, 18, शास्त्री नगर, हरिद्वार रोड, देहरादून–248001

फोन : 0135-2669236
मोबाइल : 09759348564, 09412047994, 09897020782, 09837862096
ईमेल : pahal_uttarakhand@yahoo.co.in, mukund13joshi@rediffmail.com
वेबसाइट : www.pahal_understanding.org

मुद्रक
एक्सप्रेशन प्रिन्ट एंड ग्राफिक्स
174 सुभाष नगर, देहरादून, 9219552563
e: pacesanjay@rediffmail.com

विज्ञान परिचर्चा के लेखों में प्रकाशित सभी विचार लेखकों के अपने हैं तथा लेखकीय स्वतन्त्रता के अन्तर्गत व्यक्त किये गये हैं। उनके साथ सम्पादक अथवा प्रकाशक का सहमत होना या उन विचारों का पत्रिका की नीति से कोई सम्बन्ध होना आवश्यक नहीं है।

विज्ञान परिचर्चा

त्रैमासिक पत्रिका
वर्ष 2, अंक 3
जनवरी–मार्च 2012

पीपुल्स एसोसिएशन ऑफ हिल एरिया लांचर्स (पहल), भारतीय विज्ञान लेखक संघ (इस्वा) उत्तराखंड प्रभाग तथा उत्तराखंड राज्य विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी परिषद् (यूकॉस्ट) के संयुक्त तत्त्वावधान में प्रकाशित त्रैमासिक पत्रिका, अंतर्भूत उत्तराखण्ड राज्य विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी परिषद् समाचार पत्रक–
जनवरी–मार्च 2012

PEOPLE'S ASSOCIATION OF HILL-AREA LAUNCHERS
पहल

ucost यूकास्ट विज्ञानम् लोकहिताय

INDIAN SCIENCE WRITERS' ASSOCIATION ISWA

यह पत्रिका विज्ञान के प्रचार–प्रसार हेतु, विज्ञान–सुधी पाठकों के आग्रह पर 'प्रकाशकीय कार्यालय' से निःशुल्क प्रदान की जाती है।

अनुक्रम

पाठकों की प्रतिक्रिया	04
सम्पादकीय	05
उत्तराखण्ड के विज्ञान ऋषि 6 – डॉ. शरद सिंह नेगी – मुकुंद नीलकंठ जोशी	06
आइये, विज्ञानी बनें – मुकुंद नीलकंठ जोशी	09
वानिकी में बीजों का महत्व – ओमवीर सिंह	12
विज्ञान कविता – पृथ्वी का इतिहास	15
पृथ्वी–समीप पिन्डों के सम्पर्क माध्यम का विशिष्ट मिशन 'न्योवाइज' का समापन – काली शंकर	16
एक संकटग्रस्त पक्षी प्रजाति – एडीबल नेस्ट स्विफ्ट्लेट (हवाबिल) घोंसले का सूप! – एम. विजय[1] एवं बृजेश कुमार[2]	20
स्वरोजगार – मछली पालन उद्योग – एस० के० गुप्ता	22
विज्ञान व्यंग – पपीता पेड़ से क्यों गिरा? – अशोक कुमार दुबे	26
कुछ त्रुटियाँ जो बड़ी वैज्ञानिक खोजों का कारण बनी – कुलदीप गैरोला	28
विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी विभाग समाचार पत्रक	31
पहल के समाचार	39

99वीं भारतीय विज्ञान काँग्रेस (भाविकाँ) अभूतपूर्व विज्ञान–महाकुंभ – दिनेश चन्द्र शर्मा 40

कदली वृक्ष आस्था एवं वैज्ञानिक दृष्टि – पी० सी० पाण्डे एवं भावना जोशी पाण्डे 45

सावधान! मधुमेह जानलेवा है – प्रेमचन्द्र श्रीवास्तव 50

हिन्दी में बाल विज्ञान साहित्यः एक दृष्टि – आइवर यूशिएल 53

विज्ञान लेखन के प्रकाश स्तम्भ डा० रमेश दत्त शर्मा – अर्चना बहुगुणा 56

परितंत्र की कहानी – हाथियों की बुद्धिमानी – दिनेश चन्द्र शर्मा 58

अपना विज्ञान ज्ञान बढ़ाइये – न उड़ सकने वाले, पक्षी! – दीपाली राणा 60

विज्ञान व्यंग चित्र – अशोक कुमार दुबे 66

विज्ञान वर्ग पहेली 67

पाठकों की प्रतिक्रिया

विज्ञान परिचर्चा वर्ष 1 अंक 4 में 'उत्तराखण्ड के विज्ञान ऋषि' स्तम्भ में अपने गुरु प्रो० एस.पी. सिंह जी का परिचय तथा उनसे साक्षात्कार पढ़ कर अत्यन्त प्रसन्नता हुई। प्रो० सिंह एक आदर्श प्राध्यापक रहे हैं। अध्यापन के प्रति उनका समर्पण हमें आज भी प्रोत्साहित करता है। स्नातकोत्तर पाठयक्रम के दो वर्षों में कई बार आयोजित शैक्षिक भ्रमण में उन्होंने हमारा मार्ग दर्शन किया एवं प्रकृति की वानस्पतिक संपदा के प्रति हमारी रूचि को जागृत किया। इन्हीं भ्रमणों के दौरान मैं उनके निकट संपर्क में आया एवं गुरु के साथ–साथ उनका मित्रवत् व्यवहार भी पाया। उन्होंने प्रो. जे. जे. सिंह के साथ हिमालय की वन संपदा एवं पारिस्थितिकी पर कई उत्कृष्ट पुस्तकें लिखी हैं जिनकी अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर भी सराहना हुई है। हिमालय के सन्दर्भ में ये पुस्तकें वनस्पति विज्ञान के शोध छात्रों के लिये मील का पत्थर है।

गढ़वाल विश्वविद्यालय के कुलपति के रूप में हमें उनकी प्रशासनिक दक्षता का भी परिचय मिला। उनके अपने अधीनस्थ अधिकारियों एवं कर्मचारियों के प्रति पूर्ण विश्वास, सहयोग एवं तत्काल निर्णय लेने का ही फल था कि उनके कार्यकाल में सभी विश्वविद्यालय कार्य नियत समय पर उत्तम ढंग से पूर्ण होते रहे। अकादमिक कार्यों के अतिरिक्त उनकी रुचि खेलकूद के प्रति भी रही जिसके कारण वे छात्रों, कर्मचारियों एवं अध्यापकों के निकट संपर्क में रहे। प्रो० सिंह के कार्यकाल में ही विश्वविद्यालय के दीक्षान्त समारोह में तत्कालीन राष्ट्रपति प्रो० ए.पी.जे. अब्दुल कलाम का आगमन हुआ। विश्वविद्यालय को केन्द्रीय विश्वविद्यालय का दर्जा दिये जाने हेतु उनका प्रयास सर्वविदित है।

ऐसे गुरु को मेरा कोटि कोटि प्रणाम।

विज्ञान परिचर्चा को भी ऐसे महान् विज्ञान वेत्ता का परिचय प्रकाशित करने हेतु बधाई।

प्रो० ए.बी.भट्ट
प्राध्यापक, वनस्पति विज्ञान
हे.न.ब. गढ़वाल (केन्द्रीय) विश्वविद्यालय
श्रीनगर

'क्या आप संकल्प लेंगे कि शिक्षक एक साधक भी है?' यह सन्देश दिया था कुमाऊँ विश्वविद्यालय के प्रथम कुलपति प्रो. डी. डी. पन्त ने प्रो. सुरेन्द्र प्रताप सिंह को। विज्ञान परिचर्चा के वर्ष 2 अंक 1 में उत्तराखण्ड के विज्ञान ऋषि स्तम्भ में प्रो. सिंह के संबंध में लेख पढ़ कर मुझे उपर्युक्त वाक्य की याद आ गई। प्रो सिंह ने अपने साक्षात्कार में जो कुछ बताया उससे स्वयं सिद्व हो जाता है कि एक महान वैज्ञानिक होते हुए भी वे सादगी के मूर्तिमान प्रतीक हैं। जब उन्होंने बताया कि 'मेरे श्वशुर कुलपति थे, मेरे गुरू विषय विशेषज्ञ तो मेरा चयन तो होना ही था। पर मुझे नहीं चुना गया। चुने गये डॉ. जे. जे. सिह। जब वे विभाग में आये और मैने उनके द्वारा किये गये शोध कार्यो को देखा तो मेरी समझ में आया कि मैं उनके सामने कुछ भी नहीं था। मैने उनके साथ जुड़.. कर दस वर्षों तक कार्य करके सीखा।' इतनी साफगोई से यथातथ्य बातों को रखना तथा अपना नम्र भाव प्रकट करना वयक्ति के चरित्र को अत्युच्चय शिखर पर पहुंचा देना है। प्रो. सिंह का आत्माभिमान भी उनके इस वाक्य से प्रकट होता है कि मैने विदेश यात्राएँ उपने शोध कार्यों के लिए तो कीं परन्तु पढ़ने के लिये कभी विदेश नहीं गया। ऐसे विद्वान विज्ञान ऋषि सुरेन्द्र प्रताप सिंह के शिक्षा के प्रति समर्पण का इतना उत्तम वर्णन प्रस्तुत करने के लिये डॉ. मुकुन्द नीलकण्ठ जोशी बधाई के पात्र हैं।

परिचर्चा का डॉ. अजय कुमार बियानी लिखित सम्पादकीय भी अत्यन्त सुन्दर और समीचीन है। ज्ञान–विज्ञान के क्षेत्र में भी बड़ा भ्रष्टाचार फैला है। दूसरों के लेख तथा आंकड़ों को अपना बना लेना, झूठे आंकड़े तैयार करना आदि सब सचमुच चल रहा है। इसे रोकने के प्रयास होने चाहिये।

परिचर्चा के अन्य अनेक लेख भी ज्ञानवर्द्धक तथा पठनीय है। साज सज्जा कलेवर भी आकर्षक है। ऐसी उत्तम पत्रिका के प्रकाशन हेतु सम्पादक मण्डल तथा उन्य सभी संबद्व व्यक्ति अभिनन्दनीय हैं।

प्रो. डी. पी. एस. खन्ना
विभागाध्यक्ष (से.नि.)
समाज विज्ञान विभाग,
हे. न. ब. गढ़वाल विश्वविद्यालय,
श्रीनगर

संपादकीय

वर्ष 2012 को हम राष्ट्रीय गणित वर्ष के रूप में मना रहे हैं। इस वर्ष भारत के एक महान् गणितज्ञ श्रीनिवास रामानुजन की 125वीं वर्षगांठ है। वास्तव में गणित सारे विज्ञान का मूलभूत आधार है। मनुष्य ने लिपि का आविष्कार तो बहुत बाद में किया परन्तु उसके विकास के पहले चरण में ही भाषा और साथ ही साथ गणित की समझ आ गई होगी। विश्व की सभी प्राचीन सभ्यताओं में हम गणित का विकास देखते हैं। उसमें भी शून्य की कल्पना तथा दशमान पद्धति से अंकों का प्रकटीकरण सर्वप्रथम भारत में हुआ ऐसा विद्वान् मानते हैं। प्राचीन भारत में विज्ञान की प्रगति विषय पर जो भी अध्ययन करते हैं वे हमें बताते हैं कि हमारे यहाँ गणित के क्षेत्र में बहुत कार्य हुआ। लगध, ब्रह्मगुप्त, आर्यभट्ट, वराहमिहिर, आदि कुछ ऐसे गणितज्ञ इस देष में हुए जिनके ज्ञान से गणित की सभी शाखाओं तथा खगोल शास्त्र में भारत विश्व में एक अग्रणी देश बना। विश्व के अन्य स्थानों में भी गणित की प्रगति हो रही थी तथा भारतीय गणितज्ञ वहाँ के कार्यों से भी परिचित थे। ज्ञान का आदान–प्रदान नियमित रूप से होता था। गुप्तकालीन विद्वान् वराहमिहिर ने अपनी पंचसिद्धान्तिका नामक पुस्तक में गणित के पाँच सिद्धान्तों का वर्णन किया है। वे हैं सूर्य सिद्धान्त, वसिष्ठ सिद्धान्त, पुलिस सिद्धान्त, रोमक संहिता तथा **ब्रह्मसिद्धान्त**। इनमें से पुलिश सिद्धान्त यूनान के अलेक्जेंड्रिया नामक स्थान के तथा रोमक संहिता रोम (इटली) के विद्धानों द्वारा प्रतिपादित है। इतना ही नहीं वराहमिहिर ने अपनी बृहत्संहिता नामक ग्रंथ में तो यहाँ तक लिख दिया कि

'म्लेच्छा हि यवनाः तेषु, सम्यक् शास्त्रम् व्यवस्थितम्
ऋषिवत् तेऽपि पूज्यन्ते, किं पुनर्दैवविद् द्विजः **(2.15)**

अर्थात् सारे शास्त्रों के ज्ञाता म्लेच्छ या यवन भी हों तो भी वे ऋषियों के समान ही पूजनीय हैं; फिर द्विज ज्योतिषियों की बात ही क्या है?

भारत की यह गणितीय परम्परा आगे भी चलती रही। मध्यकाल के भास्कराचार्य या वर्तमान काल के केरूनाना छत्रे, गणेश प्रसाद, श्रीनिवास रामानुजन्, गोरख प्रसाद या आज के जयन्त विष्णु नारलीकर इस अविच्छिन्न परम्परा की कड़ियाँ हैं।

केवल गणित ही नहीं विज्ञान के अन्य अनेक क्षेत्रों में भारतीय चमकते रहे हैं। भौतिक विज्ञान, रसायन विज्ञान, आयुर्वेद, भवन निर्माण विज्ञान, भूगोल, भूविज्ञान, वनस्पति विज्ञान, प्राणी विज्ञान जैसे शुद्ध वैज्ञानिक क्षेत्र हों या मनोविज्ञान, साहित्य शास्त्र, संगीत शास्त्र, तत्त्वज्ञान, राजनीति शास्त्र जैसे सामाजिक विषय हों भारतीय प्रतिभा कभी भी, कहीं भी कमतर नहीं रही।

यह सब जितना सच है उतना ही यह भी सच ही है कि विष्व के अन्य अनेक भागों के समान ही भारत में भी वैज्ञानिक दृष्टिकोण का विकास अपेक्षाकृत कम ही हुआ। अंधविश्वास, ढकोसले बाजी, आस्था के नाम पर ठगी भी खूब पनपी फूली। सामाजिक विषमताओं और जातिगत भेदभावों ने समाज को खोखला कर दिया। कहाँ म्लेच्छों और यवनों अर्थात् विदेशियों को भी ऋषियों के समान सम्माननीय बताने वाले वराहमिहिर और कहाँ अपने ही देशबांधवों से घृणा एवं द्वेष करने वाले उनके उत्तराधिकारी।

आज आवश्यकता है समाज में वैज्ञानिक सोच को बढ़ावा देने की। मानव ने अपनी वुद्वि से पृथ्वी का स्वरूप बदल दिया है। इसकी अच्छाइयों को वह जैसे समझता है वैसे ही उससे होने वाले दुष्परिणामों से भी वह चिंतित है। यदि वैज्ञानिक उन्नति ने कुछ समस्यायें उत्पन्न की हैं तो उनका समाधान भी वैज्ञानिक ही करेंगे, कर रहे हैं। आवश्यकता है हमारे सबके अन्दर वैज्ञानिक चिन्तन् के विकास की। केवल खुद की पीठ थपथपाकर ही जैसे कुछ नहीं मिलता वैसे ही खुद को केवल कोसते रहते और इसलिये रोते रहने से भी कुछ नहीं मिलता। हम प्राचीन भारतीय विरासत पर गर्व तो कर सकते हैं परन्तु हमारे पूर्वजों ने घी खाया था इसलिये हमारे हाथ सुगन्धित नहीं होने वाले। हमें तो स्वयं ही उठना, जागना और विद्वानों से ज्ञान प्राप्त करना होगा। हमें हमारे प्राचीन तत्त्वचिंतक पुकार पुकार कर कह रहे हैं कि 'उत्तिष्ठत! जागृत! प्राप्यवरान्निबोधत!' (कठोपनिषद्, 1.3.14)

उत्तराखण्ड के विज्ञान ऋषि – 6

मुकुन्द नीलकण्ठ जोशी

डॉ. शरद सिंह नेगी

हम जब भी आमतौर पर वन या जंगल की कल्पना करते हैं तो हमें एक ऐसे क्षेत्र का मन में विचार आता है जो सघन वृक्षों और क्रूर बनैले पशुओं से भरा हो और जहाँ सभ्य मानव समाज का कोई सदस्य न रहता हो। इसीलिये शायद प्राचीन काल में किसी को दण्डित या पीड़ित करना हो तो उसे ग्राम या नगर छोड़ वन में जा कर रहने का आदेश दे दिया जाता था। कैकेयी ने राम के लिये चौदह वर्ष का और कौरवों ने पाण्डवों के लिये बारह वर्ष का वनवास इसीलिये मांगा होगा। यह भी कल्पना की जाती है कि वनों में ऋषि मुनि घास-फूस की झोपड़ी बना कर एकान्त में रह कर तपस्या करते थे। इस प्रकार सामान्य धारणा यही थी कि वन भले आदमियों के लिये नहीं होते। भाषा में भी 'वह एकदम जंगली है' 'मैं घर छोड़ दूं तो क्या जंगल में जा कर रहूँ' या जंगली की तरह व्यवहार करना छोड़ दो' जैसे प्रयोग हमारी इसी समझ को दर्शाते हैं। परन्तु आज वन की यह कल्पना बदल चुकी है। वन समाज का एक भाग हैं। कोई व्यक्ति दण्डित होकर या तपस्या करने वन में प्रवेश नहीं कर सकता। वन शोधकर्ताओं, वैज्ञानिकों तथा व्यापारियों की गतिविधियों के केन्द्र बन चुके हैं। सारे वन क्षेत्र की देखभाल तथा व्यवस्था सभ्य समाज का उत्तरदायित्व है तथा इस कार्य के लिये अधिकारियों तथा वैज्ञानिकों का एक बहुत बड़ा समूह कार्यरत है। वन वैज्ञानिक अनुसन्धान का विषय है। इससे संबंधित अनेक शोध संस्थान विश्व भर में और हमारे देश में भी कार्यरत हैं। देहरादून स्थित वन अनुसंधान संस्थान ऐसा ही एक अग्रणी शोध संस्थान है। इस संस्थान का सौभाग्य रहा है कि इसमें एक से एक श्रेष्ठ वैज्ञानिक गत अनेक वर्षों से देश तथा विश्व की वन सम्पदा के विविध आयामों पर अत्यन्त उच्च स्तरीय शोध कार्य करते आ रहे हैं। इसीलिये ऐसे संस्थान के निदेशक पद का उत्तरदायित्व भी उसी योग्यता के अधिकारी व्यक्ति निभाते रहे हैं। उत्तराखण्ड के लिये यह एक अत्यन्त गौरव का विषय है कि गत कुछ वर्षों से इस दायित्व का निर्वहन उत्तराखण्ड के एक सपूत सुयोग्य वन अधिकारी, श्रेष्ठ वैज्ञानिक अविराम लेखक तथा कुशल प्रशासक डॉ. शरद सिंह नेगी ने किया है।

दिनाँक 1 अप्रैल 1957 को एक सैनिक परिवार में जन्मे डॉ. नेगी का प्रारंभिक जीवन मसूरी में बीता। उनके पिता सेना में मेजर थे। डॉ. नेगी ने प्राथमिक और माध्यमिक शिक्षा मसूरी के सेंट जॉर्ज कॉलेज में प्राप्त की। तदनन्तर बी.एससी. तथा 1978 में एम.एससी. (भू–विज्ञान) की गढ़वाल विश्वविद्यालय की उपाधियाँ दयानन्द बृजेन्द्र स्वरूप महाविद्यालय, देहरादून में अध्ययन कर प्राप्त कीं। इस महाविद्यालय में मैं भी उनका एक अध्यापक था। किसी भी व्यक्ति के लिये

अपने गुरु के सम्मान में लेख लिखना जितने आनन्द की बात हो सकती है उससे अधिक आनन्द का विषय एक अध्यापक के लिये अपने विद्यार्थी को श्रेष्ठता के शिखर पर विराजमान देखना तथा उसका गौरव करने का अवसर प्राप्त करना होता है और आज मैं उसका अनुभव कर रहा हूँ। एम.एससी. करने के बाद डॉ० नेगी हिमालयीय भूविज्ञान के शोध कार्य में जुट गये और डी.बी.एस. महाविद्यालय के पूर्व विभागाध्यक्ष डॉ. बालकृष्ण पांडेय के निर्देशन में सन् 1985 में उन्होंने पी.एचडी. की उपाधि प्राप्त की। यह शोधकार्य उन्होंने वाड़िया हिमालय भूविज्ञान संस्थान की प्रयोगशाला में किया।

इसी बीच वे भारतीय वन सेवा के लिये चुने गये तथा सन् 1982 में उन्होंने इंडियन फॉरेस्ट कॉलेज से वन विज्ञान में उपाधि प्राप्त की। वनाधिकारी के दायित्व को निभाते हुए भी डॉ. नेगी की ज्ञानपिपासा कभी बुझी नहीं और सन् 2005 में उन्होंने हे०न०ब० गढ़वाल विश्वविद्यालय से भूविज्ञान में डी.एस.सी. की सर्वोच्च उपाधि प्राप्त की। इस विश्वविद्यालय के वे भूविज्ञान के प्रथम डी.एससी. है। डी.एससी. के लिये उनके सलाहकार थे डी.बी.एस. महाविद्यालय के प्राध्यापक डॉ. मीनाक्षी सुन्दरम् अनन्तरामन्।

एक बार कोई व्यक्ति सरकारी अधिकारी बन जाय तो वह नौकरशाही के जाल में ऐसा उलझ जाता है कि पढ़ाई लिखाई के क्षेत्र से लगभग कट ही जाता है। परन्तु डॉ. नेगी ने अपने शासकीय दायित्वों का पूर्ण निष्ठा के साथ पालन करते हुए भी अपनी ज्ञान पिपासा को कभी भी बुझने नहीं दिया। वन अधिकारी के रूप में वे हिमाचल प्रदेश से सम्बद्ध हुए जहाँ उन्होंने सहायक वन संरक्षक, क्षेत्रीय वन अधिकारी, वन संरक्षक आदि अनेक पदों पर कार्य किया। वे 1994 से 1997 तक देहरादून स्थित इंडियन काउंसिल ऑफ फॉरेस्ट्री रिसर्च एण्ड एजुकेशन के सहायक महानिदेशक भी रहे। सन् 2003 से 2005 तक हिमाचल प्रदेश राज्य पर्यावरण संरक्षण तथा प्रदूषण नियन्त्रण बोर्ड के सदस्य सचिव के पद का कार्यभार संभाला। अध्ययन अध्यापन की सहज स्वाभाविक रुचि के कारण देहरादून स्थित इंदिरा गाँधी नेशनल फॉरेस्ट एकेडेमी में 1985 से 1990 तक एसोशिएट प्रोफेसर के पद पर रह कर भारतीय वन सेवा में आने वाले नवनियुक्त अधिकारियों के प्रशिक्षण कार्यक्रम का भी दायित्व उन्होंने निभाया। 1986 से 1987 वर्ष में वे जर्मनी में म्यूनिख में स्थित इंस्टीट्यूट फॉर सिल्वीकल्चर एण्ड फॉरेस्ट मैनेजमेंट में अतिथि वैज्ञानिक के रूप में रहे जहाँ उन्होंने वन संवर्धन विषय पर पोस्ट डॉक्टरल शोध कार्य किया तथा अनेक व्याख्यान भी दिये। साथ ही गॉटिंजेन विश्वविद्यालय, जर्मनी तथा बलाराट विश्वविद्यालय, ऑस्ट्रलिया में भी उन्होंने शोध कार्य किया।

सन् 2005 से 2012 तक वे वन अनुसंधान संस्थान के निदेशक रहे। साथ ही साथ वन अनुसंधान संस्थान मान्य विश्वविद्यालय के कुलपति का कार्यभार भी उन्होंने संभाला जिसके द्वारा वे शिक्षा के क्षेत्र के साथ भी निरंतर संबद्ध रहे। इस विश्वविद्यालय से अब तक सात शोध छात्र उनके निर्देशन में पीएच.डी. की उपाधि प्राप्त कर चुके हैं।

इस प्रकार वैविध्यपूर्ण प्रशासकीय दायित्वों का निर्वहन करते हुए भी डॉ. नेगी के अन्दर का वैज्ञानिक तथा लेखक सदैव जागृत रहा। उन्होंने नब्बे से अधिक शोध पत्र लिखे हैं जो भारत तथा विश्व की अनेक मूर्धन्य विज्ञान पत्रिकाओं में प्रकाशित हुए हैं। इनके अतिरिक्त जन सामान्य के लिये लोकप्रिय विज्ञान लेखक के रूप में भी उनके अनेक लेख प्रकाशित हुए हैं।

एक शोध वैज्ञानिक के रूप में डॉ. नेगी ने अनेक देशों में अनेक संगोष्ठियों तथा अध्ययन यात्राओं में भारत का प्रतिनिधित्व किया है। विशेषकर जर्मनी, स्पेन, इंग्लैण्ड, नीदरलैण्ड, संयुक्त राज्य अमेरिका, कनाड़ा, चीन, कंबोड़िया, मलयेशिया, श्रीलंका, बंगला देश, नेपाल, थाइलैण्ड, दक्षिण कोरिया आदि अनेक देशों में वन तथा वैज्ञानिकों का संपर्क उन्हें प्राप्त हुआ।

डॉ. नेगी देश तथा विश्व की अनेक शोध परियोजनाओं से भी संबद्ध हैं। विशेषकर वन अनुसंधान, वन विस्तार, वन प्रशिक्षण, पर्यावरण संरक्षण, प्राकृतिक संसाधन प्रबंधन उनके अध्ययन के प्रमुख विषय रहे हैं।

डॉ. नेगी का एक अद्भुत कार्य है उनका पुस्तक लेखन। अब तक उनकी 128 पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं। पुस्तकों की यह विशाल संख्या ही अपने में एक उपलब्धि है। परन्तु केवल संख्या का ही महत्व नहीं है वरन् पुस्तकों की गुणवत्ता भी उतनी ही उत्तम है। ये सभी पुस्तकें उनके अपने वैज्ञानिक अध्ययन का परिणाम हैं। इस लेख में उन सभी पुस्तकों की सूची भी देना संभव नहीं है परन्तु उनमें से अधिकांश पुस्तकें स्वाभाविक रूप से हिमालय तथा उसकी वन सम्पदा से संबंधित है। हिमालय के पर्यावरण, वन्य जीवन, सामाजिक वर्गीकरण, वनवासी जीवन, वन विज्ञान, हिमालयीय नदियाँ, झीलें तथा हिमनद, हिमालय के उत्पाद, गढ़वाल की भूमि तथा जन, हिमालयीय मत्स्य, भारत के ठंढे मरुस्थल, भारत, नेपाल तथा भूटान के ओक, टीक, बांस, वन विज्ञान से संबंधित अनेक पाठ्य पुस्तकें, आपदा प्रबंधन के सिद्धान्त आदि अनेक विषयों पर उन्होंने इन पुस्तकों के माध्यम से प्रकाश डाला है। नेचुरल रिसोर्स मैनेजमेंट इन हिमालय के तीन खण्ड, मैन्युअल ऑफ इण्डियन फॉरेस्टरी के पाँच खण्ड, इण्डियन ट्रीज एण्ड देअर सिल्वीकल्चर के दो खण्ड तथा ए टेक्स्ट बुक ऑफ फॉरेस्टरी एण्ड वाइल्ड लाइफ के दो खण्ड उनके अत्यन्त महत्त्वपूर्ण योगदान हैं। अंग्रेजी के अतिरिक्त हिंदी में भी 'सामाजिक वानिकी के सिद्धान्त' शीर्षक पुस्तक उन्होंने लिखी है। एक महान् वन वैज्ञानिक सर डीट्रिश ब्रैण्डिस की जीवनी, कथा साहित्य 'ऑपरेशन पुष्पक' तथा 'द इमिग्रैंट एण्ड अदर शॉर्ट स्टोरीज' लिख कर उन्होंने विज्ञान साहित्य को भी समृद्ध किया है।

वन अनुसंधान संस्थान के निदेशक का अपना कार्य काल पूर्ण कर वे पुनः हिमाचल प्रदेश के अपने मूल सेवास्थान में अब जा रहे हैं। गत दिनों विज्ञान परिचर्चा की ओर से मैने उनसे भेंट कर विभिन्न विषयों पर उनसे चर्चा की जिसका कुछ अंश यहाँ पर परिचर्चा के पाठकों के लिये प्रस्तुत है।

विज्ञान परिचर्चा :– डॉ० नेगी! आपने एक वन अधिकारी के रूप में बहुत बड़ा अनुभव प्राप्त किया हैं। परन्तु आप मात्र एक वन अधिकारी ही नहीं है, एक वैज्ञानिक भी है। आपकी इस उपलब्धि का श्रेय आप किसे देंगे।

नेगी – निश्चित रूप से दयानन्द बृजेन्द्र स्वरूप महाविद्यालय को। आदमी के जीवन में जो भी निखार आता है उसमें

सर्वाधिक योगदान उस शिक्षण संस्था का होता है जहाँ उसने अध्ययन किया। डी.बी. एस. महाविद्यालय, देहरादून केवल एक कक्षाध्यापन का केन्द्र ही नहीं रहा वरन् विश्व के बहुमुखी दर्शन कराने वाला और व्यक्तित्व को दिशा प्रदान करने वाला केन्द्र रहा है। विशेषकर भूविज्ञान विभाग के अध्यापकों के संपर्क के कारण जैसे मेरी विषय को गहराई से समझने की क्षमता विकसित हुई वैसे ही दृष्टिकोण भी व्यापक हुआ।

वि.प.– अपने महाविद्यालयीय काल में आप युवा कांग्रेस से भी जुड़े थे। बाद में शासकीय सेवा में आने के बाद वह संबंध समाप्त हो गया होगा। उस राजनीतिक संबंध का आपके शैक्षणिक जीवन पर कैसा प्रभाव पड़ा?

नेगी– अत्यन्त उत्तम। विषय का अध्ययन एक बिन्दु है। लेकिन सामाजिक कार्य व्यक्तित्व विकास का एक महत्वपूर्ण आयाम है। उस कार्य को करने के कारण सार्वजनिक समस्याओं को निकट से जानने समझने का अवसर मिला जिनसे विचारों में परिपक्वता आई जो आगे भी प्रशासकीय कार्य करते समय अत्यन्त उपयोगी रही।

वि.प.– अब एक प्रश्न वर्तमान वन समस्या से संबंधित। पर्यावरण रक्षा हेतु वनों का महत्त्व सर्वविदित है। परन्तु वनों का संरक्षण विकास कार्यों की बाधा भी बन रहा है। दूर दराज के क्षेत्रों में सड़क नहीं बन सकती क्योंकि वह वन का भाग है। उसी प्रकार खानें नहीं खुद सकतीं क्योंकि वह स्थान वन क्षेत्र में है। इस विकास और वन संरक्षण के संघर्ष को आप कैसे देखते है?

नेगी– मैं इसे संघर्ष नहीं मानता। वन संरक्षण आवश्यक है इसमें दो राय नहीं हो सकती। विकास के कार्य भी होने चाहिये यह भी ठीक ही है। विशेषकर रास्ते तो बनने ही चाहिये। दूरस्थ ग्रामवासी यदि अपने कृषि उत्पाद को मण्डी तक ले जाना चाहता है तो उसे रास्ता चाहिये। प्राकृतिक आपदा के समय सहायता पहुंचानी हो तो रास्ता चाहिये। किसी रोगी को डॉक्टर या अस्पताल तक जाना है तो रास्ता चाहिये। परन्तु वन क्षेत्र का परिरक्षण भी उतना ही आवश्यक है। इन दोनों ही बातों को साधते हुए ही शासकीय नीतियाँ बनती हैं। वन परिरक्षण तथा संवर्धन अधिक महत्त्वपूर्ण है। इसीलिये सन् 1980 में भारत सरकार ने वन परिरक्षण अधिनियम पारित किया। पहले वन भूमि को अन्य कार्यों में बदलने का अधिकार राज्यों के पास था परन्तु इस अधिनियम के बाद केन्द्र की अनुमति के बिना ऐसा नहीं किया जा सकता। उसके बाद 1998 में सर्वोच्च न्यायालय ने एक फैसले में वन को परिभाषित कर दिया। इसके अनुसार भूमि का जो भाग मूल प्रपत्रों में वन है वह वन क्षेत्र ही माना जायेगा भले ही वहाँ पर एक भी पेड़ न खड़ा हो। इन कठोर नियमों का पालन भी कठोरता से ही होता है। यदि किसी वन अधिकारी ने वन भूमि का दूसरा उपयोग करने की अनुमति दी तो वह स्वयं भी दण्ड का पात्र हो जाता है। इसीलिये अनेक राज्य सरकारें केन्द्र से इन नियमों में ढील देने का आग्रह करती रहती हैं। परन्तु इन कठोर नियमों का एक फल निश्चित रूप से हुआ है कि गत दो वर्षों में भारत का वन क्षेत्र 23 प्रतिशत पर स्थिर बना हुआ है अर्थात् अब वन भूमि का क्षरण रूक गया है। आज उत्तराखण्ड और हिमाचल प्रदेश का 66 प्रतिशत क्षेत्र वन क्षेत्र है यह हमारे स्वस्थ पर्यावरण के किये सुखद संकेत है।

वि.प.– आप वन सेवा के एक प्रशासनिक अधिकारी हैं। यह वन अनुसंधान संस्थान एक वैज्ञानिक शोध का केन्द्र है जहाँ पर बड़े–बड़े उच्च कोटि के वैज्ञानिक कार्यरत हैं। ऐसे केन्द्र का निदेशक एक प्रशासनिक अधिकारी हो तो क्या उसे कठिनाइयाँ नहीं आ सकती? आप स्वयं एक वैज्ञानिक भी हैं अतः आप को भले ही ऐसी समस्या न आई हो परन्तु क्या ऐसा संभव नहीं है?

नेगी– मुझे ऐसी कोई समस्या नहीं आई। और किसी को भी नहीं आयेगी क्योंकि निदेशक पद पर ऐसे ही व्यक्ति की नियुक्ति होती है जो स्वयं वैज्ञानिक शोध का अनुभव रखता हो।

वि.प.– प्रशासनिक सेवा में आने की तैयारी कर रहे विद्यार्थियों को आप क्या परामर्श देंगे?

नेगी– लिखित परीक्षा में अध्ययन के विषय की गहराई काम आती है। साक्षात्कार में विषय का ज्ञान नहीं देखा जाता। वहाँ केवल व्यक्तित्व पर ध्यान दिया जाता है। मुझे आइ.एफ.एस. के साथ–साथ आइ.ए.एस. के साक्षात्कार में भी दो बार बोर्ड के सदस्य के रूप में बैठने का अवसर मिला। वहाँ विद्यार्थी का आत्मविश्वास, निर्णय लेने की क्षमता, अपने को प्रस्तुत करने का ढंग महत्त्वपूर्ण होते हैं।

वि.प.– भाषा का कितना महत्त्व होता है? अंग्रेजी बोलने में तेज तर्रार होना कितना आवश्यक है?

नेगी– भाषा का कोई महत्त्व नहीं। विद्यार्थी हिंदी में बोलें या अंग्रेजी में कोई अन्तर नहीं पड़ता। भाषा की परीक्षा तो लिखित में ही हो चुकी होती है।

वि.प.– धन्यवाद! व्यस्त कार्यक्रम में भी इस साक्षात्कार के लिये आपने समय दिया इसलिये विज्ञान परिचर्चा के पाठकों की ओर से आभार व्यक्त करता हूँ।

पेनिसिलीन की खोज को लोग अक्सर इस बात के उदाहरण के रूप में प्रस्तुत करते हैं कि आविष्कार अकस्मात् ही हो जाया करते हैं। यद्यपि इसमें कोई सन्देह नहीं है कि विज्ञान के कुछ महान् आविष्कार अचानक ही हो गये लेकिन अकस्मात घटने वाली ऐसी किसी घटना के साथ–साथ आविष्कार के लिये उपलब्ध होने वाले अवसर और उन अवसरों का लाभ उठा सकने वाले लोग यदि न हों तो आविष्कार नहीं हो सकते।

ए.एल. मुदलियार
(इंडियन साइंस कांग्रेस, 1959 के अध्यक्षीय भाषण से)

राष्ट्रीय विज्ञान दिवस (28 फरवरी) पर

आइये, विज्ञानी बनें

मुकुंद नीलकंठ जोशी

- **हर व्यक्ति विज्ञानी बन सकता है। इसका विज्ञान के विषय पढ़ने से कोई संबंध नहीं होता।**
- **निरीक्षण, परीक्षण आधारित तर्कपूर्ण, बुद्धिगम्य निष्कर्ष पर पहुंचने का नाम विज्ञान है। जो ऐसा करे वह विज्ञानी।**
- **विभिन्न धर्मों के संस्थापक पैगम्बर, देवदूत, अवतारी पुरुष, स्मृतियों के निर्माणकर्ता ऋषि मुनि, काल की आवश्यकतानुसार नीति नियामों में परिवर्तन करने वाले आदि शंकराचार्य के समान महापुरुष सब विज्ञानी थे।**
- **अंधविश्वास, कुरीतियों, कुप्रथाओं, रूढ़ियों आदी की जड़ता से बाहर निकलिये और विज्ञानी बनिये।**

'विज्ञानी बनें?' क्या बात करते हैं? हम और विज्ञानी? अरे भाई, विज्ञान से तो हमारा संबंध कक्षा आठ तक ही था। तब भी हमें विज्ञान और गणित इन दोनों ने कितना सताया था क्या बतायें आपको। खैर, आठवीं के बाद विज्ञान से तो जैसे तैसे पिण्ड छूटा पर गणित तो दसवीं तक अनिवार्य ही था। हमने दसवीं की बोर्ड की परीक्षा में गणित के पर्चे कैसे पूरे किये बस हम ही जानते हैं। यू. पी. बोर्ड में लड़कियों के लिए गणित की जगह होम साइंस विषय होता था। न जाने कितनी बार हमने ईश्वर को कोसा होगा कि उसने हमें लड़की क्यों नहीं बनाया। भाषा में हमारी दम था, साहित्य में रुचि थी, पर विज्ञान? राम बचाये। और आप हमें विज्ञानी बनने को कह रहे हैं?'

'रुकिये, भाई साहब, रुकिये। आपने एक बाक्य का जरा सा टुकड़ा सुना और आप तो शुरू हो गये। अरे भाई, हम आपसे विज्ञानी बनने के लिये कह रहे हैं, वैज्ञानिक नहीं। आपने विज्ञान की पढ़ाई की या नहीं इसका कोई महत्व नहीं है। विज्ञान वर्ग में माने जाने वाले विषयों का पढ़ना एकदम अलग चीज है। आपने कौन सा विषय पढ़ा है इससे हमें कोई संबंध नहीं। बल्कि हम तो यहाँ तक कहते हैं कि आपने कुछ भी न पढ़ा हो, आपके पास कोई भी डिग्री न हो तो भी आप विज्ञानी बन सकते हैं।'

'आपकी बात विश्वास करने लायक नहीं है। यह तो वही हुआ कि संस्कृत के मंत्र याद किये बिना पंडित या संगीत की साधना किये बिना गायक बना जा सकता है। होता होगा किसी अद्भुत, अमानवीय प्रतिभाशाली के लिये ऐसा करना सम्भव। परन्तु हम तो साधारण से औसत दर्जे के आदमी हैं। हम ऐसा कुछ नहीं कर सकते। हम तो आपकी बात के कायल नहीं हो सकते।'

'ठीक है, मैं अपनी बात आपको ढंग से समझाने की कोशिश करता हूँ। अच्छा, पहले यह बताइये कि आप शिक्षित किसे कहेंगे।'

'यह भी कोई सवाल है? जो पढ़ लिख सके वह शिक्षित है। जो किताब पढ़ सकता हो, हिसाब कर सकता हो, चिट्ठी लिख सकता हो वह शिक्षित है।'

'नहीं, मेरे विचार से यहीं आप गलती कर रहे हैं। जो पढ़ लिख सकता हो वह साक्षर कहलायेगा। शिक्षित होने से इसका कोई संबंध नहीं है। सर सी. पी. रामास्वामी अयंगार नाम के एक बहुत बड़े व्यक्ति हो गये हैं। बहुत बड़े वकील थे। मैसूर राज्य के दीवान थे। वे कहते थे कि मेरी माँ पढ़ लिख नहीं सकती, एकदम निरक्षर है परन्तु वह शिक्षित है। और मेरा एक सहायक साक्षर है परन्तु अशिक्षित है।'

'आपकी बात पूरी सिर के ऊपर से निकल गई। साक्षर और शिक्षित क्या दो अलग–अलग बाते हैं?'

'हाँ, एकदम अलग हैं। साक्षर तो वे सभी हैं जिन्होंने अक्षर ज्ञान प्राप्त कर लिया। यह तो यान्त्रिक प्रक्रिया है जो अभ्यास से आ जाती है। जैसे रटना एक क्रिया है। मैं ऐसे अनेक वेद पाठी विद्वानों को जानता था, जिन्हें अपने वेद की पूरी संहिता कंठस्थ थी। सारा वेद उसके सही स्वरों के साथ वे एक बैठक में पूरा सुना सकते थे। परन्तु अपना हस्ताक्षर नहीं कर सकते थे।

अक्षर ज्ञान उन्होने प्राप्त किया ही नहीं। ऐसे अनेक शास्त्रीय संगीत के गायक या वादक हो चुके हैं जिन्होंने गुरु से सुन सुनकर ही उनकी सारी कला प्राप्त कर ली पर ककहरा कभी नहीं सीखा। ठीक उसी प्रकार यदि लिपि पढ़ना या लिखना आ गया तो व्यक्ति साक्षर हो गया। परन्तु शिक्षित होना तो कुछ और ही है न?'

'भाई, हम अब भी भ्रम में ही हैं। यदि साक्षर होना शिक्षित होना नहीं है तो फिर शिक्षित होना है क्या? और इस सबका हमारे मूल प्रश्न विज्ञानी बनने के साथ क्या संबंध है?'

'हाँ, वही मैं बताना चाहता हूँ। शिक्षित होने का अर्थ है समझदार होना। भले बुरे की पहचान होना। विचारशील होना। सत् और असत् को पहचानने की शक्ति होना। दुनिया को खुली आँखों से देखना। मानव व्यवहार की परख जिसे हो वह शिक्षित है। यह मनुष्य की स्वाभाविक बुद्धि का परिचायक है। इसका पढ़ा लिखा होने से कोई संबंध नहीं होता।'

'हूँ। आपकी बात में कुछ दम है। परन्तु विज्ञानी होना? क्या हर शिक्षित व्यक्ति विज्ञानी होता है? क्या दोनों बातें एक ही हैं? क्या विज्ञानी होने का विज्ञान विषयों के पढ़ने से कोई संबंध नही हैं?'

'बिल्कुल ठीक सोच रहे हैं आप। आखिर विज्ञान विज्ञान माने क्या? आप स्कूल की पढ़ाई के विषय भूल जाइये। वहाँ विज्ञान वर्ग, वाणिज्य वर्ग, कला वर्ग जैसे वर्गों में विषयों को बांटते हैं। विज्ञान वर्ग में भौतिक विज्ञान, रसायन विज्ञान, जीव विज्ञान पढ़े जाते हैं। परन्तु विज्ञान की परिभाषा ऐसी नहीं है। विद्वानों ने विज्ञान की परिभाषा करते हुए कहा है कि किसी भी विषय का सुव्यवस्थित ज्ञान ही विज्ञान है। इसका अर्थ क्या हुआ? निरीक्षण और परीक्षण आधारित, तर्कपूर्ण, बुद्विगम्य निष्कर्ष पर पहुंचने का नाम विज्ञान है। इसलिये हर वह व्यक्ति जो प्रत्येक बात को बुद्वि की कसौटी पर परखे, निरीक्षण कर या प्रयोग कर उसे जांचे और तर्क सहित विचार कर निर्णय करे वह विज्ञानी है। जो स्वयं न सोचे, किसी की भी बताई गई बात पर अंधा हो कर विश्वास कर ले, बुद्वि के लिए अगम्य बातों को भय, झूठी श्रद्धा या आस्था के कारण माने वह अविज्ञानी है चाहे वह फीजिक्स या कैमिस्ट्री का डिग्रीधारक ही क्यों न हो। समझ रहे हैं मैं क्या कर रहा हूँ?'

'हाँ, आपकी सोचने की दिशा का अनुमान मैं लगा पा रहा हूँ। आप भूत–प्रेत, मंत्र–तंत्र, जादू–टोने, शकुन–अपशकुन, आदि के विरुद्ध बोल रहे हैं क्योंकि ये सभी बातें बुद्वि की कसौटी पर कसी नहीं होतीं। लेकिन निरीक्षण आधारित तो होती ही हैं। भूत मैने नहीं देखा पर जिन्होंने देखा होता है उनका तो निरीक्षण है ही न? हम हर जगह स्वयं अपनी बुद्वि का प्रयोग कैसे कर सकते हैं?, हमें दूसरे की कही बातों पर विश्वास रखना ही पड़ता है। ऐसे में हर व्यक्ति विज्ञानी कैसे बन सकता है?'

'विश्वास रखने के लिये भी बुद्वि का प्रयोग किया जाना चाहिये। केवल भेड़ चाल में फंसना अविज्ञानी होने का प्रमाण है। एक कहानी सुनाता हूँ। एक आदमी नदी पर स्नान करने गया। नदी के किनारे बालू बिछी थी। किनारा सुनसान ही था। उस व्यक्ति के पास एक तांबे का लोटा था। उसने सोचा कि यहाँ कोई दिखता नहीं जिसके पास यह लोटा रखूं और नदी में गोता लगाऊँ। यदि वैसे ही छोड़ दिया और कोई ले गया तो? फिर उसने एक उपाय किया। वहीं एक स्थान पर बालू में गड्ढा खोदा। लोटा उसमें गाड़ा। फिर बालू से ढँक दिया। लेकिन वापस आने पर स्थान कैसे मिलेगा इसलिये पहचान के तौर पर वहीं बालू इकटठी कर एक बालू का शिवलिंग बना दिया। पास से दो फूल लाकर उस पर चढ़ा दिये और चला गया नहाने। अब इधर नहाने कोई और व्यक्ति आया। उसने देखा कि एक शिवलिंग बना है तथा उसकी पूजा की हुई है। उसने सोचा कि लगता है कि यहाँ पर ऐसी ही कोई पद्धति होगी। उसने भी बगल में एक शिवलिंग बना कर फूल चढ़ा दिये। इसकी देखा देखी जो भी आता वही शिवलिंग बना पूजा कर देता। कुछ देर बाद जब लोटे वाला व्यक्ति लौटा तो वहाँ एक की जगह बीस पच्चीस शिवलिंग खड़े थे। वह परेशान हो गया कि इनमें से मेरा कौन सा है जिसके नीचे लोटा है। उसने एक दो शिवलिंग खोद कर देखा पर वहाँ कुछ नहीं मिला। इसी बीच किसी ने उसे शिवलिंग खोदते देख लिया। अब क्या था? उनकी धार्मिक भावनाओं को ठेस पहुंच गई। लगे उस व्यक्ति की पिटाई करने। वह बिचारा रोते कलपते कहने लगा

'गतानुगतिको लोको, न लोको पारमार्थिकः
बालुकालिंग मात्रेण, गतं मे ताम्रभाजनम्'

अर्थात लोग गतानुगतिक माने नकलची होते हैं; सच्चे धार्मिक नहीं होते। एक बालू के बने शिवलिंग के कारण मैने अपना लोटा खो दिया। यह अविज्ञानी का लक्षण है। अरे भाई, आपको बुद्वि मिली है तो उसका प्रयोग भी कीजिये। अंधे की तरह किसी के भी पीछे चल पड़े यह क्या बात हुई?

किसी ने बाल दाढ़ी बढ़ा लिये। गेरुआ कपड़ा पहन लिया । कहने लगा कि मैं गुप्त धन का पता बता सकता हूँ। मरे को जिन्दा कर सकता हूँ। असाध्य रोग ठीक कर सकता हूँ। किसी चैनल पर स्पांसर जुटा कर लगा झूम झूम कर नाचने और गाने। और आप बन गये उसके अनुयायी तथा भक्त। क्या सिद्व पुरुष है? क्या तेज है चेहरे पर? क्या शक्ति है वाणी में? क्या परोपकार की भावना है। धन्य है, धन्य है। सचमुच महाराजजी इस कठोर कलियुग में हम दुखी, पीड़ित, अज्ञानी लोगों के कल्याण के लिये ही अवतरित हुए हैं। सोचिये, कितना अज्ञान है? यदि रोग दूर करने की इतनी ही बड़ी सिद्धि है तो बैठ जाइये किसी भी अस्पताल की ओ.पी.डी. में और करने लगिये सबको ठीक। यदि जमीन में गड़ा धन खोज सकते हैं तो पेट्रोलियम के भंडारों की खोज कर दीजिये। हाथ में लकडी लेकर जमीन के नीचे पानी का पता बता सकते हैं तो सूखे के क्षेत्र में आपकी सेवाओं की बड़ी आवश्यकता है। आप अपनी दिव्य दृष्टि से चोर पकड़ सकते हैं तो देश में छिपे आतंकवादियों के नाम–पते दे दिजिये सरकार को। कितना बडा पुण्य कार्य करेंगे आप?

'लेकिन ऐसा कुछ भी वे नहीं कर सकते क्योंकि मूल में ही सब शून्य अंधकार होता है। और ऐसों के पीछे भागने वाले सभी अज्ञानी ही हैं चाहे वे विज्ञान विषय लेकर पीएच.डी. ही क्यों न हों। आप ऐसे मत बनिये। विज्ञानी बनिये। कहिये कुछ समझ में आ रही है बात?'

'ठीक है, मान लेते हैं यह तर्क। परन्तु क्या विज्ञानी होने का यह अर्थ हुआ कि हम अपने सारे श्रद्वास्थानों, सारी मान्यताओं, सारी आस्थाओं को ठुकरा दें। ये हमें हमारे पूर्वजों से विरासत में प्राप्त हुई हैं। क्या हमारे बाप–दादा मूर्ख थे जो इन बातों पर विश्वास करते थे?'

'नहीं, इसमें पूर्वजों के मूर्ख होने या समझदार होने का कोई सम्बन्ध नहीं हैं। मनुष्य एक अत्यन्त बुद्विमान प्राणी। और अन्य किसी भी जीव के विपरीत उसे अपना अर्जित ज्ञान अगली पीढ़ी को देना आता है। इसलिये पीढ़ी दर पीढ़ी मनुष्य के ज्ञान तथा अनुभव की सीमा का विस्तार होता

जाता है। पूरे मानव समाज का इसी प्रकार विकास हुआ है। हर काल के विज्ञानी मनुष्यों ने जो सत्य देखा उसे बताया। आगे आने वालों ने उसमें संशोधन या संवर्धन किया। इसीलिये हर वह विचार केवल इसलिये श्रेष्ठ नहीं होता कि वह पुराना है। न हर विचार इसीलिये ग्राह्य होगा कि वह नया है। महाकवि कालिदास ने इसीलिये लिखा है कि

'पुराणमित्येव न साधु सर्वं, न चाऽपि सर्वं नवमित्यवद्यम्
सन्तः परीक्षान्यतरद् भजन्ते, मूढः परप्रत्ययनेय बुद्धिः

न हर पुरानी बात उत्तम होती है और न हर नई बात स्वीकार करने योग्य होती है। समझदार व्यक्ति परीक्षा करके ही निर्णय लेते हैं; केवल मूर्ख ही दूसरों के कहने पर चलते हैं।

और प्रत्येक काल में समाज को नये विचार देने का यह कार्य उस काल के विज्ञानी ने ही किया। हमारे समाज में पहले विवाह प्रथा नहीं थी। कोई भी पुरुष किसी भी स्त्री के साथ कभी भी विवाह कर सकता था। महर्षि उद्दालक के पुत्र महर्षि श्वेतकेतु ने पुरुष और स्त्री के विवाह का नियम बनाया और इस प्रकार गृहस्थाश्रम की स्थापना की। वे विज्ञानी थे। सारे मानव समाज को नीति नियमों में बांधने वाले भिन्न भिन्न स्मृतियों के लेखक वसिष्ठ, पाराशर, अत्रि, देवल आदि ऋषि विज्ञानी थे। विभिन्न धर्मो के संस्थापक, पैगम्बर, देवदूत या अवतार पुरुष विज्ञानी थे। सबने अपने अपने काल में तर्क पूर्ण ढंग से, बुद्धि प्रामाण्य को स्वीकार कर समाज को दिशा दी है। इनमें से कोई भी गतानुगतिक नहीं था। इसीलिये मैं कहता हूँ कि भाई विज्ञानी बनो।'

'आप तो बात को कहाँ से कहाँ ले गये। पर हम इन ऋषि मुनियों, पैगम्बरों, अवतारों के बताये हुए मार्ग पर ही तो चल रहे हैं। अब हमें आप नया कुछ करने के लिये क्या कह रहे हैं? हम अगर इन महान विभूतियों के बताये मार्ग से हट गये तो क्या हम विज्ञानी बन जायेंगे? हम तो भगवान कृष्ण को मानते हैं। उनके मुखारविन्द से निकली गीता का रोज पाठ करते हैं। हम तो उनके बताये ज्ञान को नहीं छोड़ सकते।'

'क्या सचमुच? आप गीता पढ़ते हैं? गीता में कृष्ण ने कहा कि 'सर्व धर्मान्परित्यज्य, मामेकं शरणं व्रज' अर्थात् सारे धर्मो को छोड़ दो, केवल मेरी शरण आ जाओ। फिर आप इन बाबाओं, तान्त्रिकों, मांत्रिकों, चमत्कारी सिद्धों, ढोंगी साधुओं और लोभी तथाकथित सन्तों के पीछे क्यों जाते हैं? आप जिन भगवान कृष्ण की बात करते हैं क्या आपने उनकी जीवनी पढ़ी है? उनके पिता और अन्य सभी गोकुलवासी इन्द्र की पूजा किया करते थे। कृष्ण ने कहा कि इन्द्र जैसे काल्पनिक देवता की पूजा मत करो। पूजा करनी ही है तो इस गोवर्धन पर्वत की करो जिसके कारण हमें यह वन प्राप्त है, यह प्रकृति प्रदत्त पर्यावरण प्राप्त है, हमारा सुखी जीवन प्राप्त है। कृष्ण ने विज्ञानी होना सिखाया। तर्कपूर्ण विचार करना सिखाया।'

'लेकिन हमारा धर्म? हमारी विरासत? हमारी परंपरा? क्या सब झुठला दें?'

'झुठलाइये मत। परन्तु अन्धानुकरण भी मत कीजिये। आपके पूर्वजों ने भी नहीं किया। यदि किया होता तो कलिवर्ज्य प्रकरण बनता ही नहीं। जानते हैं कलिवर्ज्य प्रकरण? पहले अनेक प्रथाएँ थीं परन्तु बाद के स्मृतिकारों ने उन्हें कलियुग के लिये योग्य नहीं हैं ऐसा कह कर मना कर दिया। क्या इस प्रकार अपनी पुरानी परंपराओं को आगे चलने से रोकना तार्किक बुद्धिप्रामाण्यवादी दृष्टिकोण नहीं था? एकदम विज्ञानी दृष्टिकोण था। कलियुग के लिए मना की गई इन्हीं परम्पराओं में से एक था संन्यास ग्रहण करना। संन्यासी का धर्म बड़ा कठिन होता है। कलियुग के व्यक्ति उतना कठोर धर्माचरण नहीं कर सकते इसलिये संन्यास को कलिवर्ज्य अर्थात् कलियुग में मना कर दिया गया। वास्तव में आज जब सारी सुख सुविधाओं से युक्त बडे–बडे पंच तारांकित तथाकथित मठों तथा आश्रमों मे पलने वाली गेरुवा वस्त्र धारी संन्यासियों की फौज को देखते हैं तो समझ में आता है कि स्मृतिकारों ने सन्यास को कलिवर्ज्य क्यों माना होगा। परन्तु आद्य शंकराचार्य ने संन्यास धर्म का पुनः प्रचार किया। उन्होंने उसे कलिवर्ज्य से बाहर निकाला तथा श्रेष्ठ विद्वानों को संन्यास ग्रहण करने के लिये प्रेरित किया। शंकराचार्य विज्ञानी थे। संन्यासियों के द्वारा वैदिक धर्म का पुनरुद्धार करने की उन्हें आवश्यकता प्रतीत हुई। समाज पर बौद्व भिक्षुओं का प्रभाव बहुत बढ़ रहा था। केवल यज्ञ या श्राद्व कराने वाले पण्डित उस प्रभाव को रोक नहीं सकते थे। इसलिये शंकराचार्य ने अद्वैत मत तथा संन्यास धर्म का प्रचार किया। तो मैं कहना यह चाहता हूँ कि विरासत, पूर्वजों की परंपरा, धर्म का सनातनत्व यह सब कुछ नहीं होता। जिस काल में जैसी आवश्यकता होती है उस काल के विज्ञानी अर्थात् तर्कपूर्ण, बुद्विवादी विचारक समाज को वैसी दिशा देते हैं। इसलिये भाइयो! अंधविश्वास, कुरीतियों, कुप्रथाओं, रूढ़ियों आदि की जड़ता से बाहर निकलिये। निरीक्षण, परीक्षण आधारित तर्कपूर्ण निष्कर्षों को अपनाइये।'

'चलिये मान लेते हैं आपकी बात। फिर भी कुछ प्रश्न तो शेष रह ही जाते हैं। हर व्यक्ति हर चीज का निरीक्षण या परीक्षण नहीं कर सकता। डॉक्टर ने कहा कि आपका लिवर या किडनी खराब है तो हम डॉक्टर की बात पर विश्वास कर ही लेते हैं न? हम खुद कहाँ अपना लिवर या अपनी किडनी देखने जाते हैं? और हमें समझ में भी क्या आयेगा? प्रत्येक व्यक्ति को कहीं न कही किसी न किसी पर आस्था रखनी ही पड़ती है। आप जैसे डॉक्टर पर आस्था रखते हैं वैसे हम ताबीज देने वाले तान्त्रिक पर। हम दोनों में अन्तर ही क्या है?'

'अन्तर है। हम डॉक्टर नामक व्यक्ति पर विश्वास नहीं करते। उसकी विद्या पर करते हैं। क्योंकि वह विद्या अनेक पीढ़ियों के और अनेक व्यक्तियों के अर्जित ज्ञान और अनुभव का परिणाम है। हम डॉक्टर द्वारा बताये गये निदान और निष्कर्ष को अन्य डॉक्टरों से जंचवा भी सकते हैं। परन्तु आप तान्त्रिक के साथ ऐसा नहीं कर सकते। आपको उसकी तन्त्र विद्या का कुछ भी पता नहीं होता। हो भी नहीं सकता। हमारा डॉक्टर पर, उसकी विद्या पर विश्वास है; आपका तान्त्रिक पर अंधविश्वास। यह ठीक है कि हर व्यक्ति हर बात का स्वयं निरीक्षण या परीक्षण नहीं कर सकता। परन्तु जिसने ऐसा किया है उससे सही मार्ग तो जान ही सकता है। विज्ञान में कुछ भी गुप्त नहीं होता। किसी के भी बताये गये मत का सारे विश्व के उस विषय के विद्वान् परीक्षण करते हैं। तब जाकर परिकल्पना से सिद्धान्त और सिद्धान्त से नियम बनते हैं। एक पूरी वैज्ञानिक प्रक्रिया है। इसके बाद भी यदि कुछ नये प्रमाण मिले तो पुराने सिद्वान्त बदल भी जाते हैं। विज्ञान एक जगह रुका हुआ पोखर का पानी नहीं, कल कल निनादिनी सरिता है। इसलिये आइये विज्ञानी बनें।'

एसोशिएट प्रोफेसर, भूविज्ञान (से. नि.)
डी.बी.एस. महाविद्यालय, देहरादून
उपाध्यक्ष, भारतीय विज्ञान लेखक संघ,
उत्तराखण्ड प्रभाग

विश्ववानिकी दिवस (21 मार्च) पर

वानिकी में बीजों का महत्व

ओमवीर सिंह

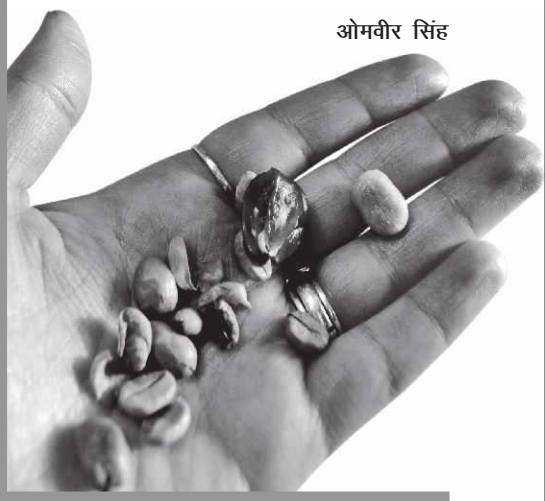

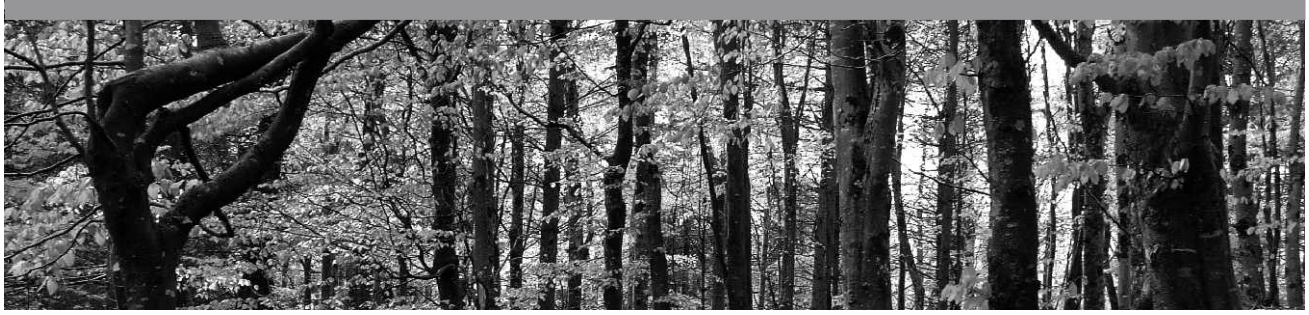

मानव जाति अति प्राचीन समय से वृक्ष रोपण करती आ रही है। वन वृक्ष प्राकृतिक दृश्यों का एक महत्वपूर्ण तत्व हैं एवं अनेक उच्च आर्थिक एवं सांस्कृतिक महत्वों को समाहित करते हैं। बीज न केवल वानिकी रोपण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं बल्कि प्राकृतिक वनों के पुनरुत्पादन में भी महत्वपूर्ण हैं। वन रोपण एवं पुनर्वनीकरण कार्यक्रमों में वृक्षों की सफलतम उन्नति हेतु वन वृक्ष बीजों की गतिविधि का सम्पूर्ण ज्ञान मुख्य आधार है। बड़े पैमाने पर वृक्षारोपण हेतु बीज की विस्तृत मात्रा के संग्रहण की आवश्यकता अनिवार्य है। इसलिए वानिकी रोपण में बीज एक अतिमहत्वपूर्ण निवेश है और बीज-जैविकी ज्ञान, बीज उत्पादन, संग्रहण, भण्डारण पूर्व-उपचार आदि समाविष्ट बीजों के उचित प्रबंधन हेतु अति आवश्यक है। देश की महत्वपूर्ण वृक्ष प्रजातियों के बीजों का संग्रहण समय, रोपण पूर्व उपचार, उत्पादन प्रतिशत, अंकुरण क्षमता, भण्डारण, तापमान, बीजों की संख्या/किलोग्राम एवं बीज की प्रकृति आधारित सूचना एवं महत्वपूर्ण परीक्षण, प्रयोगशाला में ऐसे परीक्षणों के संचालन हेतु उपयोग किए जाने वाले उपकरण जो समाविष्ट बीजों की दैहिक एवं कायिक गुणवत्ता के परीक्षण हेतु प्रयोग में लाए जाते हैं; असीमित महत्व के होते हैं एवं वनपालों को उनके पौधालयों एवं रोपण कार्यक्रमों को सफल बनाने हेतु उपलब्ध किए जाने चाहिए।

चारा, ईंधन एवं काष्ठ आधारित औद्योगिकीय कच्ची सामग्री हेतु बहुगुणित माँग की पूर्ति के लिये वृक्षरोपण महत्त्वपूर्ण हो गया है। इस कार्य को सफल बनाने हेतु बीजों की प्रचुर आपूर्ति होनी चाहिये। एक आकलन के अनुसार हमारे देश में अनुमानित 4,10,000 हेक्टेयर भूमि के वनीकरण हेतु प्रतिवर्ष 34,000 कुंतल वृक्ष बीज की आवश्यकता होती है। स्थल विशेष प्रजातियों के चयन की उपयुक्तता हमारे रोपण कार्यक्रमों का एक महत्वपूर्ण अंग है। लेकिन एकमात्र यही पर्याप्त नहीं है। एक अन्य महत्वपूर्ण तत्व वर्गीकृत बीजों का प्रयोग है जिसे इसके उद्‌गम, लक्षण विशेषताओं, जो क्षेत्र उत्पादकता एवं अनुगामी बीज निर्माण को प्रभावित करते हैं, से सम्बद्ध विस्तृत सूचना से क्रियान्वित किया जाता है। एक जैविकीय उत्पाद के रूप में बीज की गतिविधि का पूर्वानुमान नहीं लगाया जा सकता है। यह प्रजाति, संग्रहण वर्ष, भण्डारण विस्तार एवं अवस्था पर निर्भर करेगा। कटाई के समय, निष्कर्षण, शोधन के दौरान बीज व्यापार का परिणाम क्षति भी हो सकता है जो पारगमन अथवा भण्डारण के दौरान परवर्ती (अगला) विस्तार के भिन्न अंश में स्वयं स्पष्ट हो जाता है। बीज परीक्षण प्रक्रिया इसलिए विकसित की जाती है कि गुणवत्ता नियंत्रण को बनाए रखा जा सके एवं भावी बीज उपभोक्ता को सूचना प्रदान की जा सके।

कृषि में, बीज अधिनियम 1966, के अनुसार बिक्री किए जा रहे बीज की गुणवत्ता प्रमाणित होना आवश्यक है। इस प्रमाणीकरण का लक्ष्य उपभोक्ता (किसानों) के, जो उत्तम उपज हेतु उत्तम बीज चाहता है तथा बीज उत्पादक, जो अपने बीजों की उच्च गुणवत्ता हेतु उत्तम मूल्य की चाह करता है दोनों के हितों का सरंक्षण करता है। तथापि, वानिकी में, उत्पादक और उपयोगकर्ता दोनों के सरकारी संगठन हैं। इस कारण प्रश्न यह उठता है कि क्या वास्तव में वानिकी रोपण में प्रमाणित बीज के उपयोग के दृढ़ पालन की सुनिश्चितता हेतु उपयुक्त विधान लाने की आवश्यकता है? यह देखा गया है कि बीज के रोपण महत्व के संबंध में पूर्ण सूचना न होना राज्य वन विभागों में, रोपण लक्ष्यों की पूर्ति में विफलता का कारण होता है। कहने की आवश्यकता नहीं कि गुणवत्ता नियंत्रण के स्पष्ट मानकों का अभाव वन रोपण कार्यक्रमों को अपेक्षानुसार सफल नहीं होने देता।

भारत में, जनसंख्या भार–वृद्धि एवं क्षेत्र साधनों की कम उत्पादन क्षमता, कृषि एवं वन उपज दोनों की माँग एवं आपूर्ति के मध्य विस्तृत अंतराल का परिणाम है। उपज सुधार कार्यक्रम के माध्यम से कृषि संबंधी क्षेत्र में व्यापक रूप में सफल प्रयत्न किए गए हैं। उसी प्रकार वृक्ष सुधार कार्यक्रमों ने भी जो आनुवांशिकी के वर्तमान तात्विक ज्ञान पर आधारित हैं, अनुकूल परिणाम प्रदर्शित किया। देश में वनाधीन क्षेत्र 75 लाख हेक्टेयर में आंकलित किया गया है, जो कुल भूमि क्षेत्र का 23 प्रतिशत है। यह राष्ट्रीय वन नीति के अनुसार 33 प्रतिशत अपेक्षित है। जनसंख्या विस्फोट एवं ईंधन, चारा एवं काष्ठ हेतु माँग वृद्धि की विकराल समस्या ने देश में विशाल खंडों में वन क्षेत्र की समाप्तीकरण की स्थिति उत्पन्न कर दी है। इस पर विजय पाने हेतु वन की उत्पादन क्षमता में वृद्धि अनिवार्य हो गई। इसके अतिरिक्त भारत में वानिकी की वार्षिक वृद्धि दर 0.5 – 1.5 घन मी0 हेक्टेयर प्रति वर्ष है जो कि 3 घन मी0 हेक्टेयर प्रति वर्ष की पूर्ण औसत से कम है। उत्तराखण्ड, हिमाचल प्रदेश एवं जम्मू तथा कश्मीर जैसे पहाड़ी क्षेत्रों के लिए, जो अपनी विषम स्थलाकृति के कारण अनेक अनदेखे एवं पूर्वानुमानहीन प्राकृतिक आपदाओं से प्रभावित होते रहते हैं यह वृद्धि दर भी बनाये रखना अधिक कठिन होता है।

इस चुनौती का सामना विद्यमान आधारों में चयन द्वारा सुधार करके किया जा सकता है। इसके अतिरिक्त, उपयुक्त प्रजातियों की अपर्याप्त आपूर्ति रोपण कार्यक्रमों के विकास हेतु प्रायः एक मुख्य बाधा के रूप में देखी जाती है। ऐसी स्थिति में उपयुक्त गुणवत्ता वाले वन वनस्पतियों के बीज यदि मिलें तो वनीकरण के लिये अत्यन्त लाभप्रद होंगे। इस प्रकार के बीजों की उत्तम गुणवत्ता का परीक्षण एवं निर्धारण करने के लिये तथा उनके उत्पादन की सुनिश्चितता हेतु व्यापक जांच अपेक्षित होती है। ऐसे उत्तम गुणों से युक्त बीजों का संग्रह तथा उपयोग किया जाना चाहिये। यद्यपि यह प्रक्रिया दीर्घ एवं विस्तृत होती है परन्तु उत्तम आनुवांशिक लाभ के लिये आवश्यक ही है। इस पूरी प्रक्रिया में आनुवांशिक बीज उत्पादन क्षेत्र की स्थापना, उद्‌गम स्थल परीक्षण, उपयोगी वृक्ष चयन, उन वृक्षों का नमूनों के रूप में विकास, बीजोद्यान की स्थापना तथा उनका विस्तार अन्तर्भूत होते हैं। साथ ही बीजों की रोपण वृद्धि दर तथा प्रति इकाई उत्पादन क्षमता में वृद्धि के लिये सतत अनुसंधान किया जाना चाहिये।

भारत में वृक्ष बीजों में गुणवत्ता नियंत्रण

वन वृक्ष बीजों में गुणवत्ता नियंत्रण की आवश्यकता को महत्त्व वस्तुतः वर्ष 1961 में वन अनुसंधान संस्थान, देहरादून में आयोजित 9वें वन वृक्ष विज्ञान सम्मेलन के परामर्शो पर दिया गया। तृतीय पंचवर्षीय योजना के अन्तर्गत 1962 में वन अनुसंधान संस्थान, देहरादून में केन्द्रीय बीज प्रयोगशाला (वर्तमान वन वृक्ष बीज प्रयोगशाला) की स्थापना इस परामर्श का एक क्रम था। 1966 में, वन अनुसंधान संस्थान में स्थित बीज परीक्षण प्रयोगशाला को वन वृक्ष बीजों हेतु एक प्रामाणिक केन्द्र के रूप में मान्यता प्राप्त हुई। 1971 में अध्यक्ष, वन अनुसंधान संस्थान एवं महाविद्यालय, वन अनुसंधान संस्थान में वानिकी अनुसंधान के निदेशक एवं वन व्याधिकी शाखा के प्रभारी अधिकारी को अंतर्राष्ट्रीय बीज परीक्षण संघ (आई.एस.टी.ए.) के प्रत्याशित सदस्यों के पद की स्वीकृति दी गई। यह प्रयोगशाला अंतर्राष्ट्रीय बीज परीक्षण संघ का प्रत्याशित सदस्य केंद्र है और आई.एस.टी.ए. नियमों की अनुरूपता में बीज नमूनों की जाँच–पड़ताल के पश्चात अंतर्राष्ट्रीय बीज

विश्लेषण प्रमाणपत्र दिये जाने हेतु प्राधिकृत हैं।

केन्द्रीय एवं क्षेत्रीय अथवा राज्य बीज परीक्षण प्रयोगशालाएं

द्वितीय वानिकी सम्मेलन, 1980 की अनुशंसा पर आरम्भ किए गए कार्य के रूप में राज्य वन विभागों द्वारा गैरसरकारी बीज परीक्षण प्रयोगशाला स्थापना हेतु भी प्रयास किए जा रहे हैं। यह अपेक्षित है कि वन वृक्ष उन्नति, बीज परीक्षण, बीज भण्डारण एवं बीज प्रमाणीकरण में अनुसंधान एवं विकास हेतु राज्य संगठनों का सशक्तीकरण किया जाना चाहिए। इसके प्रारम्भ से केन्द्रीय बीज परीक्षण प्रयोगशाला हमारे देश के वृक्ष बीजों के परीक्षण हेतु नियमों का मानकीकरण कर रही है एवं राज्य वन विभागों एवं विश्वविद्यालयों को भी सलाह प्रदान कर रही है। इस प्रयोगशाला के निम्नलिखित क्रियाकलाप हैं:–

- यह प्रतिरूप वृक्ष बीज प्रयोगशाला है जो बीज प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में अति नवीनता समाविष्ट करती है एवं वृक्ष बीजों हेतु बीज परीक्षण मानकीकरण के लिए उच्चतम व्यावसायिक अनुसंधान कर्ताओं एवं तकनीकज्ञों के साथ इस प्रौद्यागिकी के विभिन्न खण्डों हेतु अनिवार्य उत्तम उपलब्ध साधन है।
- विभिन्न वानिकी किस्मों के बीज निर्माण, बीज प्रबंध, अंकुरण, प्रसुप्ति (तंद्रावस्था), बीज भण्डारण इत्यादि पर आधारित अनुसंधान इस प्रयोगशाला की नियमित विशेषताएं हैं।
- यह प्रयोगशाला बीज तकनीकज्ञ एवं विश्लेषकों की नई पीढ़ी हेतु भी एक प्रशिक्षण एवं निरूपण केन्द्र भी है, जिसकी आवश्यकता क्षेत्रीय एवं राज्य वृक्ष बीज परीक्षण प्रयोगशालाओं को हो सकती है।
- यह प्रयोगशाला परिणाम युक्त बीज परीक्षण प्रक्रिया एवं व्याख्या के मानकीकरण हेतु अभिनिर्णायक परीक्षण (मध्यस्थ परीक्षण) के रूप में भी लाभ प्रदान करती है, ताकि विभिन्न केन्द्र बीज प्रक्रियाओं के सुधार हेतु अनुसंधान नेतृत्व के प्रदर्शन एवं प्रोत्साहन को उन्नत कर सकें एवं सममूल्य परिणाम प्राप्त कर सकें।

भारत में वृक्ष बीजों का बीज प्रमाणीकरण

भारत में वर्तमान में वानिकी में प्रयुक्त बीजों का एक विशाल भाग प्राकृतिक तथा रोपित स्रोतों से प्राप्त किया जाता है परन्तु ये स्रोत बीज उत्पादन हेतु न तो वर्गीकृत हैं और न ही विशेष रूप से व्यवस्थित हैं। वर्तमान में वन वृक्ष आनुवांशिकी के बढ़ते ज्ञान के साथ, वानिकी में इस विज्ञान के अनुप्रयोग के माध्यम से प्राप्त किए जा सकने वाले लाभों को कार्यान्वित किया जा रहा हैं। इस कार्यान्वयन के साथ, भारत में रोपण पैदावार हेतु गुणवत्ता बीजों के उपयोग को सुनिश्चित करने के उद्देश्य से वानिकी बीजों के निरूपण, ग्रहण और प्रमाणीकरण का क्रम स्थापित हो सकेगा।

बीजों का प्रमाणीकरण अत्यन्त महत्त्वपूर्ण होता है। कृषि एवं काष्ठीय (जंगली) पादप बीज हेतु प्रमाणीकरण शब्द का एक विशेष अर्थ है। इसमें आनुवांशिक सुधार भी सन्निहित है एवं इसका उद्देश्य उपयोगकर्ता को विकसित एवं वर्गीकृत सर्वोत्तम उपज पादप किस्मों के उच्च गुणवत्ता बीज एवं प्रवर्धन सामग्री उपलब्ध कराना है, जिससे आनुवांशिक निर्धारण एवं शुद्धता सुनिश्चित की जा सके। प्रायः बीज प्रमाणीकरण, शासकीय मान्यता प्राप्त संगठन द्वारा प्रमाणित बीज विशेषता एवं गुणवत्ता की गारंटी है, जो प्रमाणीकरण श्रेणी, किस्मों एवं विविधता की मौलिकता, संग्रहण वर्ष, उद्गम, शुद्वता एवं दोषरहित (आरोग्यता) तथा अंकुरणशील क्षमता सम्बन्धी सूचना को समाविष्ट करता है।

वनों के पुनरुत्पादक सामग्री के नाम एवं प्रमाणीकरण को समझने हेतु निम्नलिखित बिंदु महत्वपूर्ण हैं:–

- प्रमाणीकरण शासकीय मान्यता प्राप्त संगठन द्वारा दी गई वह गारंटी है, जिससे अभिनिर्धारित विविधता की वन पुरूत्पादन सामग्री को उच्च गुणवत्ता एवं आनुवांशिक अभिनिर्धारण प्रबंधन हेतु एक विधि में उत्पादन, संग्रहण, प्रक्रिया एवं वर्गीकृत किया गया है।
- प्रमाणीकरण कार्यक्रम के लिए एक प्रमाणीकरण शाखा तथा एक ऐसे प्रस्तुतकर्ता (संयोजक) का होना अपेक्षित है, जिसे प्रमाणित सामग्री की बिक्री, प्रजनन कार्यक्रमों के अभिलेखों, प्रमाणीकरण मानकों, स्वतंत्र जाँच एवं प्रामाणीकरण पत्रों की आवश्यकता हो।

उपर्युक्त लक्ष्यों को प्राप्त करने के उद्देश्य से, बीज समाहार (उपलब्धि) एवं वृक्ष सुधार, हैदराबाद आधारित भारत – डेनमार्क परियोजना ने "भारत में वन पुनरुत्पादन सामग्री का प्रमाणीकरण", शीर्षक योजना का सूत्रपात किया। यह योजना आर्थिक व्यवस्था सहयोजन एवं विकास (ओ.ई.सी.डी.) मानकों योजनाओं एवं निर्देशनों के संगठन पर आधारित थी। इस योजना की नियमावली निर्धारित है जिसके अनुसार विस्तारण हेतु बीज के संग्रह, वहन (इधर – उधर वितरण) प्रक्रिया, भंडारण, बानगी, नाम एवं मुद्रांकन (मुहरबंदी) किये जाते है। आर्थिक व्यवस्था सहयोजन एवं विकास संगठन, द्वारा प्रयोग की जाने वाली 04 श्रेणीबद्ध प्रमाणीकरण है:–

स्रोत अभिनिर्धारण – (पीला लेबल)

चयनित – (हरा लेबल)

अपरीक्षित बीजोद्यान – (गुलाबी लेबल)

प्रमाणित पुनरुत्पादन सामग्री – (नीला लेबल)

सामान्यत : प्रमाणीकरण के लिए, परागण पूर्व उत्पादन मात्रक की जाँच, पैदावार पूर्व फसल जाँच, भण्डारण हेतु संग्रह अवस्था के दौरान जाँच एवं बिक्री हेतु सामग्री की पैकिंग के समय जाँच अपेक्षित है। शासकीय मान्यता प्राप्त संगठन द्वारा पुनरुत्पादन सामग्री की विशेषता एवं गुणवत्ता की गारंटी, प्रायः रंग संकेत लेबल (कलर कोडिंग टैग) द्वारा प्रमाणित की जाती है एवं एक प्रमाणपत्र प्रमाणीकरण श्रेणी, किस्मों एवं विविधता की मौलिकता, संग्रहण वर्ष, उद्गम शुद्धता एवं आरोग्यता तथा अंकुरण शील क्षमता जैसे विवरण को समाविष्ट करता है। प्रमाणीकरण का उद्देश्य जनता हेतु सर्वोत्तम उपज पादप विविधता के उच्च गुणवत्ता बीजों एवं प्रवर्धन सामग्री का प्रबंधन एवं उपलब्धता है।

वृक्षारोपण कार्यक्रमों से सर्वोत्तम उपलब्धि हेतु बीज का महत्वपूर्ण स्थान है, क्योंकि

बीज का प्रधान तात्पर्य समस्त वृक्षों एवं अनेक काष्ठरूपी प्रजातियों को एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी में स्थानान्तरण करना है। वन वृक्ष आनुवांशिकी के ज्ञान वृद्धि को वानिकी में इसके अनुप्रयोग के माध्यम से प्राप्त किये जाने वाले लाभों को महसूस किया जा रहा है। गुणकारी बीज असंख्य रोपण संग्रह सुधार कार्यक्रमों का परिणाम होते है इसलिए अच्छा एवं गुणकारी बीज प्राप्त करने हेतु प्रतिरूप बीजोद्यान, बीजांकुर बीजोद्यान इत्यादि निर्मित किए जा रहे हैं। आधुनिक समय में बीज–स्रोत परिचय अत्यधिक महत्व रखता है, अतः बीज सर्वोत्कृष्ट एवं मान्यताप्राप्त गुणात्मक बीजोत्पादन क्षेत्रों से एकत्रित किये जाने चाहिए। इस रूप में, वनों की उत्पादन क्षमता में वृद्धि हेतु वन रोपणों का जीवित रहना एवं वृद्धि वास्तविक रूप से उन्नत की जा सकती है।

वैज्ञानिक सी
वन संवर्धन प्रभाग
वन अनुसंधान संस्थान
देहरादून

विज्ञान कविता

पृथ्वी का इतिहास

साढे चार अरब वर्षों की तरुणी है माता धरती
जितने वर्ष बीतते जाते उतनी सुन्दर और निखरती
पहले अरब भयानक ही थे असहनीय से ताप भरे
जल में ज्वालामुखी फूटते लावा और उबाल भरे

छोटे छोटे भूतल बनते औ छिछले विशाल सागर
तत्त्वों की क्रमबद्ध व्यवस्था होती भीतर से बाहर
भारी तत्व केन्द्र में जमते हलके क्रम से आते ऊपर
उनसे भी हलकों से निर्मित वातावरण हुआ सिरपर

जल, में ऑक्सीजन औ कार्बन का हुआ कभी मधुर सहयोग
और प्रस्फुटित हुआ धरा पर जीवन, अद्‌भुत यह संयोग
और बने फिर महाद्वीप थे और महासागर भी
लेकिन नहीं आज जैसे थे सदा बदलती रही मही

कभी लोह से भरे उदधि थे चूने से थे कभी भरे
कभी लवण की कम मात्रा थी और कभी आतिशय खारे
कभी जलधि में भांति के कोटिक जीव विचरते
और कभी सारे मर जाते बुरे दिनों के चलते

नई नई जातियाँ पनपतीं नूतन होता जीव जगत्
जांय पुराने, बसें नये यह परिवर्तन का क्रम शाश्वत
महाद्वीप टूटें, जुड़ जायें, भूतल का हो रूप नया
सागर जहाँ, वहाँ पर्वत हों, पर्वत जहाँ समुद्र वहाँ

खग है सूरज, सब ग्रह खग हैं अपनी पृथ्वी भी खग है
सबके चलने की गति निश्चित परिपथ मग है
कभी कभी सूरज से पृथ्वी जरा दूर या निकट हुई
तभी यहाँ पर घोर शीत ऋतु अथवा गरमी विकट हुई

साढ़े चार अरब वर्षो का कितना अनुपम यह इतिहास
तुम तो केवल कल आये हो मानव! इस पर करने वास
आयु तुम्हारी इस धरती पर अभी हुई केवल दस लाख
किंतु बनाई निःसंशय है तुमने अपनी अद्‌भुत साख

अबतक प्रकृति खेलती आती अपने मन से अपना खेल
तुमने इसमें किंतु मिलाया बुद्धि ज्ञान का सुंदर मेल
सावधान लेकिन पर रहना याद सदा यह रखना
साथ प्रकृति के मिल कर रहना चिरस्थायी हो फिर रहना

मुकुंद जोशी

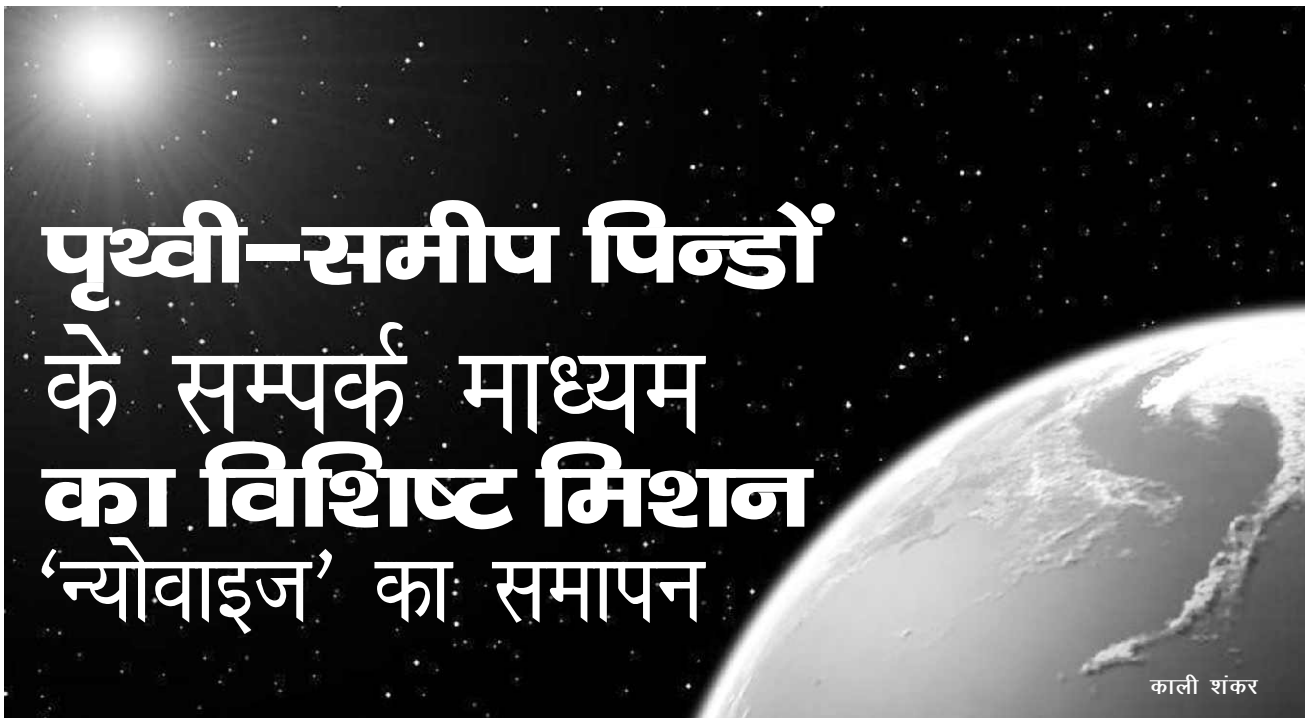

पृथ्वी–समीप पिन्डों के सम्पर्क माध्यम का विशिष्ट मिशन 'न्योवाइज' का समापन

काली शंकर

14 दिसम्बर 2009 को नासा ने एक अन्तरिक्ष मिशन 'वाइज' (विस्तृत–फील्ड इन्फ्रारेड सर्वेक्षण अन्वेषक) प्रमोचित किया जिसमें एक इन्फ्रारेड–तरंगों के संसूचन वाली 40 इंच व्यास की खगोलिकी अन्तरिक्ष दूरबीन लगी हुई थी। इस मिशन का लक्ष्य 99 प्रतिशत आकाश का इन्फ्रारेड प्रतिबिम्बन करना था तथा आकाश की प्रत्येक स्थिति के लिए कम से कम 8 प्रतिबिम्बों का मानचित्रण उच्चतम परिशुद्धता के साथ करना था। अपने 10 महीने के मिशन के लिए इसे 525 कि0मी0 की वृत्तीय, ध्रुवीय, सूर्य समकालिक कक्षा में स्थापित किया गया।

'न्योवाइज' मिशन वाइज मिशन का एक्सटेन्शन है। वाइज मिशन ने सम्पूर्ण ब्रम्हांडीय आकाश का सर्वेक्षण इन्फ्रारेड प्रकाश स्पेक्ट्रम में 1.5 बार किया। इसने अन्तरिक्ष में 27 लाख पिन्डों के प्रतिबिम्ब लिए जिनमें दूरस्थ आकाश गंगाओं से लेकर क्षुद्र ग्रह एवं पुच्छलतारे शामिल थे जो पृथ्वी के समीप थे। अक्टूबर 2010 के प्रारंभ में (प्रमुख विज्ञान मिशन पूरा कर लेने के बाद) वाइज मिशन के अन्तरिक्ष यान का जमा हुआ (फ्रोजेन) शीतलीकारक (कूलैन्ट) समाप्त हो गया जो उपकरणों को ठंडा रखता है। लेकिन इसके 4 इन्फ्रारेड कैमरों में से 2 कैमरे काम कर रहे थे। ये दो चैनेल अब भी क्षुद्र ग्रहों का पता लगाने में सक्षम थे इसलिए नासा ने 'वाइज' मिशन के न्योवाइज (पृथ्वी समीप पिन्डों के संसूचन के लिए) भाग को 4 महीने के लिए एक्सटेन्ड कर दिया। इस एक्सटेन्शन का प्रमुख उद्देश्य और अधिक क्षुद्र ग्रहों और अधिक पुच्छल तारों का पता लगाना था एवं प्रमुख क्षुद्र ग्रह पेटी का एक क्रमवीक्षण पूरा करना था। नासा के न्यो (पृथ्वी समीप पिन्ड) प्रेक्षण कार्यक्रम के प्रमुख लिन्डली जान्सन के अनुसार ''न्योवाइज परियोजना के अन्तर्गत मात्र एक वर्ष के प्रेक्षणों ने हमारे पृथ्वी समीप पिन्डों तथा सौर तंत्र के अन्य लघु पिन्डों के डाटा कैटालाग में काफी वृद्धि कर दी है।'' अब जब कि न्योवाइज परियोजना के अन्तर्गत प्रमुख क्षुद्र ग्रह बेल्ट का एक क्रमवीक्षण पूरा हो चुका है इसलिए 'वाइज' अन्तरिक्षयान पृथ्वी की ध्रुवीय कक्षा में सम– जलवायु– स्थानान्तरण (हाइबरनेशन) मोड में चला जायेगा जहॉ से इसे भविष्य में पुनः उपयोग में लाया जा सकेगा।

'न्योवाइज' मिशन से क्या क्या पता चला है ?

नये नये क्षुद्र ग्रह और पुच्छलतारों की खोज के अलावा इस मिशन के द्वारा प्रमुख क्षुद्र ग्रह बेल्ट में उन पिन्डों की उपस्थिति की भी पुष्टि की जा सकी जिनका संसूचन पहले ही किया जा चुका है। मात्र एक वर्ष में लगभग 500,000 ज्ञात पिन्डों में से इसने 153,000 चट्टानी पिन्डोंका प्रेक्षण किया। इनमें शामिल हैं 33000 वे पिन्ड जिनकी खोज 'न्योवाइज' परियोजना के तहत की गयी। 'न्योवाइज' मिशन ने उन ज्ञात पिन्डों का भी प्रेक्षण किया जो प्रमुख क्षुद्र ग्रह बेल्ट की तुलना में पृथ्वी से समीप और दूर हैं (जिनमें लगभग 2000 क्षुद्र ग्रह ऐसे हैं जो बृहस्पति ग्रह के साथ कक्षीय भ्रमण करते हैं एवं अन्य 100 पृथ्वी समीप पिन्ड और 100 से अधिक पुच्छलतारे हैं)। ये प्रेक्षण इस दृष्टि से उपयोगी होंगे कि इनके द्वारा इन पिन्डों के आकार और संरचना का पता लगाना आसान होगा। दृष्टिगोचर प्रकाश आंकड़ों से ही यह बात स्पष्ट हो जाती है कि एक क्षुद्र ग्रह प्रकाश का कितना परिवर्तन करता है जब कि इन्फ्रारेड डाटा काफी अधिक रूप में

पिन्ड के आकार से सम्बन्ध रखता है। दृष्टिगोचर और इन्फ्रारेड मापनों के संयुक्तीकरण से खगोलशास्त्री चट्टानी पिन्डों की संरचना का पता कर सकते हैं तथा इस संसूचन में इस चीज का कोई मतलब नहीं होता है कि चट्टानी पिन्ड ठोस है अथवा यह टुकड़ों में विभक्त हो सकता है।

न्योवाइज परियोजना के परिणाम क्षुद्र ग्रह जनसंख्या का एक उच्च कोटि का दृश्य प्रस्तुत करेंगे। 'न्योवाइज' मिशन के अन्तर्गत सम्पूर्ण क्षुद्र ग्रह पेटी के सर्वेक्षण में काफी अधिक समय लगाया गया (वाइज मिशन की तुलना में जिसने सम्पूर्ण आकाश के सर्वेक्षण में कम समय लिया क्योंकि अधिकांश क्षुद्र ग्रह सूर्य के इर्द गिर्द उसी दिशा में घूमते हैं जिस दिशा में 'वाइज' अन्तरिक्ष यान पृथ्वी का चक्कर लगाने में घूमता है)। अन्तरिक्षयान की दृष्टिगोचरता फील्ड के द्वारा क्षुद्र ग्रहों के आवगमन का अवलोकन इस प्रकार से प्रबंधित किया जाता है कि आप सभी क्षुद्र ग्रहों को देख सकें। नासा की जेट प्रापल्सन प्रयोगशाला (पसाडेना) में 'न्योवाइज' मिशन के प्रमुख जाँच कर्ता एमी मेंजर के अनुसार ''आप पृथ्वी एवं क्षुद्र ग्रहों को रेस के घोड़ों की तरह मान सकते हैं जो एक ट्रैक में घूम रहे हैं। हम एक साथ सूर्य का चक्कर लगा रहे हैं लेकिन प्रमुख पेटी के क्षुद्र ग्रह उन घोड़ों के समान है जो ट्रैक के बाह्य भाग में दौड़ रहे हैं। वे हम लोगों की तुलना में अधिक परिक्रमण समय लेते हैं इस लिए हम उन्हे गोद में उठा लेते हैं।''

'वाइज मिशन' को अंतरिक्ष में भेजने की तैयारी की जा रही है।

क्षुद्र ग्रहों और पुच्छलतारों से सम्बन्धित 'न्योवाइज' डाटा का संग्रहण (कैटालागिंग) नासा के द्वारा समर्थित अन्तर्राष्ट्रीय खगोलिकी संघ के लघु ग्रह केन्द्र के द्वारा किया जाता है। यह केन्द्र सौर तंत्र के पिन्डों की सूचना क्लियरिंग हाउस (कैम्ब्रिज स्थित वांतरिक्ष प्रेक्षणशाला में) की भांति कार्य करता है।

'न्योवाइज' प्रोजेक्ट का डाटा किस प्रकार उपयोगी होगा?

'न्योवाइज' डाटा समीपस्थ मद्धिम (डिम) स्टारों का पता करने में मदद करेगा जिन्हे 'ब्राउन ड्वार्फ' कहते हैं। इन प्रेक्षणों में इतनी क्षमता है कि ये हमारे सबसे समीपस्थ स्टार 'प्रोक्सिमा सेन्टौरी' से भी समीप स्टार के विषय में जानकारी प्रदान कर सकते हैं (यदि यह अस्तित्व में है)। इसी प्रकार यदि हमारे सौर तंत्र की बाह्य सीमाओं में छिपा हुआ कोई विशाल गैस वाला ग्रह है तो 'वाइज' एवं 'न्योवाइज' के द्वारा इसका संसूचन सम्भव है।

विस्तृत–फील्ड इन्फ्रारेड सर्वेक्षण अन्वेषक (वाइज) अन्तरिक्षयान

'वाइज' अन्तरिक्ष यान में एक इन्फ्रारेड तरंग दैर्ध्य पर काम करने वाली खगोलिकी अन्तरिक्ष दूरबीन लगी हुई है तथा इसका प्रमोचन 14 सितम्बर 2009 को डेल्टा II राकेट के द्वारा वैन्डेन बर्ग वायु सेना बेस से किया गया। 'वाइज' अन्तरिक्ष यान ने मूल रूप से एक अन्य मिशन वायर (वाइड फील्ड इन्फ्रारेड एक्सप्लोरर) को रिप्लेस किया है। 'वायर' मिशन मार्च 1999 में प्रमोचित किया गया था तथा अन्तरिक्ष कक्षा में पहुँचने के कुछ घन्टों के अन्दर यह असफल हो गया। 'वाइज' मिशन पूर्व के प्रमोचित इन्फ्रारेड सर्वेक्षण मिशनों 'आई आर एस', अकारी, 'कोबे का डिर्बी' की तुलना में 1000 गुना अधिक सुग्राही है। वाइज के प्रमुख जाँचकर्ता ने बताया कि वाइज की इन्फ्रारेड दूरबीन ने प्रमोचन के बाद प्रत्येक दिन अनेकों अज्ञात क्षुद्र ग्रहों का पता लगाया।

इस मिशन के द्वारा कुल मिलाकर 33500 नये क्षुद्र ग्रहों और पुच्छलतारों की खोज की गई तथा अक्टूबर 2010 तक सौर तंत्र के 154,000 पिन्डों का प्रेक्षण 'वाइज' मिशन के द्वारा किया जा चुका था। वाइज अन्तरिक्ष यान के कुछ प्रमुख आंकड़े सारणी–1 में दिये गये हैं।

सारणी–1

प्रमोचन तिथि	: 14 दिसम्बर 2009, सर्वाधिक समय 14:09:33 बजे
प्रमोचन यान	: डेल्टा II 7320–10 राकेट
प्रमोचन स्थल	: वैन्डेनवर्ग वायु सेना बेस, लोम्पोक, कैलीफोर्निया
मिशन अवधि	: 10 महीनें (1 वर्ष, 1 महीने, 19 दिन समाप्त)
वाइज अन्तरिक्ष यान का भार	: 750 कि0ग्रा0
कक्षा प्रकार	: ध्रुवीय, सूर्य समकालिक
कक्षीय उँचाई और झुकाव	: 525 कि0मी0, 97.5 डिग्री
कक्षीय काल	: 95 मिनट, एक दिन में 15 परिक्रमाएँ
स्थिति	: पृथ्वी की निम्न कक्षा
इन्फ्रारेड दूरबीन का विवरण	: 1. व्यास : 40 से.मी. 2. तरंग दैर्ध्य जिस पर यह कार्य करती है 3.4, 4.6, 12, 22 माइक्रोमीटर

'वाइज' मिशन के सौर तंत्र के बाहर के लक्ष्य

तारकीय नर्सरी (स्टेलर नर्सरीज), जो अन्तरातारकीय धूल से ढकी रहती हैं, का संसूचन इन्फ्रारेड स्पेक्ट्रम में आसानी से सम्भव है तथा इसका कारण यह है कि इस तरंग दैर्ध्य पर विद्युत चुम्बकीय विकिरण धूल (डस्ट) का भेदन कर सकता है। इस प्रकार युवा ब्रम्हान्ड की आकाश गंगाएँ और अन्योन्य क्रिया युक्त आकाश गंगाएँ, जहाँ पर स्टार निर्माण प्रक्रिया काफी तीव्र गति से होती है, इन्फ्रारेड स्पेक्ट्रम में चमकीली होती हैं। इस तरंग दैर्ध्य पर अन्तरातारकीय गैसों के बादलों का तथा साथ ही साथ प्रोटोग्रहीय डिस्कों का भी संसूचन सम्भव है।

सौर तंत्र के अन्दर के लक्ष्य

'वाइज' मिशन के द्वारा कूपियर बेल्ट के पिन्डों का संसूचन सम्भव नहीं था क्यों कि इन पिन्डों का तापमान काफी कम होता है। इस मिशन के द्वारा उन सभी पिन्डों का संसूचन सम्भव था जो 70–100 केल्विन तापक्रम से अधिक गर्म थे। नेप्चून ग्रह के आकार के पिन्डों का संसूचन 700 खगोलिकी इकाई की दूरी से, वृहस्पति ग्रह जैसे भार वाले पिन्डों का संसूचन एक प्रकाश वर्ष (63,00 खगोलिकी इकाई) की दूरी से सम्भव था जो सूर्य के गुरूत्व नियंत्रण जोन में आते हैं। नियोजन के समय इसका अनुमान किया गया था कि 'वाइज' मियान लगभग 300,000 प्रमुख बेल्ट क्षुद्र ग्रहों का संसूचन करेगा जिनमें से लगभग 100,000 नये पिन्ड होगें और लगभग 700 पृथ्वी समीप पिन्ड होंगे (जिनमें 300 अ–अन्वेषित होंगे)। इस से यह मतलब निकलता है कि संसूचन की गति होगी– लगभग 1000 नए प्रमुख

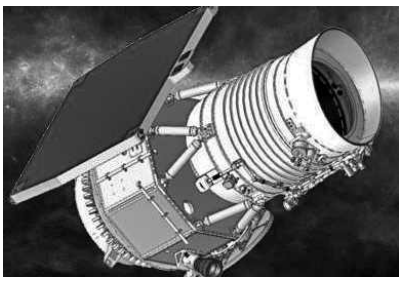

अंतरिक्ष में प्रस्तरित स्थिति में वाइज अंतरिक्ष यान।

वैन्डेनबर्ग वायुसेना बेस से 14 दिसम्बर 2009 को 'वाइज' अंतरिक्ष यान के प्रमोचन का इन्फ्रारेड तरंग दैर्ध्य पर लिया गया चित्र।

पेटी क्षुद्र ग्रह प्रति दिन, और 1–3 पृथ्वी समीप पिन्ड (न्यो) प्रति दिन। पृथ्वी समीप पिन्डों का शीर्ष आयामी वितरण (पीक मैगनीट्यूड डिस्ट्रीब्यूषन) 21–22 वी होगा। वाइज मिशन को प्रत्येक विशिष्ट सौर तंत्र पिन्ड का संसूचन 36 घन्टे की अवधि में (3 घन्टे के अंतराल के साथ) 10 से 12 बार करना था।

'वाइज' दूरबीन का निर्माण संयुक्त रूप से बाल एरोस्पेस एण्ड टेक्नोलोजीज (अन्तरिक्ष यान, प्रचालन सपोर्ट), एस एस जी प्रेसिज़न आप्ट्रोनिक्स, इनकार्पोरेशन (टेलीस्कोप, प्रकाशिकी, क्रमवीक्षण दर्पण), डी आर एस एण्ड रॉकवेल (फोकल प्लेन्स), लाकहीड मार्टिन (क्रायोसैट, दूरबीन का शीतलीकरण), एवं स्पेस डाइनामिक्स प्रयोगशाला (उपकरण, इलेक्ट्रानिकी एवं टेस्टिंग) के द्वारा किया गया। सम्पूर्ण कार्य क्रम का प्रबन्धन पसाडेना स्थित जेट प्रापल्सन प्रयोगशाला के द्वारा किया जाता है।

वाइज़ अंतरिक्ष यान

वाइज़ अंतरिक्ष यान का निर्माण बॉल एरो स्पेस एण्ड टेक्नोलोजीज (कोलोरैडो में बोल्डर स्थान पर स्थित) के द्वारा किया गया। अंतरिक्ष यान की रूप रखा बॉल एरो स्पेस आर एस– 300 अंतरिक्ष यान आर्कीटेक्चर से ली गई है (विशेषकर नेक्स्टसैट अंतरिक्ष यान से, जिसका निर्माण सफल आरबिटल एक्सप्रेस मिशन के लिए किया गया तथा जिसका प्रमोचन 9 मार्च 2009 को किया गया था)। उड़ान तंत्र का अनुमानित भार 560 किग्रा0 है। वाइज़ अंतरिक्ष यान 3–अक्षीय भार सन्तुलित है (जिसके सौर एरे इसके शरीर में जुड़े है)। इसमें कू– बैन्ड (11000 से 14000 मेगाहर्त्स आवृत्ति को कू–बैन्ड कहते है) उच्च लब्धि (गेन) एन्टेना का प्रयोग किया गया है तथा यह नासा के 'टी डी आर एस एस' भूस्थिर उपग्रह तंत्र के माध्यम से पृथ्वी के केन्द्र से सम्पर्क स्थापित करता है। बॉल कम्पनी ने अंतरिक्ष यान की टेस्टिंग और उड़ान तंत्र इन्टीग्रेशन का कार्य किया।

वाइज़ मिशन

वाइज़ मिशन ने इन्फ्रारेड बैन्ड की चार तरंग दैर्ध्यों पर अत्यधिक उच्च सुग्राहकता के साथ आकाश का सर्वेक्षण किया। इसके संसूचक एरे की 5–सिग्मा सुग्राहकता सीमाएँ है तथा ये हैं 120,160,650 और 2600 माइक्रोजैन्स्कीज (3.3, 4.7, 12 और 23 माइक्रोमीटर तरंग दैर्ध्य पर)। यह 100 गुनी बेहतर सुग्राहकता है जो 1983 के सर्वेक्षण में 'आई आर ए एस उपग्रह' के द्वारा 12

'वाइज' मिशन से पृथ्वी में प्राप्त प्रथम प्रतिविम्ब।

और 13 माइक्रोमीटर तरंग दैर्ध्य पर किया गया था तथा यह 1990 में कोबे (कास्मिक बैकग्राउन्ड एक्सप्लोरर) उपग्रह के द्वारा 3.3 और 4.7 माइक्रोमीटर तरंग दैर्ध्य पर किये गये सर्वेक्षण की तुलना में 500000 गुनी बेहतर सुग्राहकता दर्शाता है। इसके विपरीत 'आई आर ए एस' 60 और 100 माइक्रोन तरंग दैर्ध्यों पर भी प्रेक्षण कर सकता था जो वाइज़ मिशन के द्वारा सम्भव नहीं था।

प्रोजेक्ट के माइल स्टोन

वाइज़ मिशन के नेतृत्व करने वाले वैज्ञानिक हैं लॉस एन्जीलीस स्थित कैली फोर्निया विश्वविद्यालय के डा0 एडवार्ड उल राइट। राइट के प्रयासों के अन्तर्गत वाइज़ मिशन का एक लम्बा इतिहास है तथा पहली बार 1999 में इसकी फन्डिग

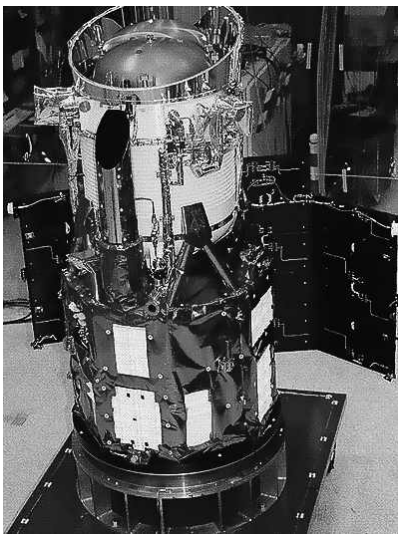

'वायर' (वाइज फील्ड इन्फ्रारेड एक्सप्लोरर) मिशन जो अंतरिक्ष कक्षा में पहुँचने के कुछ घन्टे बाद फेल हो गया।

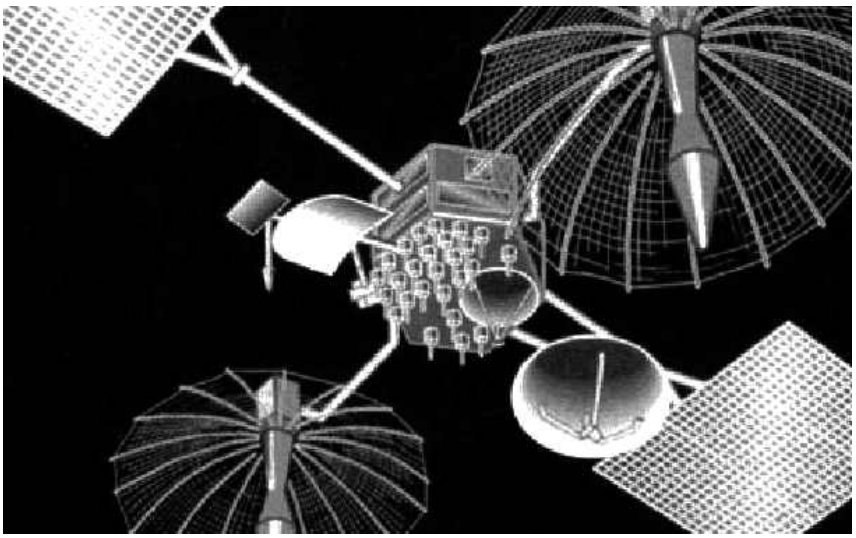

'वाइज' अंतरिक्ष यान 'टी डी आर एस एस' उपग्रह तंत्र के माध्यम से पृथ्वी के केन्द्र से सम्पर्क स्थापित करता है। चित्र में इस उपग्रह तंत्र का एक उपग्रह दिखाया गया है।

नासा के द्वारा नासा के मध्यम श्रेणी अन्वेषण मिशन ''अगली पीढ़ी आकाशी सर्वेक्षण'' (एन जी एस एस–नेक्स्ट जनरेशन स्काई सर्वे) के नाम से की गई। कार्यक्रम इतिहास 1999 से आज की तिथि तक क्रमानुसार निम्न है :–

1.	जनवरी 1999	पाँच मिशनों में 'एन जी एस एस' का चयन चरण ए के अध्ययन के लिए किया गया तथा 1999 में 5 में से चयनित मिशन 2 हो गये। एक का प्रमोचन 2003 तथा दूसरे का प्रमोचन 2004 के लिए निर्धारित किया गया। उस समय मिशन की अनुमानित कीमत 13 करोड 90 लाख डालर थी।
2.	मार्च 1999	वायर इन्फ्रारेड दूरबीन अंतरिक्ष यान कक्षा में पहुँचने के कुछ घन्टों बाद फेल हो गया।
3.	अक्टूबर 1999	मिडेक्स अध्ययन को अधिक उपयोगी घोषित किया गया और 'एन जी एस एस' का चयन नहीं हो सका।
4.	अक्टूबर 2001	'एन जी एस एस' प्रस्ताव का पुनः आवेदन किया गया (सबमिट किया गया– मिडेक्स मिशन के रूप में)।
5.	अप्रैल 2002	'एन जी एस एस' प्रस्ताव नासा के एक्सप्लोरर कार्यालय द्वारा स्वीकार्य तथा पूर्ण चरण 'ए' अध्ययन के लिए 4 मिडेक्स कार्यक्रमों में एक को प्रारम्भ करने की मंजूरी।
6.	दिसम्बर 2002	'एन जी एस एस' का नाम बदलकर वाइड फील्ड इन्फ्रारेड सर्वे एक्सप्लोरर (वाइज़) कर दिया गया।
7.	मार्च 2003	नासा के द्वारा प्रेस रिलीज में वाइज़ का चयन विस्तृत चरण ए अध्ययन के लिए हो गया।
8.	अप्रैल 2004	वाइज का चयन नासा के अगले मिडेक्स मिशन के लिए हो गया। वाइज मिशन की कीमत उस समय 20 करोड 80 लाख डालर आंकी गई।
9.	नवम्बर 2004	वाइज के निर्माण के लिए नासा ने स्पेस डाइनामिक्स लैबोरेटरी को चुना।
10.	अक्टूबर 2006	नासा के द्वारा वाइज के विकास की पुष्टि तथा नासा ने इसे विकसित करने की अनुमति दे दी।
11.	14 दिसम्बर 2009	वाइज़ मिशन का सफलता पूर्वक प्रमोचन।
12.	06 जनवरी 2010	वाइज़ मिशन से प्राप्त प्रथम प्रतिबिम्ब रिलीज किया गया।
13.	14 जनवरी 2010	वाइज़ मिशन ने नौ महीने की अवधि वाला 4 विभिन्न तरंग दैर्ध्यो में नियमित सर्वेक्षण कार्य प्रारंभ कर दिया।
14.	25 जनवरी 2010	वाइज ने एक पृथ्वी समीप क्षुद्र ग्रह '2010 ए बी 78' का संसूचन किया।
15.	अक्टूबर 2010	वाइज अंतरिक्ष यान का शीतलीकारक (कूलैन्ट) खतम हो गया। नासा के ग्रहीय (प्लैनेटरी) विभाग के द्वारा समर्थित मिशन 'न्योवाइज़' का प्रारम्भ।

(से.नि.) वैज्ञानिक, भारतीय अंतरिक्ष अनुंसधान संस्थान (इसरो)

एक संकटग्रस्त पक्षी प्रजाति

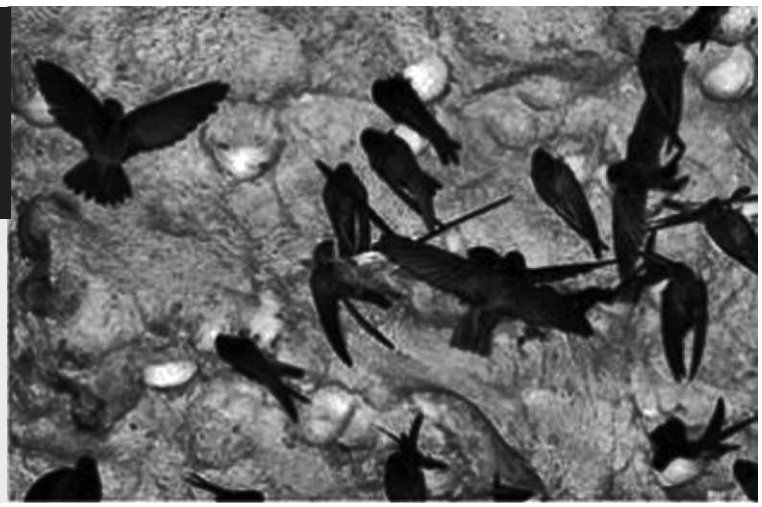

एडीबल नेस्ट स्विफ्ट्लेट (हवाबिल) घोंसले का सूप!

एम. विजय[1] एवं बृजेश कुमार[2]

एड्इबल नेस्ट स्विट्लेट (हवाबिल) स्विट परिवार की एक छोटी चिड़िया है, जो दक्षिण -पूर्व एशिया में पायी जाती है। इस चिड़िया की लम्बाई 10–12 सेमी. तथा वजन 15 से 18 ग्रा. तक होता है, इसकी पूँछ सिरे पर हल्की सी द्विभाजित होती है, तथा चोंच और पैर काले होते हैं।

इस चिड़िया का घोंसला सूखी हुई लार से बना होता है जिसका प्रयोग बर्ड नेस्ट सूप बनाने में किया जाता है। पारम्परिक चाइनीज व्यजनों में इस सूप को बेहद स्वादिष्ट माना जाता है, लगभग 400 वर्षों पूर्व से इस सूप का प्रयोग होता आ रहा है। इस घोंसले को जल में घोलने पर यह जिलेटिन की भाँति गाढे सूप में बदल जाता है जिसे चाइनीज भाषा में टॉगसू भी कहते हैं।

एडीबल नेस्ट स्विट्लेट की 6 उप–प्रजातियां पायी जाती है–

एरोडमस फयूसी फेगस फयूसी फेगस	–	जावा, बाली, और सुण्डा द्वीप पर मिलती है।
एरोडमस फयूसी फेगस इन्एक्स पेक्टेटस	–	अण्डमान निकोबार द्वीप पर मिलती है।
एरोडमस फयूसी फेगस मीकेन्स	–	पूर्वी सूण्डों द्वीप पर मिलती है
एरोडमस फयूसी फेगस डेमरमनी	–	फलोरस द्वीप पर मिलती है।
एरोडमस फयूसी फेगस वेस्टिटस	–	सुमात्रा और बोर्नियो में पायी जाती है।
एरोडमस फयूसी फेगस परपेल्ककस्स	–	मरातुआ आर्किपेलागो पूर्वी बोर्नियो में पायी जाती है।

इस चिड़िया का भोजन उड़ते हुए कीट–पतगें होते हैं जिन्हें यह हवा में उड़ते समय पकड़ती है । यह झुण्डों में रहना पसन्द करती है और अपना वास स्थान गुफाओं चट्टानों की दरारों एवं कभी–कभी इमारतों में भी बनाती है। इसका घोंसला सफेद एवं पारदर्शी होता है, जो इसकी लार की कई परतो के चटटानों से बनता है। यह परतें आपस में एक–दुसरे से गुथी हुयी रहती हैं। घोंसले का निर्माण नर स्विट्लेट द्वारा प्रजनन काल के दौरान किया जाता है जो कि 35 दिनों का होता है। यह आकार में छिछले कप की तरह होता है जो कि गुफा की दीवार पर लगा रहता है। इसकी माप 6 सेमी. और गहराई 15 सेमी. और वजन लगभग 14 ग्राम होता है। मादा इस घोंसले में 2 सफेद अण्डाकार गैर चमकदार अण्डे देती है।

गुफा जिसमें स्विट्लेट घोंसला बनाती है।

सफेद और रक्ताभ लाल घोंसलों में पोशक तत्व काफी मात्रा में होते हैं जिससे ये स्वास्थ्य की दृष्टि से काफी महत्वपूर्ण माने जाते हैं, एवं कई प्रकार के स्वास्थ्य विकारों जैसे – पाचन क्रिया बढाने, आवाज को सुधारने, अस्थमा, स्मरण शक्ति बढाने, सेक्स क्षमता बढाने एवं प्रतिरक्षा तंत्र को मजबूत करने में उपयोगी होता है। हालां कि चाइनीज यूनीवर्सिटी हाँग काँग के जैव रासायन शास्त्री कॉगयूचेन ने प्रयोग में यह पाया कि घोंसलों में जल में घुलनशील ग्लायको प्रोटीन्स पाये जाते हैं जो कि प्रतिरक्षा तंत्र की कोशिकाओं में कोशिका

घोंसलो को इकठ्ठा करते व्यक्ति।

विभाजन को प्रेरित करते हैं। इस प्रक्रिया में प्रतिरक्षातंत्र नष्ट हो जाता हैं, इस कारण से इन घोंसलों का सूप वास्तव में कम पोषक मूल्य का होता है। गॉसेट (2004) के अनुसार **व्हाइट बर्ड नेस्ट स्विफ्ट्लेट** *(एरोड्रामस फयूसी फेगस)* तथा **ब्लैक बर्ड नेस्ट स्विट्लेट** *(एरोड्रामस मैक्सी मक्स)* के घोंसले सबसे ज्यादा उपयोग में लाये जाते हैं।

हाँग काँग और संयूक्त राज्य अमेरिका इन घोंसलो के सबसे बड़े निर्यातक देश हैं। हाँग काँग में **बर्ड नेस्ट सूप** की कीमत 30–100 यू.एस डॉलर तक होती है। वहीं सफेद घोंसलो की कीमत 2000 डॉलर तथा रक्ताभ लाल घोंसलों की कीमत 10000 डॉलर तक होती है। इन घोंसलों को गुफाओं की ऊँची दीवारों से इकठ्ठा किया जाता है। इसके लिए लोग जान का जोखिम उठाकर इनको इकठ्ठा करते हैं, इन घोंसलों को उठाने के लिए इन्हें सैकड़ों फीट ऊँचे, काफी पुराने और कमजोर बाँस के लठ्ठे पर चढकर इन घोंसलों को इकठ्ठा करना पड़ता है।

पिछले बीस सालों में इन घोंसलों की अन्तराष्ट्रीय बजार में मांग बढने से इनका दोहन काफी ज्यादा हो गया है जिससे इन प्रजातियों के अस्तित्व पर खतरा मंडराने लगा है। अण्डमान निकोबार में पायी जाने वाली प्रजाति के अत्याधिक दोहन होने के कारण यह गम्भीर रूप से संकटग्रस्त जीवों की श्रेणी में आ गई है।

घोंसला एवं स्विफ्ट्लेट के बच्चे

इन जीवों को बचाने के लिए कड़े कानूनी प्रावधानों के निर्माण एवं उनके कड़ाई से पालन की आवश्यकता है। इन नये कानूनों में लाइसेन्स प्रणाली के प्रयोग पर सबसे ज्यादा बल दिया जा रहा है । इसके अनुसार चिड़ियों द्वारा अण्डे देने के लिये नये घोंसलों को बनाने के बाद ही पुराने घोंसलों को उपयोग में लाया जा साकता है, बहुत सी गुफाओं में केवल एक ही सत्र में घोंसलों को उठाने का नियम आदि जैसे कानून बनाने की आवश्यकता पर जोर दिया जा रहा है। इसके अतिरिक्त वियतनाम, इण्डोनेशिया, थाइलैण्ड, मलेशिया आदि के कुछ घोंसला व्यापारियों ने एक अनोखी पहल करते हुये इन स्विट्लेट चिड़ियों को घर जैसी जगहों में प्रजनन करके अपनी संख्या बढाने को प्रेरित किया जिससे इन चिड़ियो के घोंसलों को आसानी से प्राप्त किया जा सके और सकारात्मक ढंग से उनका व्यापार किया जा सके। परन्तु बाजार में इन घरेलू घोंसलों की कीमत गुफा के घोसलों से काफी कम होगी क्योंकि इनके साथ इन्हें उठाने में जान का जोखिम नहीं होगा। इन कानूनी प्रावधानों के लागू होने पर भी इन घोंसलों के आय का अच्छा स्रोत होने के कारण इनको गैरकानूनी तरीकों से इकठ्ठा करने एवं इनका निर्यात करने वाले की संख्या तेजी से बढ रही है जिससे इन प्रजातियों को संरक्षित जीवों की श्रेणी में रखना कहीं ज्यादा कारगर सिद्ध होगा।

घोंसला

1.ई. आई.ए. डिवीजन,
आई. सी.एफ. आर. ई., देहरादून
2.भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण,
उ.क्षे.के., देहरादून

एस० के० गुप्ता

मछली पालन उद्योग

नोट : लेख में संदर्भित 'चित्रों' के लिए कृपया **पिछले कवर पृष्ठ के अन्दर** देखें।

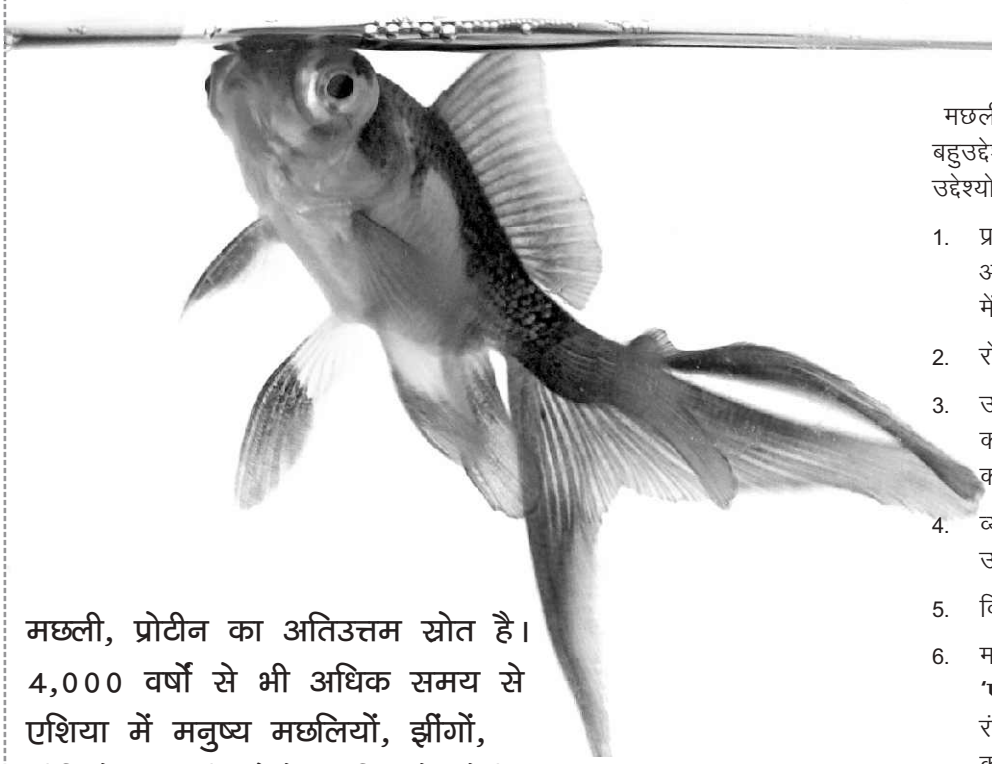

मछली, प्रोटीन का अतिउत्तम स्रोत है। 4,000 वर्षों से भी अधिक समय से एशिया में मनुष्य मछलियों, झींगों, सीपियों, समुद्री पौधों आदि को प्रोटीन के स्रोत के रुप में प्रयोग करता रहा है और उसके लिए वह उनका संवर्धन भी करता था। विभिन्न प्रकार के जल स्रोतों में खाने योग्य जीवों को पालकर उनका संवर्धन करना 'एक्वाकल्चर' कहलाता है।

मछली पालन भी एक प्रकार की बहुउद्देशीय विधा है, जिसके द्वारा निम्न उद्देश्यों की पूर्ती होती है:

1. प्रति व्यक्ति उत्पादन, उपभोग व आय मे वृद्धि कर राष्ट्रीय आर्थिकी में वृद्धि करना।
2. रोज़गार के अवसर पैदा करना।
3. उपलब्ध प्राकृतिक जल संसाधनों का उचित प्रकार से उपयोग करना।
4. व्यक्तियों का सामाजिक व आर्थिक उत्थान करना।
5. विदेशी मुद्रा अर्जित करना।
6. मनोरंजन की दृष्टि से महत्वपूर्ण व **'एक्वेरियम'** मे पाली जाने वाली रंग–बिरंगी मछलियों का संवर्धन करना।

मध्य–पूर्व, इजिप्ट (मिस्र), रोम आदि के ऐतिहासिक सदंर्भों के अतिरिक्त **'मछली पालन'** का स्वर्णिम इतिहास ईसा से 500 वर्ष पूर्व **'क्लासिक ऑफ फ़िश कल्चर'** नामक पुस्तक से मिलता है, जो राजनीतिज्ञ से मत्स्य–पालक बने **'फान ली'** ने लिखी थी। उस पुस्तक में उन्होंने लिखा था कि उनके 'तालाब' ही

उनकी सम्पत्ति के स्रोत थे। चीन में सर्वप्रथम मछली पालन के प्रमाण **'कॉमन कार्प'** ***(सिप्रीनस कार्पियो)*** नाम से जाने जानी वाली मछली (चित्र 1) के रुप में मिलते हैं। आज चीन से ही सम्बंधित **'ग्रास कार्प'** ***(टीनोफेरिंगोडान आईडेला)*** (चित्र 2), **'सिल्वर कार्प'** ***(हाईपोआफथेल्मिक्थीज़ मोलीट्रिक्स)*** (चित्र 3), **'बिग हैड'** ***(एरिस्टिक्थीज़ नोबीलिस)*** (चित्र 4) तथा **'मड कार्प'** ***(सिरहिनस मोलीटोरेला)*** (चित्र 5) मछलियों का उत्पादन विश्व के बहुत से देशों में हो रहा है।

भारत में मछली पालन का प्रमाण **'कौटिल्य के अर्थशास्त्र'** (321–300 बी0सी0) से मिलता है, जहाँ यह लिखा गया कि युद्ध के समय, किस तरह गोपनीय विधि से मछलियों को, जलाशयों को विषैला करने के लिए, पाला जाता था। राजा सोमेश्वर ने अपनी पुस्तक **'मानसोल्लास'** (1127 ई.) में वह विधि लिखी जिसके द्वारा मछलियों को मोटा (अर्थात् अच्छी वृद्धि वाला) बनाये रखा जा सकता था। 19वीं शताब्दी के अन्त तक बंगाल, बिहार व उड़ीसा में परम्परागत ढंग से मछली पालन उद्योग प्रारम्भ हो चुका था। जो तकनीक वहाँ अपनाई गई वह भारत के अन्य क्षेत्रों में

फैली और आज मत्स्य–पालन उद्योग आर्थिक दृष्टि से एक लाभकारी उद्योग है। 1947 में पश्चिमी बंगाल में **'सेन्ट्रल इन्लैंड फिशरीज़ रिसर्च स्टेशन'** व 1949 में कटक (उड़ीसा) में **'पौंड कल्चर सबस्टेशन'** की स्थापना के साथ मछली उत्पादन को राजकीय व सार्वजनिक क्षेत्र में वैज्ञानिक स्तर पर अपनाने के लिए प्रोत्साहन देना प्रारम्भ हुआ। इस प्रकार कृषि में **'हरित क्राँति'** के साथ–साथ मछली–पालन जैसी **'नीली क्राँति'** ने जन्म लिया। इसी कारण, एक अनुमान के अनुसार, विश्व में **'एक्वाकल्चर'** के क्षेत्र में चीन के बाद भारत का मीठे जल द्वारा विश्व–स्तरीय प्रतिशत उत्पादन दूसरे स्थान पर आँका गया है (चीन 57% व भारत 9%) भारत में होने वाले मत्स्य–पालन के फलस्वरुप लगभग 17 लाख टन उत्पादन प्रतिवर्ष होता हैं और इस उत्पादन का 80% भाग **'कार्प'** के नाम से प्रसिद्ध मछलियों का होता है। वैसे तो **'जल–संवर्धन'** (एक्वाकल्चर) द्वारा बहुत सी मछलियों का संवर्धन किया जाता है, परन्तु इनमें प्रमुख मछलियाँ दो प्रकार की शाकाहारी **'कार्प'** होती हैं, एक **भारतीय मूल** की व **दूसरी विदेशी** मूल **('एक्ज़ोटिक')** की।

- **भारतीय मूल की कार्प :**

1. **रोहू** ***(लेबियो रोहिता)*** (चित्र 6)।
2. **कतला** ***(कतला कतला)*** (चित्र 7)।
3. **म्रिगल** ***(सिरहिनस म्रिगाला)*** (चित्र 8)।

- **विदेशी मूल की कार्प :**

1. **कॉमन कार्प** ***(सिप्रीनस कार्पियो)*** (चित्र 1)।
2. **ग्रास कार्प** ***(टीनोफेरिंगोडॉन आईडेला)*** (चित्र 2)।
3. **सिल्वर कार्प** ***(हाईपोआफथेल्मिक्थीज़ मोलीट्रिक्स)*** (चित्र 3)।
4. **बिग हैड** ***(एरिस्टिक्थीज़ नोबीलिस)*** (चित्र 4)।
5. **मड कार्प** ***(सिरहिनस मोलीटोरेला)*** (चित्र 5)।

- **उत्तराखंड की खाने योग्य प्रसिद्ध मछलियाँ**

उत्तराखंड की गंगा व यमुना नदियों व समुद्र तल से 914 मीटर से भी अधिक ऊँचाई वाले क्षेत्रों के जलस्रोतों को **'ठंडे जल स्रोत' (कोल्ड वाटर बॉडीज़)** कहते हैं, जहाँ का तापक्रम 0° सें. से 20° सें. तक होता है। यहाँ पाई जाने वाली मछलियों को **'कोल्ड वाटर फिशेज'** (ठंडे जल की मछलियाँ) कहते हैं। इन मछलियों में भी भारतीय व विदेशी, दोनो मूल की मछलियाँ सम्मिलित हैं।

भारतीय मूल की ठंडे जल वाली मछलियाँ :

1. **स्नो ट्राऊट या अलवाँ, चीरु** ***(शाईज़ोथोरेक्स या शाईज़ोथोरेक्थीज़)*** (चित्र 9, 10)।
2. **महासीर** ***(टौर)*** (चित्र 11, 12)।

वैसे तो प्राकृतिक रुप से **'अलवाँ' (स्नोट्राऊट)** गढ़वाल हिमालय की भागीरथी / गंगा से पकड़े जाने वाली मछलियों का 80% तक होती है, परन्तु इनकी मात्रा पर बड़े–बड़े बाँध बन जाने व मनुष्य द्वारा शिकार कर लेने के कारण प्रतिकूल प्रभाव पड़ा है। उत्तराखंड के पहाड़ी क्षेत्रों में इनके संवर्धन की अपार क्षमताएँ तो हैं, परन्तु कोई ठोस रणनीति इस ओर बनती अभी तक प्रतीत नहीं हुई है। आवश्यकता है, सार्वजनिक क्षेत्र से ऐसे उत्साही युवाओं की जो इसके संवर्धन को, हल्द्वानी स्थित

'नेशनल रिसर्च सेन्टर ऑन कोल्डवाटर फिशरीज' से वैज्ञानिक सलाह लेकर, अपना सकें और एक अच्छी आय का स्रोत बना सके।

'महासीर', उत्तराखण्ड क्षेत्र की एक अन्य महत्वपूर्ण मछली है। एक समय था जब 30–40 किलो गा0 की महासीर गंगा नदी में मिल जाया करती थी। आज 2 कि0 से अधिक की एक मछली पकड़ लेना बड़े सौभाग्य की बात होती है। जिन मछलियों को हम सभी ने गंगा में आटे की गोलियाँ खिलाते देखा है, वे यही **'महासीर'** होती हैं। **'महासीर'** इसलिए, कि इनके शरीर पर बड़े–बड़े शल्क (स्केल) होते हैं। नदियों पर मनुष्य द्वारा अनधिकार चेष्टा के कारण **'महासीर'** की दुर्दशा के बार में आये दिन वैज्ञानिक अपने शोध परिणाम व आख्याएँ देते रहते हैं। हल्द्वानी स्थित शोध केन्द्र ने इनके संवर्धन के बहुत से सफल प्रयोग किये हैं। कुमाँऊ के नौकुचियाताल व सत्ताल; जी0 बी0 पंत विश्वविद्यालय, पंतनगर आदि ने भी **'महासीर'** संवर्धन के प्रयास किये हैं। देहरादून ज़िले में **'बेंतवाली मंडी'** (विकासनगर के पास) में महासीर संवर्धन का प्रयास असफल रहा। टिहरी के 'चम्बा' व 'सतपुली' मे भी प्रयास तो किये गये परन्तु आशातीत सफलता नहीं मिली। कुल मिलाकर गढ़वाल में 'महासीर' संवर्धन को वह सफलता न मिल सकी जिसकी अपेक्षा की जाती रही। इसी कारण नवीं पंचवर्षीय योजना (1997–2002) में 2 करोड़ बजट का प्रावधान भी किया गया था।

• विदेशी मूल की ठंडे जल वाली मछलियाँ :

1. **रेनबो ट्राऊट *(ऑंकोरिंकस मीकिस)*** (चित्र 13)।
2. **ब्राऊन ट्राऊट *(सामो ट्रूटा फेरियो)*** (चित्र 14)।

भारत में **'ट्राऊट'** संवर्धन का इतिहास बहुत पुराना है। यूरोप मूल की **'ट्राऊट'** को सर्वप्रथम 1863–1869 में 'नीलगिरी' (तमिलनाडू) में लाया गया था। हिमालय क्षेत्र में, एक कालीन व्यापारी एफ0 जे0 मिशेल ने श्रीनगर (कश्मीर) के हरवाँ में ट्राऊट संवर्धन के प्रयास (1899–1900) किये थे। गढ़वाल में 'ट्राऊट' उत्पादन का प्रयास 1910 में तब किया गया, जब **टीहरी के शासक** ने 'कल्दयानी' (उत्तरकाशी) व **'तल्वारी'** (चमोली) **हैचरी** के लिए कश्मीर से ट्राऊट के अंडे प्राप्त किये थे। परन्तु तकनीकी जानकारी के अभाव में अधिक सफलता प्राप्त न हो सकी। 1978 से उत्तरकाशी मत्स्य विभाग की देख रेख में उक्त स्थानों पर ट्राऊट संवर्धन कार्यक्रम चलाया जा रहा है और वहाँ से मछलियों को भागीरथी व असीगंगा में छोड़ कर उनकी संख्या में वृद्धि करने का प्रयास किया जाता है। इसके अतिरिक्त तमिलनाडू के कोड़ाइकेनाल (1894), हिमाचल के कुल्लू व काँगड़ा (1909), केरल के ट्रावनकोर (1909) आदि में ट्राऊट संवर्धन के प्रयास किये गये। लगभग 149 वर्षों पूर्व 'ट्राऊट' उत्पादन का कार्य प्रारम्भ हुआ, परन्तु हिमाचल के कटरेन व कश्मीर के कोकरनाग के उत्साहवर्धक उत्पादन आंकड़ों के अतिरिक्त और कहीं भी 'ट्राऊट' उत्पादन अपेक्षानुरुप प्रगति न कर सका।

स्वरोजगार सम्भावनाएँ :

कुल मिलाकर राजकीय स्तर पर मछली–पालन के अतिरिक्त, स्वरोज़गार के रुप में मछलियों का उत्पादन कर अपनी आर्थिक स्थिति को मज़बूत किया जा सकता है।

खाने के साथ–साथ ब्यूटी प्रोडक्ट्स और दवाइयों के क्षेत्र में मछली की उपयोगिता को देखते हुए इस सेक्टर में अपार सम्भावनाएँ हैं। शिक्षण–प्रशिक्षण, प्रोसेसिंग और प्रोडक्शन, प्रिजर्वेशन, मरीन कल्चर, फिश फार्म, कॉरपोरेट सेक्टर, नेशनलाइज और प्राइवेट बैंकों में अनेकों पदों पर नियुक्ति प्राप्त की जा सकती है। यदि कोई स्व–रोजगार करना चाहता है तो सरकारी एवं गैर–सरकारी बैंकों से लोन आसानी से मिल जाएगा। मत्स्य विभाग के आंकड़ों के अनुसार यदि एक हेक्टेयर के तालाब में मिश्रित मत्स्य पालन किया जाय तो मत्स्य पालन पर 18 हजार रुपये का सालाना खर्च आएगा। तालाब सुधार व प्रथम वर्षीय उत्पादन निवेशों हेतु लिये गये ऋण की किश्त 10 हजार रुपये का भुगतान भी यदि खर्च में शामिल किया जाय तो कुल वार्षिक व्यय 28 हजार रुपये होगा। एक हेक्टेयर से तीन हजार किलो मत्स्य उत्पादन होगा, जिससे 54 हजार रुपये की आय संभव है। इस आय में से वार्षिक व्यय 28 हजार रुपये घटाने के बाद 26 हजार रुपये का शुद्ध लाभ अर्जित होगा। मछली पालन के साथ–साथ यदि बतख पालन, शूकर पालन भी किया जाय तथा तालाब के बंधों पर केले, पपीते एवं अन्य वृक्षों को लगा दिया जाय तो अतिरिक्त आय प्राप्त की जा सकती है।

मत्स्यपालन ग्रामीण क्षेत्रों में कम समय, कम श्रम, और कम लागत में अधिक लाभ देने वाला व्यवसाय है। इसके लिए बाजार की कोई समस्या नहीं हैं। हर किस्म की मछली को आसानी से बाजार मिल जाता है, इस कारण घाटे की संभावना बहुत कम होती है। मत्स्य उत्पादन से 3 माह में 45,000 रुपए की आमदनी हो सकती है, जो अन्य कई व्यवसायों की तुलना में कहीं ज्यादा है, लिहाजा यह एक अच्छा स्व–रोजगार है।

कभी मछली पालन या उससे जुड़ा व्यवसाय मछुआरों तक ही सीमित था, लेकिन आज यह लधु उद्योग बन चुका है। मछली के उभरते बाजार को देखते हुए फिशरी कल्चर के क्षेत्र में कई मल्टीनेशनल कम्पनियां उतर आई हैं, इसलिए अब इस क्षेत्र में प्रशिक्षित लोगों की अधिक आवश्यकता है। बाजार में मछली की बढ़ती मांग को देखते हुए मत्स्य पालन के क्षेत्र को और विकसित किए जाने की आवश्यकता है।

• क्या करना होगा मत्स्य पालन प्रारम्भ करने के लिए?

मत्स्य पालन के इच्छुक व्यक्ति को अपनी भूमि में तालाब बनाने हेतु कुछ सरकारी प्रक्रियाओं से गुजरना होता है।

- जिस भूमि में तालाब बनाना है, उसकी जानकारी संबंधित विभाग को देना।
- इस आशय का शपथ–पत्र देना होता है कि वह बेरोजगार है तथा मत्स्य पालन के लिए अन्य कहीं से भी कोई ऋण या अनुदान नहीं लिया है।
- मत्स्य पालक व मत्स्य किसान और विकास एजेंसी के बीच सहमति।

- **प्रशिक्षण प्रमाण पत्र।**

मछली पालन का मुख्य उद्देश्य बेरोजगार शहरी और ग्रामीण लोगों को इसका प्रशिक्षण देकर उनको रोजगार मुहैया कराना है। प्रशिक्षित लोगों को ग्राम पंचायत से तालाब पट्टे पर दिलाकर या अपनी बेकार पड़ी निजी भूमि में तालाब बनाकर मछली पालन करवाना है, जो एक सरल स्वरोजगार है।

• किसके लिए होगा लाभकारी?

मछली पालन उन लोगों के लिए लाभदायक हो सकता है, जिनके पास प्रचुर मात्रा में जमीन है। मछली पालन के लिए कुछ चीजें जरूरी हैं। पहला मौसम, दूसरा मिट्टी और तीसरा भरपूर मात्रा में पानी। इन तीनों के बिना मछली पालन की कल्पना करना बेकार है। मछली पालन के लिए सबसे महत्वपूर्ण है तालाब, जिसका चयन करते समय यह ध्यान रखना चाहिए कि पानी का स्रोत तालाब के पास में हो, ताकि जरूरत पड़ने पर उसे भरा जा सके। इसलिए पानी में होने वाले पौधों से रहित दोमट मिट्टी वाले तालाब का चयन करना चाहिए। सरकार की तरफ से समय–समय पर मत्स्य पालन की ट्रेनिंग दी जाती है। आज देश में लगभग 50 लाख परिवार केवल मछली पालन से अपनी आजीविका चला रहे है। मछली पालन इसलिए लाभ का काम है, क्योंकि इसमें कम समय में ज्यादा पैसा कमाया जा सकता है। अभी देश में ज्यादातर मछली पालन परम्परागत तरीके से हो रहा है, इसलिए अभी उतना मत्स्य उत्पादन नहीं हो पा रहा है। अगर मत्स्य पालन वैज्ञानिक विधि से किया जाए तो इससे कहीं अधिक लाभ कमाया जा सकता है। जिस तालाब में मत्स्य पालन करने की योजना बनाई जाये, उसकी गहराई कम से कम 5 फुट होनी चाहिए। मछली पालन शुरू करने से पहले इसकी भरपूर ट्रेनिंग की आवश्यकता होती है ताकि मछली पालन से जुड़ी एक–एक जानकारी हो। हालांकि सभी राज्य सरकारों ने अपने यहां मत्स्य पालन का विभाग खोला है, लेकिन उसके बावजूद इस क्षेत्र में अभी बहुत कुछ किया जाना बाकी है।

• ऋण सुविधा :

आमतौर पर मछली के भोजन व बीज आदि के लिए 30,000 रुपये का बैंक लोन और उस पर 20% की सब्सिडी दी जाती हैं। इसके अलावा तालाब बनवाने, तालाब की गहराई बढ़वाने, बंध बनवाने तथा आउटलेट, इनलेट आदि बनवाने के लिए 60,000 रुपये प्रति हेक्येटर पर बैंक ऋण दिलवाया जाता है तथा उस पर भी 20% की सब्सिडी दी जाती है। तालाब सुधार कार्य हेतु मत्स्य पालक विकास अभिकरणों द्वारा बैंकों से ऋण उपलब्ध कराया जाता है, जिसकी अधिकतम सीमा 32,000 रुपए प्रति हेक्टेयर है तथा इस ऋण पर 25% सरकारी अनुदान भी है।

पहले वर्ष में मत्स्य पालन प्रारम्भ करने के लिए निवेश हेतु 16,000 रुपये प्रति हेक्टेयर की सीमा तक बैंक ऋण पर 25% सरकारी अनुदान दिया जाता है। नये तालाबों के निर्माण के सम्बन्ध में एक लाख रुपए प्रति हेक्टेयर की दर से बैंक ऋण उपलब्ध कराये जाने की व्यवस्था है तथा इस ऋण पर 20,000 रुपये की सरकारी सब्सिडी दी जाती है।

अनुसूचित जनजाति के मत्स्य पालकों को अनुदान सहायता 25–50% तक उपलब्ध कराई जाती है।

• तकनीकी ज्ञान प्राप्त करने के लिए शिक्षाः

मत्स्य पालन के क्षेत्र में शॉर्ट टर्म कोर्स, फिश कल्चर तथा फिश प्रोसेसिंग आदि पाठ्यक्रम विभिन्न संस्थानों द्वारा चलाए जाते हैं। अगर कोई बारहवीं कक्षा पास हैं तो वह **बेचलर ऑफ साइंस इन फिशरी** (बी.एफ.एस.सी.) भी कर सकते हैं। बी.एफ.एस.सी. करने के बाद आसानी से नौकरी मिल जाती है।

सर्टिफिकेट कोर्स के लिए अभ्यर्थी को विज्ञान विषय से स्नातक होना चाहिए। **डिप्लोमा** केवल एक वर्ष का होता है। इसके अलावा आम किसानों के लिए केंद्र और राज्य सरकारों के मत्स्य पालन विभाग साल में कई बार छोटे–छोटे प्रशिक्षण कार्यक्रम चलाते हैं। फिशरी कल्चर में प्रवेश हेतु बायोलॉजी में न्यूनतम 55 फीसदी अंक के साथ बारहवीं पास होना आवश्यक है।

• प्रमुख संस्थान जहाँ से मछली विषय या मत्स्य पालन में शिक्षा प्राप्त कर या तो नौकरी की जा सकती है या स्वरोजगार स्थापित किया जा सकता है :

1. जी.बी. पंत यूनिवर्सिटी आफ एग्रीकल्चर एंड टेक्नोलॉजी, पंतनगर।
2. बरकतुल्ला यूनिवर्सिटी, होशंगाबाद रोड, भोपाल।
3. राजस्थान कृषि विश्वविद्यालय।
4. गुजरात एग्रीकल्चर यूनिवर्सिटी, कॉलेज आफ फिशरीज, वेरावल।
5. सेंट्रल इंस्टिटयूट ऑफ फिशरी एजूकेशन, मुम्बई।
6. कॉलेज ऑफ फिशरीज़, मंगलौर।
7. कॉलेज ऑफ फिशरीज़, कोच्चि (केरल)।
8. कॉलेज ऑफ फिशरीज़, रत्नागिरी, कोंकण कृषि विद्यापीठ, महाराष्ट्र।
9. कॉलेज ऑफ फिशरीज़, गोपालपुर (उड़ीसा)।
10. कॉलेज आफ फिशरीज़, टयूटीकोरिन, तमिलनाडू कृषि वि0वि0, कोएम्बटूर।
11. कॉलेज आफ फिशरीज़, रोहा (असम)।
12. उत्कल वि0वि0, वाणी विहार, भुवनेश्वर।

आइये! **'नीली क्राँति'** को सफल बनाएँ। विशेषत : उत्तराखण्ड के निवासी इस क्षेत्र में अभूतपूर्व योगदान दे सकते हैं और रोज़गार प्राप्त करने की होड़ में पहाड़ों से पलायन को रोक सकते हैं। किसी ने ठीक ही कहा है, कि **'क्राँति'** एक दिन में नहीं होती, चाहे वह **सामाजिक क्राँति** हो या **'हरित'** या **'नीली'**। आवश्यकता है तो दृढ़ निश्चय, कठिन परिश्रम व अपनी धरती से प्रेम की।

एसोसिएट प्रो0 (से0नि0),
प्राणी विज्ञान विभाग, डी0 बी0 एस0 महाविद्यालय, देहरादून

सचिव, भारतीय विज्ञान लेखक संघ
उत्तराखण्ड प्रभाग

विज्ञान व्यंग

पपीता पेड़ से क्यों गिरा?

अशोक कुमार दुबे

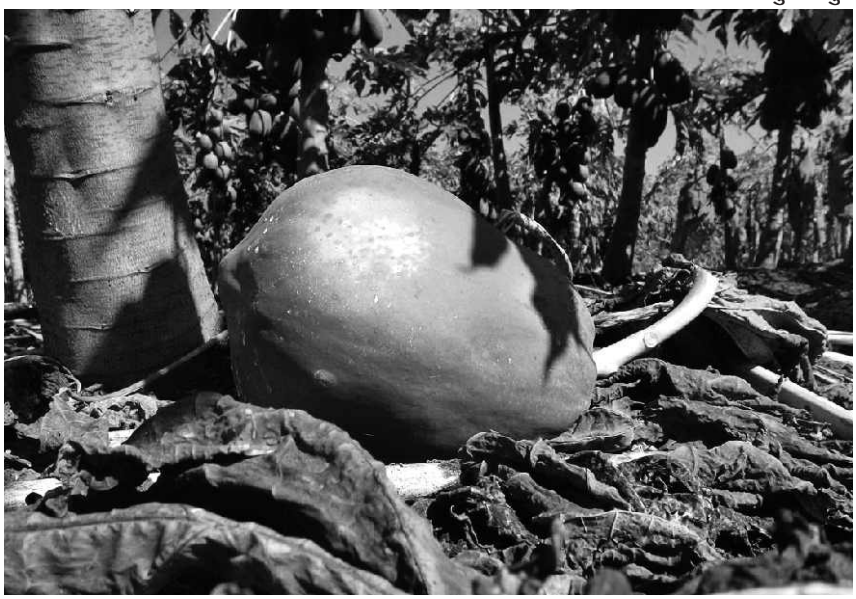

पंडित राधवल्लभ चतुर्वेदी के सुपुत्र चिरंजीव बटुकशंकर का हृदय उस दिन प्रातः से ही अशांत था। जीवन में समस्त सुख-सुविधाएं थीं। सलिल-पावनी क्षिप्रा नदी के तट पर विशाल प्रासाद था। सांदीपनि आश्रम में उच्च शिक्षा चल रही थी। राजा वीर विक्रमादित्य के सुशासन और न्याय की कीर्ति तीनों लोकों में फैल चुकी थी। ईश्वर की अनुकंपा से संपूर्ण मालव प्रदेश धन-धान्य से लहलहा रहा था। फिर चिंरजीव को ऐसी क्या परेशानी आन पड़ी थी। कभी आश्रम के विशाल कुण्ड की सीढ़ियों पर बैठते तो कभी किसी आम्रवृक्ष की छाया तले आते-जाते रथारोही राज्यपुरुषों को निहारते। मन इधर से उधर भटक रहा था। कभी क्षिप्रा में जलक्रीड़ा करती किशोरियों का ध्यान आता तो कभी यह विचार कि दरबार के नवरत्नों में सहित्याचार्य से लेकर ज्योतिषाचार्य तक सभी हैं मगर कोई वैज्ञानिक क्यों नहीं? सहसा फचाक की एक जोरदार आवाज आई और समीप ही एक वृक्ष से पपीता टूटकर नीचे गिर पड़ा। पपीते के साथ ही चिंरजीव की तंद्रा भी टूट गई।

अब उनके मस्तिष्क में विचार कौंध रहा था कि पपीता पेड़ से नीचे पृथ्वी पर ही क्यों गिरा? इस कमबख्त पपीते ने उनके मन-मस्तिष्क को कुछ इस तरह जकड़ लिया कि रात-दिन बस एक ही विचार था, पपीता पेड़ से नीचे क्यों गिरा? अब न खाने-पीने की सुध-बुध थी, न बूढ़े मां-बाप की चिन्ता, न गुरुओं का ध्यान था और न प्रेयसी का स्वप्न। रात्रि के अलग-अलग प्रहरों में पीपता पेड़ से नीचे गिरता और अचानक निद्रा भंग हो जाती। कुछ समय यों ही चलता रहा। सहसा एक दिन जैसे साक्षात देवी सरस्वती उनकी कलम पर विराजमान हो गई हों। बटुकशंकर जी ने एक लेख लिखा और उसका शीर्षक दिया, पपीता पेड़ से नीचे क्यों गिराः गुरूत्वाकर्षण के मूलभूत सिद्धांत। जब लेख तैयार हो गया तो इसे छापने की चिंता सवार हो गई। ताजे ताड़-पत्र पर मोरपंख की सुन्दर लेखनी से लेख दोबारा लिखा गया और मौलिक मालव के मुख्य संपादक बाबू शिवप्रसाद गोयल को भेज दिया गया।

बाबू शिवप्रसाद गोयल का ज्ञान के प्रचार-प्रसार से पुश्तैनी संबंध था। उनके दादा श्री महाकालेश्वर मंदिर के सामने बरगद के एक विशाल वृक्ष के नीचे चादर बिछाकर पुस्तकों की एक दुकान लगाते थे। जिस तरह भगवान शिव का संबंध शेषशायी विष्णु से लेकर भूत-पिशाच तक सभी से था, उसी तरह उनकी दुकान पर "शिव-स्तुति" और "हरतालिका तीज व्रत कथा" से लेकर "किस्सा तोता-मैला का" और "किस्सा-ए-हातमताई" तक सभी तरह का साहित्य विद्यमान था। पिताजी ने जब प्रकाशन के क्षेत्र में कदम रखा तो पहले प्रकाशन से ही धूम मचा दी। इस प्रकाशन में केसर और बादाम युक्त भांग की ठण्डाई बनाने की विधि और इसके गुण-दोषों का विस्तृत विवेचन किया गया था। बाबू शिवप्रसाद ने इसी खानदानी परंपरा को आगे बढ़ाने की कसम खा रखी थी।

बाबूजी ने लेख पर एक उचटती सी नजर डाली और अपनी पत्रिका के उपसंपादक पंडित भोलेशंकर द्विवेदी को आवाज लगाई। जैसे कि पुरानी परंपरा चली आई है बाबूजी दिशा-निर्देश देते थे और पंडित जी उसका अक्षरशः पालन करते थे। यही उनकी नियति थी और इसी में उनकी भलाई भी। पंडित जी को तत्काल लेख के विवेचन हेतु तीन विद्वत् जनों की राय लेने का आदेश दिया गया।

अगले दिन प्रातः बगल में पोथी दबाए पंडित जी ने बाबूजी के द्वार पर दस्तक दी। दस्तक की तीव्रता से उनकी उत्तेजना की अनुभूति महसूस करना दुष्कर कार्य नहीं था। "बाबूजी! लेख में तो क्रांतिकारी विचार हैं। तुरन्त ही तीन रथों की व्यवस्था करने की कृपा करें। पहला रथ कश्मीर प्रदेश जाएगा, दूसरा बंग प्रदेश और तीसरा दक्षिण प्रदेश। वहां के विद्वत् जनों की राय लेने के पश्चात इसके शीघ्र प्रकाशन की व्यवस्था करनी होगी।" बात खत्म होने से पूर्व ही बाबूजी सारा माजरा भांप चुके थे। उन्होंने चक्षु खोलकर कुछ इस तरह से दृष्टिपात किया मानो पंडित जी को वह वहीं अपनी क्रोधाग्नि में भस्म कर देंगे। "पिछले अठारह साल से हमारे साथ काम कर रहे हो मगर व्यापार का ककहरा पढ़ना भी नहीं सीखे। तुम्हारा बस चले तो हमारे प्रकाशन संस्थान की लुटिया डुबो दो।" पंडित जी को उन्होंने तुरंत चलता किया। अपने एक दूसरे विश्वसनीय सेवक को बुलाया और लेख की तीन प्रतियां तीन प्रतिष्ठित जनों को भेजने की व्यवस्था की। पहली प्रति स्थानीय संस्कृत पाठशाला के प्राचार्य पं. सूर्यनारायण उपाध्याय को भेजी गई। दूसरी प्रति वैद्यभूषण प्रभुदयाल व्यास को और तीसरी प्रति राजकीय उद्यान के प्रमुख माली भैरोमल भीखूमल को भेजी गई। कुछ समय पश्चात लेख की विवेचन समीक्षाएं प्राप्त हो गई जिन्हें ज्यों का त्यों यहां प्रस्तुत किया जा रहा है।

पहली समीक्षा

उज्जयिनी नगर में जहां महाकवि कालिदास 'अभिज्ञान शाकुन्तलम्' 'मालविकाग्निमित्रम्' और 'मेघदूतम्' जैसी कालजयी रचनाएं प्रस्तुत कर चुके हैं, वहाँ इस निकृष्ट रचना की किसी दुःस्वप्न में ही कल्पना की जा सकती है। लेख पूर्णतया नीरस और घोर उबाऊ है। न इसमें कोई नायक है, न नायिका और न ही खलनायक। कालिदास ने अपनी रचनाओं में जहां प्रेम की कोमल भावनाओं की सजीव अभिव्यक्ति की है वहीं इस लेख में किसी ऐसे गुरुत्वाकर्षण नामक रूखे विषय का चित्रण है जिसका मन की कोमल भावनाओं से दूर–दूर तक कोई नाता नहीं। लेख की भाषा त्रुटिपूर्ण है। इसमें न तो नाट्यविद्या के सिद्धांतों का पालन किया गया है और न ही शब्दों को संगीत के सुरों में बांधा जा सकता है। भाषा में अलंकारों का सर्वथा अभाव है – श्लेष तो ढूंढे से नहीं मिलता। न तो इसमें सम्राट की कीर्ति का गुणगान किया गया है और न ही इसका जन–जन की भावनाओं से कोई सरोकार है। पौराणिक काल से यह एक सर्वविदित तथ्य है कि जो पृथ्वी पर जन्म लेता है वह पृथ्वी में ही समा जाता है। मां वसुन्धरा की गोद में अंतिम शरण लेता है। लेख में प्रस्तुत विचार मौलिक नहीं है और कल्पनाशीलता का नितांत अभाव है। दुख तो इस बात का है कि विज्ञान का सहारा लेकर लेखक ने इमें अपनी महान सभ्यता और संस्कृति से दूर करने का प्रयास किया है जिसे हम कभी सफल नहीं होने देंगे।

अंत में लेख में पृथ्वी का जिक्र है, मालव भूमि का नहीं। चूंकि आपकी पत्रिका "मौलिक मालव है मौलिक वसुन्धरा" नहीं अतः लेख का पत्रिका में समावेश नहीं किया जा सकता।

हस्ताक्षर सहित्याचार्य पंडित सूर्यनारायण उपाध्याय, संस्कृत पाठशाला, उज्जयिनी

दूसरी समीक्षा

प्राचीन ऋषि–मुनि सदियों से पपीते और इसके औषधीय गुणों से भली–भांति परिचित थे। पपीते के गुणों का बखान "चरक–संहिता" में भी कई स्थानों पर

किया गया है। मैंने स्वयं सरदर्द से लेकर पथरी तक अनेक रोगों की सफल चिकित्सा पपीते से की है। आपका भेजा गया लेख जब मुझे प्राप्त हुआ तो हृदय यह जानकर प्रफुल्लित हो उठा कि अवश्य ही इस लेख में पपीते के कुछ नए प्रयोग दर्शाए गए होंगे मगर अत्यंत क्षोभ और भारी मन से सूचित करना पड़ रहा है कि लेख का शीर्षक भ्रमोत्पादक है। लेख में पपीते के गुण–दोष विवेचन का सर्वथा अभाव है। लेखक को इतना भी ज्ञान नहीं है कि पपीते का वृक्ष से गिरना महत्वपूर्ण नहीं है। महत्वपूर्ण यह है कि गिरने के पश्चात उसका उपयोग क्यों, कैसे और किसके लिये किया गया है।

आपकी लब्धप्रतिष्ठित पत्रिका की कीर्ति आज दसों दिशाओं में फैल चुकी है। आपकी बुद्धि, अनथक परिश्रम और भगवान महाकाल की कृपा से यह पत्रिका जिस उंचाई को प्राप्त कर चुकी है उसके दशांश का भी यह लेख हकदार नहीं है। कृपया इस लेख को अपनी पत्रिका में प्रकाशित न करें।

हस्ताक्षर
वैद्यभूषण आयुर्वेदाचार्य पं, प्रभुदयाल व्यास
राजवैद्य, उज्जयिनी

तीसरी समीक्षा

जब म्हारे को थारी चिट्ठी मिली तो यूं लगा कि ये जीवन धन्य हो गया। भक्त सुदामा का जैसे स्वयं भगवान ने स्मरण कर लिया। मन का कोर–कोर किसी गेंदे के फूल की तरह खिल उठा। इस सेवक को याद करने के लिये शत्–शत् नमन।

हूं तो क्षमा चाहूँगा पर ये लेख जिस मानस ने लिखा हे वो तो म्हारे को गमना सा लागे है। अभी पपीता भूमि पर नहीं गिरेगा तो क्या थारे सर पे गिरेगा। और फिर क्यों गिरा का सीधा–सादा जवाब है कि पक गया था तो गिरा गया। पकने के बाद तो आम, जामुन, शहतूत, मडुवा, इमली सभी गिरे हैं, फिर पपीता गिर गया तो कौन सा तूफान आ गया।

असल में म्हारे को इस लेख में किसी गहरे षड्यंत्र की बू आवे है। लेखक बताना चाह रिया है कि राजकीय उद्यान में फल गिर–गिर के सड़ रिये हैं और कोई उनकी देखभाल करने वाला नहीं है। अब तमको क्या बताना कि कैसे रात–दिन एक करके मैंने उद्यान की सेवा की है। सारे फल और फूल तो म्हारे बच्चे की तरह हैं। मैं तो आपसे हाथ जोड़कर बिनती करूं हूं कि म्हारी खातिर इस लेख को अपनी पत्रिका में मत छाप दीजो।

हस्ताक्षर
भैरोमल भीखूमल
प्रमुख माली, राजकीय उद्यान

तीनों समीक्षाओं के साथ लेख की मूल प्रति लेखक को सधन्यवाद वापस भेज दी गई। इसके बाद बटुकशंकर जी ने इस लेख के साथ क्या सलूक किया इसका कोई रेकार्ड उज्जयिनी के इतिहास में प्राप्त नहीं होता। हां! दुनियाँ का इतिहास पढ़ने से ज्ञात होता है कि कुछ इसी तरह का सिद्धांत कुछ सौ वर्षों के पश्चात ईसाक न्यूटन नामक वैज्ञानिक ने अपने नाम से छपवाया था। चलो, देर आयद दरुस्त आयद। सिद्धांत भी प्रतिपादित हो गए और मानव सभ्यता का ज्यादा नुकसान भी नहीं हुआ। हां! नुकसान हुआ तो हम आज के वैज्ञानिकों का। यदि बटुकशंकर जी के सिद्धांत पहले ही छप जाते तो आज हम उनके नाम से एक अवार्ड प्रारंभ कर सकते थे। जिन पहुँचे हुए वैज्ञानिकों को दूसरे सभी अवार्ड मिल चुके हैं वह इस अवार्ड की लाइन में लग जाते। एक बार अवार्ड मिल जाता तो अवार्ड देने की समिति में आने का जुगाड़ भिड़ाते। किसी विश्वविद्यालय में उनके नाम से एक चेयर स्थापित की जाती ताकि रिटायरमेंट के बाद भी रबड़ी–मलाई का जुगाड़ होता रहे। बटुकशंकर शोध–संस्थान की स्थापना की जाती और इसमें अपने चहेते छात्रों को उचित स्थानों पर फिट किया जाता। अवार्ड और चेयर के लिये एक कोष की स्थापना होती। जिनकी पहुँच ऊपर तक होती वह अवार्ड की राशि बढ़वा लेते। जिन्हें अवार्ड नहीं मिलता वह धांधली की शिकायत करते। विपक्षी कोष में घोटाला होने का आरोप लगाते। पक्षधर इन आरोपों को बेबुनियाद बताकर उनका खण्डन करते। विज्ञान के कुशल प्रबंधक विज्ञान को राजनैतिक हस्तक्षेप और व्यक्तिगत द्वेषों से दूर रखने की अपील करते। इन सब बहस–मुबहिसों के बीच हमारा विज्ञान जीवंत रहता और निरंतर प्रगति करता। मुझे दुख है कि यह सब नहीं हो सका मगर राष्ट्रीय विज्ञान के प्रबंधकों से मेरी हार्दिक अपील है कि पिछली भूल को सुधारा जाए और माननीय श्री बटुकशंकर जी को प्रतिस्थापित किया जाए। इसके साथ ही कम से कम इतने वर्षों पश्चात अब तो हमारी विज्ञान पत्रिकाओं के रिव्यू सिस्टम को सुधार लिया जाए।

वैज्ञानिक
वाड़िया हिमालय भूविज्ञान संस्थान
देहरादून

कुछ त्रुटियाँ जो बड़ी वैज्ञानिक खोजों का कारण बनी

कुलदीप गैरोला

कोई भी व्यक्ति जानबूझ कर त्रुटि नहीं करना चाहता लेकिन फिर भी त्रुटियाँ हो जाती हैं। व्यक्ति अपने कार्य को सफलता के साथ सम्पन्न करना चाहता है लेकिन हमेशा ऐसा नहीं होता है। कई बार त्रुटि होने पर हम अपने आपको कोसते हैं कि हमसे त्रुटि क्यों हुई या क्यों हो रही है? सब कुछ ठीक से क्यों नहीं हो रहा इत्यादि-इत्यादि। त्रुटियाँ परेशान भी करती हैं व झुंझलाहट भी लाती हैं। कई बार त्रुटियाँ होती है। 'त्रुटियाँ बड़ी शिक्षक हैं जो हमें सिखाती हैं कि कार्य करने का यह रास्ता नहीं है।' क्या इस वाक्य में एक नया रास्ता नहीं छिपा लगता है?

त्रुटिपूर्ण समाधान बताता है कि यह रास्ता हमारी मंजिल की ओर नहीं जाता लेकिन एक नया रास्ता तो पता लग ही जाता है। लेकिन कई बार जो नया रास्ता होता है हम उसका आभास नहीं कर पाते क्योंकि हमारा ध्यान त्रुटि पर होता है, इसके उपयोग पर नहीं होता है, इसलिए त्रुटियों का अवलोकन व विश्लेषण आवश्यक है।

संयुक्त राज्य अमेरिका में चिकित्सीय त्रुटियों का अध्ययन कर इसे 1999 में यू0एस0 इंस्टीटयूट आफ मेडिसिन द्वारा सार्वजनिक किया गया। अंग्रेजी कवि एलग्जेंडर पोप ने एक बार कहा कि कुछ लोग कभी भी कुछ भी नहीं सीख पाते क्योंकि वे सबकुछ बहुत जल्दी समझ जाते हैं। इस तरह सीखने के लिए आवश्यक है कि हम त्रुटियाँ स्वीकारना, उनका अवलोकन करना, उनसे सीखना समझें और आपनाएँ। चिकित्सक इसे बड़ा शिक्षक समझते हैं यह कई बार नए उपचार के रास्ते सुझाता है।

जिज्ञासु व्यक्ति अक्सर त्रुटि करता है। वैज्ञानिक परम जिज्ञासु होते हैं जो एक तय वैज्ञानिक प्रक्रिया अपनाकर प्रयोग करते हैं। नवीन खोज करना चाहते हैं। इस दौरान उनसे त्रुटियाँ भी होती हैं।

वैज्ञानिक लुई पाश्चर ने एक बार कहा कि कई बड़े अविष्कार त्रुटिवश हुए अविष्कार हैं। यह एक तरह से त्रुटियों के उपयोग के उदाहरण हैं। इनमें से कई तो बड़े उद्यम बन गए हैं। कुछ आविष्कारों का वर्णन इस चर्चा के क्रम में किया जा रहा है।

कार्न फ्लेक्स–

यह डॉ0 जॉन कैलौग की खोज है। वह मिशिगन सैनेटोरियम में डॉक्टर थे। वह मरीजों हेतु पोषकतत्वों से भरपूर शाकाहारी भोजन की तलाश में थे। वह उबले गेहूँ के दाने रोलर पर डाल रहे थे। गेहूँ के दाने उछलकर गिर जाते थे। इन दानों को उन्होंने रोलर पर दबाया ताकि इसकी परतें बना सकें। लेकिन वे फूल जाते थे। इसी से प्रेरणा लेकर बाद में मक्की पर भी ऐसा ही प्रयोग किया। परिणामस्वरूप प्रसिद्ध कार्न फ्लेक्स की खोज हुई। कैलॉग बद्रर्स ने कार्न फ्लेक्स का व्यावसायिक उत्पादन कर आपार धन कमाया।

माइक्रोवेव ओवन

1945 में पेर्सी स्पेशनर मेगनाट्रॉन, वैक्यूम टयूब पर कार्य कर रहे थे। उन्होंने पाया कि इस दौरान उनके जेब में रखी टॉफी पिघल जाती है। यह कार्य उन्होंने पापकार्न के साथ भी किया तो पाया कि पॉपकार्न मुलायम हो रहा है जैसा कि गर्म करने पर होता है। उन्होंने देखा कि आस–पास गर्मी का कोई स्रोत नहीं है फिर भी टॉफी जेब में पिघल जाती है। विश्लेषण करने पर उन्होंने पाया कि अदृश्य किरणों के कारण वह पिघल रही थी। यह वास्तव में माइक्रो वेव थी। इस तरह बिना आग का चूल्हा अस्तित्व में आया। इस प्रकार जेब में टॉफी या कैण्डी रखने की त्रुटि से माइक्रोवेव ओवन का अविष्कार हुआ।

पेन्सीलिन

पेन्सीलिन एक एंटीबायोटिक है जो कि एलेक्जेण्डर फ्लेमिंग की खोज है। वर्ष 1928 में फ्लेमिंग एक बार पैट्रीडिश में कुछ बैक्टिरिया का अध्ययन कर रहे थे। प्रयोग के बाद वह बिना उसे साफ किए प्रयोगशाला छोड़कर चले गए। एक सप्ताह बाद लौटकर देखा कि पैट्रीडिश के आसपास फफूंद पैदा हो गई है और पाया कि जहाँ–जहाँ पर फफूंद मौजूद थी वहाँ पर बैक्टीरिया नहीं थे अर्थात फफूंद के सम्पर्क से बैक्टीरिया नष्ट हो गए थे। इस तरह फ्लेमिंग की इस त्रुटि से एन्टीबॉयोटिक दवा पैन्सीलीन की खोज हुई जिसने करोड़ों लोगों की जान बचाई व आगे के उच्च श्रेणी के एन्टीबायोटिक के रास्ते सुझाए।

रसगुल्ला

20वीं सदी के प्रारम्भ में रसगुल्ला नहीं था। स्वादिष्ट रसदार रसगुल्ला भी त्रुटि की ही देन है। कहा जाता है कि एक मिठाईवाले गंगूराम की कढ़ाई के सिरप में कुछ दुग्ध सामग्री छूट गई। दूसरे दिन उन्होंने उसे रस में डूबे गोले के रूप में पाया। जब इसे चखा तो स्वाद उन्हें बहुत अच्छा लगा। फिर क्या था? यह उन्होंने अन्य व्यक्तियों को भी खिलाया जो कि सभी को पसन्द आया और रसगुल्ला प्रसिद्ध हो गया और गंगूराम जी लखपति हो गए।

आलू के चिप्स

वर्ष 1853 में संयुक्त राज्य अमेरिका में न्यूयार्क के यून लेक लॉज को एक ग्राहक फ्रेंच फ्राइ – जो कि आलू की तली हुई छड़ी सी होती है – उसके घर भेजने का आर्डर दिया। रेस्टोरेन्ट के रसोइये ने फ्रेंच फ्राई भिजवाई तो ग्राहक ने वापस भेजी और कहा कि ये बहुत मोटी है। रसोइये ने फिर पतला कर भिजवाया। फिर भी ग्राहक ने कहा कि अभी भी यह मोटी हैं। गुस्से में रसोइये ने आलू के कागज जैसे पतले टुकड़े काटकर फ्राई कर भेजे। ग्राहक को बहुत पंसद आ गए और उसने फिर इसी का ऑर्डर दिया और इस प्रकार रसोइये के गुस्से ने आलू के चिप्स को जन्म दिया।

रिंकल–फ्री टाई

यह सैंट लुईस के हैरी वाटर्स की खोज है। एक बार उनके एक स्टेनोग्राफर ने उनके ऊपर त्रुटि से पानी डाल दिया। उन्हें किसी विशिष्ट व्यक्ति से मुलाकात करनी थी। जाने से पहले उनकी कमीज पर पानी गिर गया जिसे सुखाने पर सिलवट आ गई तथा सिलवटें हटाने हेतु प्रेस करवानी पड़ी। उनकी आर्थिक स्थिति अच्छी नहीं थी फिर भी उन्होंने समय पर पहुँचने के लिए टैक्सी ली जिसके ड्राइवर ने एक सिलवट पड़ी टाई पहनी थी। जल्दीबाजी में ड्राइवर टैक्सी गलत रास्ते पर ले गया और वापसी की हड़बड़ी में दुर्घटना हो गई जिसमें वाटर्स को चोट लग गई। जब उन्हें अस्पताल में ऑपरेशन के लिए बेहोशी की दवा दी गई तो बेहोशी से पहले उन्होंने देखा कि उनके लिए लाया गया रबड़ का रेस्पीरेटर बैग सिकुड़ता है और तुरन्त ठीक हो जाता है। बेहोशी में जाने से पहले उन्हें विचार आया कि ऐसा कपड़े में क्यों नहीं हो सकता है। इसके पश्चात उन्होंने रिंकल फ्री टाई का निर्माण किया जिसमें रबड़ का उपयोग किया गया। हैरी वाटर्स पर गलती से पानी गिरने के कारण कमीज पर आई सिलवटों ने एक नए आविष्कार सिलवट मुक्त कपड़े को जन्म दिया और इसके उत्पादन से उनकी आर्थिक स्थिति भी ठीक हो गई।

फैराडे के विद्युत–चुम्बकीय अभिप्रेरण के नियम

कहा जाता है कि माइकल फैराडे वर्ष 1831 में इस तथ्य का अध्ययन कर रहे थे कि विद्युत का चुम्बकीय प्रभाव होता है अर्थात विद्युत से चुम्बक तैयार किए जा सकते है तो चुम्बक से विद्युत क्यों नहीं तैयार की जा सकती। कहा जाता है कि कई तरह के प्रयोग अनेकों बार करने पर भी उनको विद्युत धारा उत्पन्न करने में सफलता नहीं मिली। एक दिन त्रुटिवश उन्होंने पाया कि एक कुण्डली के पास जिसमें धारा उपस्थिति मापक यंत्र गैल्वेनोमीटर लगा था एक चुम्बक गिरा तो अचानक धारा संकेतक हिला। उन्होंने इसे आसाधारण माना और पाया कि जब–जब कुण्डली और चुम्बक एक दूसरे के सापेक्ष गति में होते है तो विद्युत धारा उत्पन्न होती है। यही सिद्धांत टरबाइन में उपयोग होता है और इसी सिद्वांत के कारण आज दुनिया बिजली से चमक रही है।

यूरेका की कहानी

कहा जाता है कि वर्ष 256 ई० पू० में ग्रीक शहर सायराकौस को शत्रुओं से मुक्त कराने के बाद हाइरो राजा बना। उसने ईश्वर का धन्यवाद करने हेतु एक स्वर्णमुकुट बनावाने के लिए एक काबिल स्वर्णकार को दिया। लेकिन उसे सन्देह हुआ कि कहीं सोने में मिलावट तो नहीं है। उसने यह समस्या उस समय के गणितज्ञ 22 वर्षीय आर्कमिडिज के सामने रखी।

आर्कमिडिज परेशान हो गए और सोचने लगे कि कैसे पता करूँ कि मुकुट का सोना शुद्ध है। एक बार जब वह नहाने के लिए टब में उतरे तो उन्होंने पाया कि पानी टब से बाहर गिर रहा है। उन्हें इस घटना से एक विचार आया। वह उठे और बिना यह सोचे कि वह समुचित कपड़ों में नहीं है टब से कूदे और ''यूरेका–यूरेका'' ''मैने खोज लिया'' ''मैने पा लिया'' चिल्लाते हुए भागे। उन्होंने समझ लिया कि यदि मुकुट में मिलावट हुई तो मिलावटी मुकुट का आयतन समान भार के शुद्ध सोने के मुकुट से अधिक होगा। इस तरीके से उन्होंने सिद्ध कर दिया कि सुनार ने मिलावट की थी। कहा जाता है कि सुनार की यह त्रुटि बड़ी खोज का कारण बनी और उन्होंने तैरने के नियम बनाए। इस घटना का वर्णन रोमन वास्तुविद मारकुस विटरूनियस पोलो ने ई. पू. प्रथम शताब्दी में लिखी अपनी पुस्तक 'डे आर्किटेक्चुरा' में किया है।

आज आर्कमिडिज का यह सिद्धान्त पनडुब्बी, नाव, जहाज इत्यादि के निर्माण का आधार है।

सिलीकॉन पुट्टी

यह सिलिकॉन आधारित प्लास्टिक क्ले है जिससे खिलौने भी बनते हैं। यह जमीन से टकरा कर उछलती है। द्वितीय विश्व युद्ध के समय में जेम्स राइट रबड़ का विकल्प ढूंढने के लिए प्रयोग कर रहे थे। उन्होंने सिलिकॉन आयल में बोरिक एसिड डाला। यह जम गया और उसे वह परखनली से बाहर नहीं निकाल पाए। अचानक त्रुटिवश परखनली गिर गई ओर उसके अन्दर का जमा पदार्थ गिर कर उछला। उन्होंने उसे फिर गिराया। वह फिर काफी ऊँचा उछला। इस तरह सिलीकॉन पुट्टी का आविष्कार हुआ।

सैकरिन

यह कृत्रिम मीठा है जिसे हम चीनी के कम कैलोरी वाले विकल्प के रूप में प्रयोग कर रहे हैं। वैज्ञानिक कौनसटैंटाइन फाहलबर्ग एक बार प्रयोगशाला में प्रयोग के बाद हाथ साफ करना भूल गए। घर जाने पर उनकी पत्नी ने उन्हें ब्रेड खाने को दी तो उन्होंने अपने हाथ पर एक सुगन्ध महसूस की तथा अपने हाथ में रखी ब्रेड को मीठा पाया। इस पर उन्हें ध्यान आया कि खाने से पहले उन्होंने हाथ नहीं धोए हैं। प्रयोगशाला में जाकर परीक्षण करने पर उन्होंने यह पदार्थ पुनः तैयार किया। बाद के वर्षों में इसे पेटेन्ट करवाकर इसका व्यावसायिक उत्पादन किया। आज वह बहुत बड़ी खोजों में से एक है। कितना अच्छा हुआ कि उन्होंने अपने हाथ नहीं धोये थे।

आइए हम सब भी अपनी त्रुटियों के प्रति सचेत रहे व उनसे सीखें। पता नहीं कौन सी त्रुटि आविष्कार बन जाए।

विभागाध्यक्ष, शोध एवं मूल्यांकन
राज्य शैक्षिक प्रबंधन एवं प्रशिक्षण संस्थान (सीमैट), उत्तराखण्ड।

नेतृत्व या प्रौद्योगिकी में पुरूष–स्त्री भेदभाव नहीं होता। विज्ञान का इस बात से कोई संबंध नहीं होता कि ज्ञान का स्रोत क्या है। केवल सीखना और अधिक से अधिक ज्ञान प्राप्त करना ही महत्वपूर्ण है। यदि आप नई से नई चुनौतियों का सामना करने के लिये तैयार हैं तथा अपने अनुभवों से सीख प्राप्त कर रहे हैं तो वही आवश्यक है। नेतृत्व की क्षमता तथा विज्ञान की समझ एक दूसरे के साथ हाथ से हाथ मिल कर चलें तो प्रगति निश्चित है। वैज्ञानिक जब एक टीम के रूप में काम करते हैं तो प्रत्येक सदस्य अपनी जिम्मेदारी समझता है और परस्पर सहयोग के साथ काम करता है बिना यह देखे कि सहयोगी पुरुष है अथवा स्त्री। मैं जानती हूँ कि दायित्व किस प्रकार विभाजित किया जाय। अगर आपको विश्वास है कि आप अपने वैज्ञानिक ज्ञान का उचित उपयोग कर सकते हैं तो आप सफलता के शिखर पर निश्चित रूप से पहुंचेंगे। आज विद्यार्थियों के बीच विज्ञान एक लोकप्रिय विषय है और यही तकनीकी विकास का मूल आधार है। विद्यालयों तथा महाविद्यालयों में अधिक से अधिक छात्र तथा छात्राएँ विज्ञान पढ़ने में रुचि दिखा रहे हैं।

टेसी थॉमस
(भारतीय महिला मिसाइल वैज्ञानिक)
(टाइम्स ऑफ इंडिया, 25 अप्रैल, 2012 को प्रकाशित साक्षात्कार से)

विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी विभाग

समाचार-पत्रक
जनवरी से मार्च २०१२

उत्तराखण्ड राज्य विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी परिषद

महानिदेशक की कलम से

'विज्ञान परिचर्चा' का वर्ष 2012 का प्रथम अंक (माह जनवरी–मार्च, 2012) पाठकों के सम्मुख प्रस्तुत है। उत्तराखण्ड राज्य विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी परिषद द्वारा विज्ञान एवं तकनीकी के विस्तार, प्रचार–प्रसार एवं विज्ञान को लोकोपयोगी व उत्तराखण्ड राज्य की आवश्यकताओं के अनुरूप विज्ञान के उपयोग के लिये किये जा रहे प्रयासों का संक्षिप्त विवरण इसमें प्रकाशित किया जा रहा है। पूर्व प्रकाशित अंकों पर प्राप्त पाठकों की प्रतिक्रियायें उत्साहवर्धक है।

विगत तिमाही में परिषद द्वारा पेयजल से संबधित शोध परियोजनाओं के अंतर्गत कार्यशालाओं का आयोजन, तकनीकी विकास एवं तकनीकी हस्तांरण हेतु विभिन्न देशों के विशेषज्ञों से विचार–विमर्श किया गया। इस अवधि में 28 फरवरी, 2012 को राष्ट्रीय विज्ञान दिवस ओ0एन0जी0सी0, ऑडिटोरियम देहरादून में एवं दिनांक 22 अप्रैल, 2012 को विश्व पृथ्वी दिवस सीमा सुरक्षा बल, ऑडिटोरियम, सीमाद्वार, देहरादून में बड़े पैमाने पर आयोजित किये गये जिसमें प्रदेश स्थित विभिन्न शैक्षणिक, वैज्ञानिक व अन्य संस्थाओं की सहभागिता रहीं। ग्लोबल वार्मिंग व पर्यावरण के समक्ष आसन्न चुनौतियों को देखते हुए ग्रीन टैक्नोलाजी के उपयोग की आवश्यकता को गम्भीरता से अनुभव किया जा रहा है। परिषद द्वारा गुरूकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय, हरिद्वार में इस विषय पर एक अंतराष्ट्रीय परिचर्चा का आयोजन 11 फरवरी, 2012 को तथा गढ़वाल विश्वविद्यालय के साथ मिलकर तीन दिवसीय इंडो यू0एस0 कार्यशाला का आयोजन किया गया। परिषद कार्यालय में स्थापित बौद्धिक सम्पदा केन्द्र की ओर से प्रदेश के औद्योगिक क्षेत्रों में जागरूकता, सलाह व सूचना के प्रसार हेतु निरंतर कार्य किये जा रहे हैं। परिषद द्वारा निर्माणाधीन विज्ञान धाम में भाभा परमाणु संस्थान के सहयोग से बार्क पवेलियन की स्थापना हेतु संस्थान से सहमति प्राप्त करना एक महत्वपूर्ण उपलब्धि है।

उत्तराखण्ड विज्ञान शिक्षा एवं अनुसंधान केन्द्र (यूसर्क) एवं कुमायूँ विश्वविद्यालय द्वारा गणितीय विज्ञान के उत्कृष्ट केन्द्र की सफलतापूर्वक स्थापना प्रसन्नता का विषय है। केन्द्र द्वारा पोषित परियोजना के अंतर्गत सीमैप द्वारा औषधीय एवं सगंध पौधों पर आधारित सातवें व आठवें उद्यमिता प्रशिक्षण कार्यक्रम इस अवधि में सफलता पूर्वक सम्पन्न हुये है।

वर्ष की आगामी तिमाही में परिषद द्वारा अनेक महत्वपूर्ण कार्यक्रम प्रस्तावित है। राज्य की वैज्ञानिक संस्थाओं एवं वैज्ञानिक समुदाय के सहयोग से विज्ञान एवं तकनीकी सम्पन्न राज्य की अवधारणा को पुख्ता करने के प्रयास अनवरत जारी है।

आशा है पूर्ववत् आपका सहयोग, सुझाव व सम्मतियाँ हमें प्राप्त होती रहेंगी।

डा० राजेन्द्र डोभाल
महानिदेशक

इस संस्करण में

- जल गुणतत्ता प्रबंधन पर कार्यशाला
- आर०बी०एफ० तकनीक एवं जल गुणवत्ता प्रबंधन विषय पर कार्यशाला का आयोजन
- इंस्पायर योजना के तहत आइज ऑफ ब्लाइंड को डीएसटी ने सराहा
- पर्यावरण संरक्षण के लिए ग्रीन केमिस्ट्री के सिद्धान्तों पर जोर
- विज्ञान धाम में बनेगाा बार्क पवेलियन
- ग्रीन टेक्नोलॉजी पर विचार मंथन
- राष्ट्रीय विज्ञान दिवस
- सूक्ष्म लघु उद्योगों में जागरूकता हेतु कार्यशाला
- आई०पी०आर० विषय पर कार्यशालाओं का आयोजन
- कुमाऊँ विश्वविद्यालय के एस. एस.जे. परिसर अल्मोड़ा में गणितीय विज्ञान के उत्कृष्ट केन्द्र की स्थापना
- जल संबंधी शोधों पर जर्मन विशेषज्ञों से किया मंथन
- सातवें एवं आठवें औषधीय एवं संगध पौधों पर आधारित उद्यमिता प्रशिक्षण कार्यक्रम का आयोजन

जल गुणवत्ता प्रबंधन पर कार्यशाला

विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी विभाग, नई दिल्ली ने दिनांक 07 जनवरी, 2012 को उत्तराखण्ड राज्य विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी परिषद, जल संस्थान व डी0ए0वी0 महाविद्यालय के सौजन्य से 'वर्कशॉप एंड ब्रेन स्टोमिंग सेशन आन वाटर क्वालिटी मैनेजमेंट एंड रिवर बैक फिल्ट्रेशन' विषय पर कार्यशाला आयोजित की।

भारत सरकार के वाटर टेक्नोलॉजी इनीशिएटिव कार्यक्रम के तहत ग्राफिक एरा विश्वविद्यालय में आयोजित कार्यशाला में पाल्यूशन रिसर्च इंस्टीट्यूट हरिद्वार के अपर महाप्रबंधक तथा विभागध्यक्ष डा0 खालिद जहीर ने जल गुणवत्ता प्रबंधन के विभिन्न पहलुओं के बारे में जानकारी दी। कार्यक्रम में केन्द्रीय भूमि जल परिषद के उत्तरांचल रीजन के क्षेत्रीय निदेशक, डा0 आर0सी0 जैन ने केन्द्रीय भूमि जल परिषद द्वारा उत्तराखण्ड में भूमि जल की मात्रा एवं गुणवत्ता के बारे में जानकारी दी। राष्ट्रीय जल विज्ञान संस्थान, रूड़की के निदेशक, डॉ0 आर0डी0 सिंह ने वाटर क्वालिटी मैनेजमेंट एंड रिवर बैंक फिल्ट्रेशन विषय पर तकनीकी जानकारी दी। उन्होंने अपने व्याख्यान में राष्ट्र के समक्ष जल गुणवत्ता तथा मात्रा की समस्या को दूर करने के उपायों की जानकारी दी व शिक्षकों–वैज्ञानिकों से इस क्षेत्र में आगे आने का आह्वान किया। कार्यक्रम में यूकॉस्ट के महानिदेशक, डा0 राजेन्द्र डोभाल ने अपने संबोधन में राज्य में जल स्त्रोतों की गुणवत्ता के प्रबंधन एवं रिवर बैंक फिल्ट्रेशन तकनीक द्वारा उत्तराखण्ड में विभिन्न स्थानों पर किए जा रहे वैज्ञानिक प्रयासों के विषय में जानकारी दी। उन्होंने यूकॉस्ट द्वारा राज्य के पहले जल गुणवत्ता मानचित्र के बारे में भी विस्तार से जानकारी दी।

आर०बी०एफ० तकनीक एवं जल गुणवत्ता प्रबंधन विषय पर कार्यशाला का आयोजन

दिनांक 4 फरवरी, 2012 को वाटर टेक्नोलॉजी इनीशिएटिव कार्यक्रम के अंतर्गत उत्तराखण्ड राज्य विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी परिषद (यूकॉस्ट) उत्तराखण्ड जल संस्थान, व डी0ए0वी0 पीजी कालेज के संयुक्त तत्वाधान में 'वाटर क्वालिटी मैनेजमैंट एंड रीवर बैंक फिल्ट्रेशन विषय पर कार्यशाला व ब्रेन स्टोमिंग सत्र का आयोजन किया गया।

यूनिवर्सिटी ऑफ पेट्रोलियम एंड एनर्जी स्टडीज (यूपीईएस) में आयोजित कार्यशाला में जल गुणवत्ता प्रबंधन के विभिन्न पहलुओं पर विस्तृत चर्चा की गई। इस दौरान विशेषज्ञों ने जल गुणवत्ता प्रबंधन में रीवर बैंक फिल्ट्रेशन (आर0बी0एफ0) को कारगर तकनीक बताया। साथ ही इस दिशा में हो रहे शोधकार्यों के बारे में जानकारी दी गई।

कार्यक्रम के उद्घाटन सत्र में बतौर मुख्य अतिथि राष्ट्रीय जल विज्ञान संस्थान (रूड़की) के निदेशक, डा0 आर0डी0 सिंह ने जल की गुणवत्ता बढ़ाने के लिए संचालित किये जा रहे कार्यक्रमों व शोध द्वारा उचित मात्रा में गुणवत्तायुक्त जल उपलब्ध कराने पर जोर दिया। साथ ही जल गुणवत्ता के क्षेत्र में रीवर बैंक फिल्ट्रेशन तकनीकी को लेकर अंतरराष्ट्रीय व राष्ट्रीय स्तर पर चल रहे प्रयासों की जानकारी दी।

यूकॉस्ट के महानिदेशक, डा0 राजेन्द्र डोभाल ने उत्तराखण्ड के विभिन्न जलस्त्रोंतों की गुणवत्ता, प्रबंधन व आरबीएफ तकनीकों पर राज्य में हो रहे शोधकार्यों की जानकारी दी।

इंस्पायर योजना के तहत आइज ऑफ ब्लाइंड को डीएसटी ने सराहा

भारत सरकार के विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी विभाग (डीएसटी) ने एसजीआरआर मोथरोवाला के छात्र आयुष गर्ग के मॉडल 'आइज ऑफ ब्लांइड को उत्कृष्ट मॉडल के रूप में चयनित कर प्रशस्ति पत्र प्रदान किया गया हैं।

पूरे देश से डीएसटी के इंस्पायर योजना के तहत 14–16 अगस्त तक दिल्ली के प्रगति मैदान में मॉडल प्रतियोगिता आयोजित की गई थी। इसमें देश के करीब 750 स्कूली छात्र–छात्राओं ने भाग लिया था। उत्तराखण्ड में यूकॉस्ट इस योजना का क्रियान्वयन कर रहा है। जिले के बाद राज्य स्तरीय प्रतियोगिता में आयुष का 'आइज ऑफ ब्लांइड' मॉडल सर्वश्रेष्ठ चुना गया था। इसके बाद राष्ट्रीय प्रतियोगिता के लिए दिल्ली भेजा गया एवं वहां भी डीएसटी ने 20 मॉडलों में से 'आइज ऑफ ब्लाइंड' को उत्कृष्ट मॉडल के रूप में चुना है।

पर्यावरण संरक्षण के लिए ग्रीन केमिस्ट्री के सिद्धातों पर जोर

गढ़वाल विश्वविद्यालय की ओरसे ग्रीन केमिस्ट्री के महत्व विषय पर आयोजित तीन दिवसीय इंडो यूएस कार्यशाला में पर्यावरण को दूषित होने से बचाने के लिए ग्रीन केमिस्ट्री के सिद्धांतों को दृष्टिगत रखकर कार्य पर जोर दिया गया। देश–विदेश से देहरादून पहुंचे विभिन्न विश्वविद्यालयों के प्रोफेसरों ने कहा कि पर्यावरण को सुरक्षित रख ग्लोबल वार्मिंग से बचा जा सकता हैं। परिषद के महानिदेशक, डा0 राजेन्द्र डोभाल ने बताया कि जिला स्तर पर मोबाइल वैन के माध्यम से युवा वैज्ञानिकों को पर्यावरण सरंक्षण और ग्रीन केमिस्ट्री की आवश्यक जानकारियां उपलब्ध कराई जानी चाहिए।

विज्ञान धाम में बनेगा बार्क पवेलियन

परमाणु विज्ञान के क्षेत्र में अनुसंधान करने वाले हर छात्र के मन में मुंबई स्थित भाभा परमाणु अनुसंधान केन्द्र को करीब से देखने की चाहत होती है। जल्दी ही उनकी यह तमन्ना दून में ही पूरी हो जाएगी। अगले एक या दो वर्ष में झाझरा में स्थापित हो रहे विज्ञान धाम में इस केन्द्र की झलक मॉडल के स्वरूप में देखी जा सकेगी।

इस संबंध में उत्तराखण्ड राज्य विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी परिषद (यूकॉस्ट) और भाभा परमाणु अनुसंधान केन्द्र (बार्क) के बीच करार हो चुका है। बार्क ने यूकॉस्ट द्वारा स्थापित हो रहे विज्ञान धाम में बार्क पवेलियन स्थापित करने की सहमति प्रदान कर दी हैं बार्क के प्रमुख वरिष्ठ सलाहकार डा0 एन रामामूर्ति, डा0 यू0 श्रवण कुमार, आर0के0 सिंह और विज्ञान धाम के परियोजना अधिकारी डा0 बी0पी0 पुरोहित के बीच हुई वार्ता में अन्य कई मुद्दों पर भी सहमति बनी।

ग्रीन टेक्नोलॉजी पर विचार मंथन

दुनिया को बचाने के लिए किस तरह ग्रीन टेक्नोलॉजी (हरित तकनीक) का उपयोग किया जा सकता है, इस पर देश–विदेश के विशेषज्ञों ने मंथन किया। वक्ताओं ने कहा कि कार्बन उत्सर्जन से पर्यावरण को सबसे ज्यादा नुकसान पहुंच रहा है। गुरूकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय में दिनांक 11 फरवरी, 2012 से 'ग्रीन टेक्नोलॉजी फॉर एन्वायरमेंटल रिहेबिलीटेशन' विषय पर शुरू हुए अंतराष्ट्रीय सेमिनार के पहले दिन विशेषज्ञों ने 93 शोध पत्र पढ़े। सेमिनार में उत्तराखण्ड राज्य विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी परिषद के महानिदेशक डा0 राजेन्द्र डोभाल ने कहा कि दुनिया भर में इस समय पर्यावरण को बचाना सबसे बड़ी चुनौती है। तमाम देशों के वैज्ञानिक इस समय पर्यावरण संरक्षण के लिए शोध और प्रयोग कर रहे हैं कार्बन उत्सर्जन से पर्यावरण को सबसे ज्यादा नुकसान पहुंच रहा है। इस दिशा में ग्रीन टेक्नोलॉजी की मदद से पर्यावरण संरक्षण किया जा सकता है। बुल्गारिया के पूर्व पर्यावरण उपमंत्री प्रो0 वेंकों वेषकों ने कहा कि पर्यावरण संरक्षण के लिए अंतराष्ट्रीय स्तर पर एक नीति बनाए जाने की जरूरत है।

राष्ट्रीय विज्ञान दिवस

उत्तराखण्ड राज्य विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी परिषद ने दिनांक 28 फरवरी, 2012 को राष्ट्रीय विज्ञान दिवस, ओ0एन0जी0सी के ए0एम0एन0 घोष ऑडिटोरियम में आयोजित किया, इसमें डॉल्फिन इंस्टीट्यूट, डी0ए0वी0, डी0बी0एस0, एस0जी0आर0आर0 (पी0जी0) कॉलेज व भारतीय पेट्रोलियम संस्थान समेत विभिन्न शिक्षण संस्थानों के 400 से अधिक छात्र–छात्राओं ने प्रतिभाग किया। यूकॉस्ट के महानिदेशक डा0 राजेन्द्र डोभाल ने कहा कि विज्ञान के ज्ञान से ही देश तरक्की की राह पर आगे बढ़ सकता है। भारतीय पेट्रोलियम संस्थान के निदेशक, ए0एम0ओ0 गर्ग ने ''रिटेल क्षेत्र में प्रयुक्त ईंधन के वाष्पीकरण'' व गढ़वाल विवि के पूर्व कुलपति प्रो0 ए. एन. पुरोहित ने छात्रों को ''प्रकृति के स्वभाव'' पर व्याख्यान दिया। इस अवसर पर ओ0एन0जी0सी0 के अधिशासी निदेशक, श्री शैलेन्द्र दत्ता ने भी अपने जीवन से कुछ विज्ञान संबधित अनुभव बाँटे।

सूक्ष्म लघु उद्योगों में जागरूकता हेतु कार्यशाला

परिषद एवं एल0एस0एम0 पी0जी0 कॉलेज पिथौरागढ़ के संयुक्त तत्वधान में एल0एस0एम0 पी0जी0 कॉलेज पिथौरागढ़ में दिनांक 21 मार्च, 2012 को 'सूक्ष्म एवं लघु उद्योंगो हेतु बौद्धिक सम्पदा की उपयोगिता' नामक विषय पर कार्यशाला का आयोजन किया गया। कार्यशाला का शुभारंभ, डा0 डी0एस0 पांगती, प्रधानाचार्य, एल0एस0एम0 पी0जी0 कॉलेज, पिथौरागढ़ द्वारा किया गया तथा आई0पी0आर0 विषय पर अपने विचार प्रस्तुत किए। कार्यशाला के मुख्य अतिथि डॉ सरिता खण्डका, वरिष्ठ वैज्ञानिक अधिकारी, यूकॉस्ट द्वारा परिषद की विभिन्न परियोजनाओं पर प्रकाश डाला गया तथा परिषद के अन्तर्गत बौधिक सम्पदा सुविधा केन्द्र के बारे में बताया। कार्यशाला में श्री गौरव कुमार ओझा, प्रमुख पेटेन्ट एनालिस्ट, सी0पी0के0 ग्लोबल, नई दिल्ली, श्री मनोज कुमार सिंह, परियोजना अधिकारी, बौधिक सम्पदा सुविधा केन्द्र, यूकॉस्ट देहरादून, श्री चंचल सिंह बोहरा, प्रबन्धन जिला उद्योग केन्द्र, पिथौरागढ़ द्वारा बौद्विक सम्पदा की उपयोगिता पर व्याख्यान दिये गये। कार्यशाला में डा0 एन0 पुनेठा, जिला समन्वयक, यूकॉस्ट, जिला पिथौरागढ़, डा0 आर0ए0 सिंह, एसोसिएट प्रोफेसर, एल0एस0एम0 पी0जी0 कॉलेज, पिथौरागढ़, डा0 ए0के0 शुक्ला, हैड, हिन्दी विभाग, एल0एस0एम0 पी0जी0 कॉलेज, पिथौरागढ़ आदि मौजूद थे। कार्यशाला में एम0एस0एम0ई0 क्षेत्र से आये 100 प्रतिभागियों ने प्रतिभाग किया तथा उनसे आई0पी0आर0 से सम्बंधित प्रश्नावली को भरवाया गया।

आई०पी०आर० विषय पर कार्यशालाओं का आयोजन

परिषद, प्रौद्योगिकी सूचना, पूर्वानुमान एवं मूल्यांकन परिषद (टाईफैक), नई दिल्ली तथा राजकीय (पी0जी0) कॉलेज, कर्णप्रयाग, चमोली के संयुक्त तत्वाधान में आई0पी0आर0 विषय पर एक दिवसीय कार्यशाला का आयोजन दिनांक 27 मार्च, 2012 को किया गया। कार्यक्रम का उद्घाटन मुख्य अतिथि प्रो0 एस0एस0 रावत, निदेशक, यूनिवर्सिटी कैम्पस ने किया। कार्यशाला के प्रथम तकनीकी सत्र में श्री सी0एम0 गैन्द, पैटेंट एटॉर्नी, नई दिल्ली द्वारा "IPR & their Management" तथा श्री राजेश दीक्षित, एसिस्टेंट कान्ट्रोलर ऑफ पैटेंट एण्ड डीजाइनस ऑफिस, नई दिल्ली द्वारा "Patenting System in India" विषय पर व्याख्यान दिया गया। कार्यशाला के द्वितीय सत्र में श्री एस0के0 पंगासा, के0एन0एस0, पार्टनर गुडगांव द्वारा "Novelty & Inventiveness पद Patent" तथा डा0 डी0पी0 उनियाल, वरिष्ठ वैज्ञानिक अधिकारी, यूकॉस्ट द्वारा पी0आई0सी0 सेन्टर तथा परिषद के कार्यों की विस्तार से जानकारी दी। कार्यक्रम में लगभग 145 प्रतिभागियों ने प्रतिभाग किया।

उत्तराखण्ड राज्य विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी परिषद, प्रौद्योगिकी सूचना, पूर्वानुमान एवं मूल्यांकन परिषद (टाईफैक), नई दिल्ली तथा एच0एन0बी0 गढ़वाल विश्वविद्यालय, श्रीनगर के संयुक्त तत्वाधान में यू0एस0आई0सी0, कैम्पस, चौरास परिसर में आई0पी0आर0 विषय पर एक दिवसीय कार्यशाला का आयोजन दिनांक 28 मार्च, 2012 को किया गया। कार्यक्रम का उद्घाटन मुख्य अतिथि प्रो0 एस0एस0 रावत, निदेशक, यूनिवर्सिटी कैम्पस ने किया। कार्यशाला के प्रथम तकनीकी सत्र में श्री सी0एम0 गैन्द, पैटेंट एटॉर्नी, नई दिल्ली द्वारा "IPR & their Management" तथा डा0 राजेश दीक्षित, एसिस्टेंट कान्ट्रोलर ऑफ पैटेंट एण्ड डीजाइनस ऑफिस, नई दिल्ली द्वारा "Patenting System in India" विषय पर व्याख्यान दिया गया। कार्यशाला के द्वितीय सत्र में श्री एस0के0 पंगासा, के0एन0एस0, पार्टनर गुडगांव द्वारा "Novelty & Inventiveness in Patent" तथा यूकॉस्ट के वरिष्ठ वैज्ञानिक अधिकारी डा0 डी0पी0 उनियाल द्वारा पी0आई0सी0 सेन्टर तथा परिषद के कार्यों की विस्तार से जानकारी दी। कार्यक्रम में लगभग 145 प्रतिभागियों ने प्रतिभाग किया।

कुमाऊँ विश्वविद्यालय के एस.एस.जे. परिसर अल्मोड़ा में गणितीय विज्ञान के उत्कृष्ट केन्द्र की स्थापना

उत्तराखण्ड राज्य विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी कॉग्रेस 2011 के गणितीय विज्ञान विषयक विचार मंथन सत्र की संस्तुतियों के आलोक में उत्तराखण्ड विज्ञान शिक्षा एवं अनुसंधान केन्द्र (यू–सर्क) द्वारा कुमाऊँ विश्वविद्यालय के सोवन सिंह जीना परिसर अल्मोड़ा, के गणित विभाग में गणितीय विज्ञान के उत्कृष्ट केन्द्र की स्थापना जनवरी 2012, में की गई है। इस केन्द्र को भारतीय उच्चतर गणित परिषद् द्वारा प्राध्यापकों हेतु दो अनुदेशात्मक स्कूल आयोजित करने की अनुमति मिली है अब तक यह स्वीकृति देश में स्थित किसी भी विश्वविद्यालय (शोध संस्थानों को छोड़कर) को नहीं मिली है। अपनी स्थापना के बहुत अल्प समय में ही केन्द्र द्वारा 20 फरवरी, 2012 से 3 मार्च, 2012 तक भारतीय परमाणु ऊर्जा विभाग द्वारा निधिबद्ध बीजगणितीय अनुदेशात्मक स्कूल सफलता पूर्वक आयोजित किया गया, जिसमें टाटा फाउंडेशन, मुम्बई, हरीश चन्द्र शोध संस्थान इलाहबाद, चेन्नई गणित संस्थान, भारतीय विज्ञान शिक्षण एवं शोध संस्थान मोहाली के अनुदेशकों ने देश भर से आये हुए गणित प्राध्यापकों का ज्ञानवर्धन किया। इस स्कूल में उत्तराखण्ड के सात प्राध्यापकों सहित अल्मोड़ा परिसर के स्नातकोत्तर विद्यार्थियों एवं शोध छात्रों ने प्रतिभाग किया।

जल संबंधी शोधों पर जर्मन विशेषज्ञों से किया मंथन

उत्तराखण्ड राज्य विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी परिषद, जल संस्थान एवं जर्मनी के विशेषज्ञों ने आयोजित बैठक में उत्तराखण्ड में चल रहे शोधों पर मंथन किया। बैठक में जर्मन विशेषज्ञों ने वैकल्पिक ऊर्जा शोध परियोजना पर नवीनतम तकनीक का हस्तांतरण किये जाने पर सहमति व्यक्त की।

महानिदेशक विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी परिषद डा0 राजेन्द्र डोभाल ने कहा कि परिषद, जल संस्थान व यूनिवर्सिटी ऑफ एप्लाइड सांइसेज, जर्मनी विगत दो वर्षों से ''डेवलेपमेंट ऑफ रिवर बैंक फिल्ट्रेशन इन हिल रिजन ऑफ उत्तराखण्ड'' परियोजना पर कार्य कर रहे हैं। परियोजना के तहत रिवर बैंक फिल्ट्रेशन व शुद्ध पेयजल की जर्मन वैज्ञानिकों द्वारा संचालित नवीनतम तकनीकों को समझा व क्रियान्वित किया गया है। शोध परियोजना अंतिम चरण में है। शीघ्र ही लोगों को पीने के लिए शुद्ध पानी उपलब्ध होगा। बैठक में दीर्घ अवधि की शोध परियोजनाओं पर विचार–विमर्श किया गया।

उत्तराखण्ड विज्ञान शिक्षा एवं अनुसंधान केन्द्र (यू–सर्क)

सातवें एवं आठवें औषधीय एवं संगध पौधों पर आधारित उद्यमिता प्रशिक्षण कार्यक्रम का आयोजन

उत्तराखण्ड विज्ञान शिक्षा एवं अनुसंधान केन्द्र (यू–सर्क) द्वारा वित्तपोषित परियोजना के अन्तर्गत आयोजित सातवें उद्यमिता प्रशिक्षण कार्यक्रम का आयोजन दिनांक 12–13 जनवरी, 2012 को सी.एस.आई.आर. केन्द्रीय औषधीय एवं सगंध पौधा संस्थान–(सीमैप) शोध केन्द्र, पन्तनगर ऊधमसिंह नगर में किया गया। इस कार्यक्रम में उत्तराखण्ड के विभिन्न जिलों अल्मोड़ा, हरिद्वार, बागेश्वर, देहरादून, पिथौरागढ़, नैनीताल एवं ऊधमसिंह नगर के 21 प्रतिभागियों ने भाग लिया। प्रशिक्षणार्थियों को उत्तराखण्ड राज्य के लिये आर्थिक रूप से महत्वपूर्ण औषधीय एवं सगंध पौधों की उन्नत खेती, उनका प्रसंस्करण एवं मूल्यांकन तथा उनकी बिक्री के सम्बन्ध में विशेष रूप से प्रशिक्षित किया गया एवं औषधीय व सगंध पौधों पर आधारित हर्बल प्रोडक्ट्स निर्माण की तकनीक एवं प्रोजेक्ट तैयार करने के सम्बन्ध में भी विस्तार से बताया गया।

इसी क्रम में उत्तराखण्ड विज्ञान शिक्षा एवं अनुसंधान केन्द्र (यू–सर्क) द्वारा वित्तपोषित आठवें औषधीय एवं संगध पौधों पर आधारित उद्यमिता प्रशिक्षण कार्यक्रम का आयोजन दिनांक 20–21 मार्च, 2012 को सी.एस.आई.आर. शोध केन्द्र, पुराड़ा, जिला बागेश्वर में किया गया इस आयोजन में उत्तराखण्ड के विभिन्न जिलों अल्मोड़ा, हरिद्वार, बागेश्वर, टिहरी गढ़वाल, और नैनीताल से आये 29 प्रतिभागियों द्वारा मेन्था की विभिन्न किस्मों, सतावर, नीबूघास, रोजमैरी, कालमेघ, सर्पगन्धा, पायरेथ्रम, गुलाब एवं जिरेनियम आदि औषधीय एवं संगध पौधों के उत्पादन एवं प्रसंस्करण विषयों पर विशेषज्ञों द्वारा प्रशिक्षण प्रदान किया गया।

INTELLECTUAL PROPERTY FACILITATION CENTRE (IPFC)

सूक्ष्म, लघु एवं मध्यम उद्यम (MSMEs) मंत्रालय द्वारा स्वीकृत (सहायता प्राप्त), प्रदेश के प्रथम बौद्धिक सम्पदा सुविधा केन्द्र (IPFC) की स्थापना, उत्तराखण्ड राज्य विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी परिषद (UCOST) उत्तराखण्ड, देहरादून में की जा चुकी है। आई0पी0एफ0सी0 (IPFC) सूक्ष्म, लघु एवं मध्यम उद्यम (MSMEs) के अन्तर्गत पेटेन्ट फाइलिंग, ट्रेडमार्क रजिस्ट्रेशन, इंडस्ट्रियल डिजाईन इत्यादि सम्बन्धि कार्य करेगा। साथ ही यह केन्द्र पेटेन्ट, ट्रेडमार्क, कॉपीराइट तथा इंडस्ट्रियल डिजाईन इत्यादि समबन्धि सुझाव लोगों को देगा एवं इनसे समबन्धित कानूनी सलाह भी इस परियोजना का मुख्य लक्ष्य है। इस केन्द्र के मुख्य उद्देश्य एवं सेवांए निम्नवत् है–

1. बौद्धिक सम्पदा अधिकार (IPR) विषयक जागरूकता एवं प्रोत्सहन हेतु कार्याशालाओं का आयोजन करना।
2. MSMEs क्षेत्र के लिए IPR की जरूरत का आकलन कर उसके अनुरूप सेवाएं उपलब्ध करवाना।
3. पेटेन्ट फाइलिंग व आनलाईन सर्च की सुविधा प्रदान करना।
4. पेटेन्ट, कॉपीराईट, डिजाईन एवं ट्रेडमार्क रजिस्ट्रेशन हेतु प्रोत्साहित करना।
5. सूक्ष्म लघु एवं मध्यम उद्योगों को पेटेन्ट समबन्धी सलाह देना तथा पेटेन्ट टूल की जानकारी प्रदान करना।
6. MSMEs क्षेत्र में एक नेटवर्क स्थापित करना जिससे बौद्धिक सम्पदा का सदुपयोग किया जा सकें।

चूँकि बौद्धिक सम्पदा 'मानव बुद्धि का एक उत्पाद है' यह केवल विधिवत स्वामी द्वारा या विधिवत स्वामी की अनुमति से ही इस्तेमाल किया जा सकता है।

TECHNOPRENEUR OUTREACH CENTRE (TePP)

वैज्ञानिक एवं औद्योगिक अनुसंधान विभाग (डी0एस0आई0आर0), भारत सरकार, नई दिल्ली द्वारा परिषद को Technopreneur Outreach Centre (TUC) स्वीकृत किया गया है। उक्त सेन्टर हेतु परिषद राज्य के जन–मानस तथा विद्यार्थियों (विशेषकर बी0टेक0 एवं एम0टेक0 डिजर्टेसन) से नवीन तकनीकों एवं आविष्कारों को व्यवसायिक प्रोत्साहन देने हेतु प्रस्ताव आमंत्रित करती है। उक्त केन्द्र के चार वर्ग 1) Micro Technopreneurship Support 2) TePP Project Fund 3) Seamless Scale-up Support for TePP एवं 4) Supplementary TePP Fund के अन्तर्गत निर्धारित प्रारूप पर प्रस्ताव आमंत्रित किये जाते हैं। प्रस्ताव बनाने सम्बन्धी जानकारी डी0एस0आई0आर0, नई दिल्ली की वेवसाईट http://www.dsir.gov.in एवं परिषद की वेबसाईट http://ucost.in पर उपलब्ध है।

पहल के समाचार

पहल

मॉस कार्यक्रम के अन्तर्गत खगोलीय ज्ञान

राष्ट्रीय विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी संचार परिषद्, विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी विभाग भारत सरकार के तत्वधान में पीपुल्स एसोशिएशन ऑफ हिल एरिया लॉन्चर्स (पहल) संस्था द्वारा कुमाँऊ क्षेत्र के विभिन्न विद्यालयों में (मोबाइल प्लेनेटेरियम फॉर एस्ट्रोनॉमिकल अण्डरस्टैण्डिंग अमंग स्टूडेंण्ट्स) के द्वितीय चरण का संचालन किया गया। कार्यक्रम में परियोजनाधिकारी श्री वसन्त कुमार भट्ट ने बताया कि चल तारामण्डल के प्रति विद्यार्थियों में अत्यन्त कौतूहल रहा। भारी संख्या में प्लेनेटेरियम के भीतर प्रोजेक्टर एवं एल.सी.डी. के माध्यम से ब्रह्माण्ड ग्रह, नक्षत्र एवं तारों के बारे में विद्यार्थियों को प्रारम्भिक जानकारी प्रदान की गई। इस बीच कई स्थानों पर रात्रि में खुले आसमान में भी तारों की स्थितियाँ बताई गई। श्री भट्ट ने कहा कि भविष्य में 'पहल' संस्था के माध्यम से रात्रिकालीन आकाश दर्शन कार्यक्रम आम नागरिकों एवं विद्यार्थियों के लिए आयोजित किये जाने की योजना है।

विज्ञान दिवस पर पहल द्वारा कार्यक्रम

28 फरवरी को राष्ट्रीय विज्ञान दिवस के अवसर पर 'पहल' संस्था द्वारा पिथौरागढ़ के कई विद्यालयों के माध्यम से वैज्ञानिक जागरूकता कार्यक्रमों का आयोजन किया गया। प्रमुख कार्यक्रम मानस एकेडमी में आयोजित किया गया। कार्यक्रम में पोस्टर, निबन्ध एवं भाषण प्रतियोगिता का आयोजन किया गया तथा विजयी प्रतिभागियों को पुरस्कृत किया गया। कार्यक्रम को सम्बोधित करते हुए राष्ट्रीय बाल विज्ञान कांग्रेस के राज्य समन्वयक डॉ0 अशोक कुमार पन्त ने विद्यार्थियों का आह्वान किया कि वैज्ञानिक सोच पैदा कर के ही हम सर्वांगीण विकास की कल्पना को साकार कर सकते हैं। इस अवसर पर आयोजित विज्ञान प्रदर्शनी में विद्यार्थियों ने अपने–अपने मॉडल प्रस्तुत किये जिनका मूल्यांकन श्री प्रमोद कुमार पाण्डेय, श्री गौरव कापड़ी एवं श्री ब्रजेश पाण्डेय ने किया। इस अवसर पर विद्यालय के प्रशासक श्री बसन्त कुमार भट्ट एवं प्रधानाचार्या श्रीमती प्रीति सिंह ने पहल संस्था द्वारा विज्ञान लोकप्रियकरण पर आधारित कार्यक्रमों के आयोजनों की सराहना की।

'सृजन' का विमोचन समारोह

वर्ष 2011 में राष्ट्रीय बाल विज्ञान कांग्रेस के राज्य एवं राष्ट्रीय स्तर पर प्रतिभाग करने वाले बाल वैज्ञानिकों के शोध अनुभव पत्रों के सारांशों का संकलन ''सृजन'' के रूप में तैयार कर 28 मार्च को विमोचन किया गया। 'सृजन' का विमोचन शिक्षाविद् श्री बसन्त कुमार भट्ट ने किया जिसमें 'पहल' संस्था के सभागार में आयोजित इस समारोह में विज्ञान लोकप्रियकरण से जुड़े लोगों ने भाग लिया। श्री भट्ट ने 'सृजन' को बाल वैज्ञानिकों की सृजनात्मकता का एक दस्तावेज बताते हुए इस प्रयास की सराहना की। श्री प्रमोद कुमार पाण्डेय, सचिव, अकादमिक समिति ने बाल विज्ञान कांग्रेस के माध्यम से विद्यार्थियों के लिये तैयार किये गए इस मंच हेतु 'पहल' संस्था की सराहना की। राज्य समन्वयक डॉ0 अशोक कुमार पन्त ने बताया कि आगामी वर्षों से सृजन में शोध सारांशों के अतिरिक्त पूर्व बाल वैज्ञानिकों के लेख भी प्रकाशित किये जाने की योजना है।

शुक्र पारगमन पर कार्यशाला में सहभागिता

इस सदी की सबसे महत्वपूर्ण खगोलीय घटना शुक्र पारगमन हेतु पहल संस्था द्वारा तैयारी की जा रही है। हाल ही में यू कॉस्ट द्वारा राष्ट्रीय कार्यशाला में प्रतिभाग हेतु श्री बसन्त कुमार भट्ट को पंजाब यूनिवर्सिटी, चण्डीगढ़ हेतु नामित किया गया। श्री भट्ट ने अवगत कराया कि शुक्र का पारगमन एक दुर्लभ खगोलीय घटना है जिसे देख पाना हर पीढ़ी के लिए सम्भव नहीं है। असल में यह घटना सूर्य ग्रहण से मिलती–जुलती है। शुक्र ग्रह जब हमारी पृथ्वी और सूर्य के बीच एक ही तल पर आ जाता है तो पारगमन की घटना घटित होती है। शुक्र ग्रह पृथ्वी से बहुत दूरी पर है। और सूर्य की तुलना में बहुत छोटा है इसलिए उसकी छाया तो पृथ्वी को ढ़क नहीं पाती पर वह सूर्य के गोले के भीतर से गुजरता हुआ अवश्य दिखाई देता है। यह खगोलीय घटना एक सदी के बाद आठ वर्ष के अन्तराल में दो बार घटित होती है। सन् 2004 के बाद इस घटना की पुनरावृत्ति 6 जून 2012 को प्रातः 4 बजे से 10 बजे के बीच होगी। किन्तु हम इसे सूर्योदय के बाद ही देख पाऐंगे। इस नजारे को देखने के लिए अच्छे फिल्टर की सहायता लेनी आवश्यक है क्योंकि नंगी आँखों से इसे देखने का प्रयास आँखों के लिए हानिकारक हो सकता है। 6 जून 2012 के बाद शुक्र पारगमन की घटना का साक्षी बनने के लिए धरती वासियों को दिसम्बर 2017 तक का इन्तजार करना पड़ेगा।

6 जून 2012 हेतु भी आम लोगों के लिए संस्था द्वारा यू–कास्ट के माध्यम से तैयारी की जा रही है।

पहल के आगामी कार्यक्रम

22 अप्रैल 2012
विश्व पृथ्वी दिवस का आयोजन

11 मई 2012
राष्ट्रीय प्रौद्योगिकी दिवस पर व्याख्यान

20 मई 2012
शुक्र पारगमन पर क्षेत्रीय कार्यशाला का आयोजन

22 मई 2012
अन्तर्राष्ट्रीय जैव विविधता वर्ष पर विद्यार्थियों हेतु प्रतियोगिताओं का आयोजन

5 जून 2012
विश्व पर्यावरण दिवस का आयोजन एवं विशेष व्याख्यान मालाका आयोजन

6 जून 2012
''शुक्र पारगमन'' अवलोकन हेतु समन्वयन

मई द्वितीय सप्ताह– राष्ट्रीय बाल विज्ञान कांग्रेस हेतु राज्य स्तरीय अभिमुखीकरण कार्यशाला का आयोजन

99वीं भारतीय विज्ञान काँग्रेस (भाविकाँ)

अभूतपूर्व विज्ञान–महाकुंभ

दिनेश चन्द्र शर्मा

मुख्य विषय :
"सांभावेशित अभिनवीकरण हेतु विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी –महिलाओं की भूमिका"

(साइंस एण्ड टेक्नोलॉजी फॉर इन्नोवेशन – रोल ऑफ विमेन)

99वीं भारतीय विज्ञान काँग्रेस के रुप में वैज्ञानिकों का अभूतपूर्व महांकुभ विगत 3 से 7 जनवरी 2012 को कलिंगा इंस्टीट्यूट ऑफ इण्डस्ट्रियल टेक्नालॉजी 'किट विश्वविद्यालय' के विशाल एवं सुविधाजनक प्रांगण में सम्पन्न हुआ। इस आयोजन में देश और विदेश के लगभग 15,000 वैज्ञानिकों ने सहभगिता की। इसके अतिरिक्त किट विश्वविद्यालय के लगभग 15,000 छात्र, आदिवासियों हेतु संचालित विद्यालयों से लगभग 15,000 छात्र, ओडिसा राज्य के विभिन्न विद्यालयों से बड़ी संख्या में स्कूली बच्चे, राष्ट्रीय व अन्तर्राष्ट्रीय निकायों के प्रतिनिधियों सहित एक लाख से भी अधिक आंगतुक इस अवसर पर किट विश्वविद्यालय में पधारे जिनमें 8 नोबल पुरस्कार विजेता भी थे।

यह भव्य आयोजन किट विश्वविद्यालय एवं नेशनल इंस्टीट्यूट ऑफ साइंस एजूकेशन एण्ड रिसर्च (एनआईएसईआर) द्वारा ओडिसा सरकार के सहयोग से आयोजित किया गया। राज्य को पहले भी दो बार यह सुवसर प्राप्त हो चुका है। प्रथम बार 49वीं भाविकाँ रावेन्शॉ कालेज कटक में सन् 1962 में आयोजित हुई तथा दूसरी बार सन् 1977 में 64वीं भाविकाँ आयोजित करने का सौभाग्य प्राप्त हुआ उत्कल विश्वविद्यालय भुवनेश्वर को।

उद्घाटन समारोह

99वीं भाविकाँ का शानदार उद्घाटन समारोह 3 जनवरी के प्रातः आरंभ हुआ। इस महत्वपूर्ण अवसर पर वैज्ञानिकों व प्रतिभागियों को सम्बोधित करते हुये देश के प्रधानमंत्री डा0 मनमोहन सिंह ने कहा कि सामान्य तौर से ऐसा माना जाता है कि विज्ञान अमीरों की समस्याओं के समाधान के लिये ही पूर्व स्थापित है जबकि गरीबों की समस्याओं की उपेक्षा करता है– जो कि बहुत ज्यादा हैं। अतः हमें वर्तमान समय की आवश्यकताओं के अनुरुप प्रासंगिक वैज्ञानिक समाधान प्रस्तुत करने हैं। उन्होंने औद्योगिक क्षेत्रों में पारितंत्र के लिये मित्रवत शोध और विकास में निवेश बढ़ाने पर बल दिया। प्रधानमंत्री ने बतलाया कि उनकी सरकार ने विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में उच्च शिक्षा हेतु नये संस्थानों की स्थापना की हैं। 11 वीं पंचवर्षीय योजना में शोध एवं विकास पर सार्वजनिक निवेश 20–25 प्रतिशत प्रतिवर्ष की दर से बढ़ा है तथा विश्वविद्यालयों में शोध और वैज्ञानिक श्रेष्ठता के लिये सैकड़ों योजनाओं को धन उपलब्ध करवाया गया है। साथ ही इंस्पायर योजना के अन्तर्गत अनेक छात्रवृत्तियां प्रदान की जा रही हैं। इन प्रयासों के बेहतर परिणाम भी मिल रहे है।

इस अवसर पर ओडिसा के मुख्यमंत्री श्री नवीन पटनावक ने विज्ञान के क्षेत्र में राज्य की महान विभूतियों के योगदान का जिक्र करते हुये कहा कि सामंत चन्द्र शेखर ऐसे प्रतिभाशाली विद्वान थे जो कि पहाडों की ऊँचाई को साधारण छड़ी से मापते थे। मुख्यमंत्री ने राज्य के पूर्व मुख्यमंत्री श्री बीजू पटनायक का उल्लेख करते हुये कहा कि उन्होंने विज्ञान शिक्षा को बढ़ावा देने के लिये कई शिक्षा संस्थानों की श्रृंखला स्थापित की तथा वैश्विक स्तर पर विज्ञान को बढ़ावा देने के लिये प्रतिष्ठित यूनेस्को–कलिंग पुरस्कार को प्रारम्भ किया। विश्व के कई महान वैज्ञानिक इस पुरस्कार से सम्मानित हो चुके हैं।

केन्द्रीय विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी मंत्री श्री विलास राव देशमुख ने देश के प्रथम प्रधानमंत्री पं0 जवाहर लाल नेहरु के कथन – "केवल विज्ञान से ही हम अपनी भूख, गरीबी, अस्वच्छता, निरक्षरता एवं अंधविश्वास जैसी समस्याओं का निवारण कर सकते हैं" का उल्लेख करके अपनी बात आरंभ की। श्री देशमुख ने कहा कि विज्ञान के सहारे ही देश ने बहुमुखी प्रगति की है। हरित क्रांति, उच्च उत्पादक किस्मों तथा कृषि में यंत्रीकरण के द्वारा ही देश आत्म निर्भर बना है।

उद्घाटन समारोह में ओडिया के राज्यपाल श्री एम.सी. भण्डारे, केन्द्रीय योजना, विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी तथा पृथ्वी विज्ञान राज्यमंत्री डा0 अश्वनी कुमार, भाविकाँए की जनरल अध्यक्ष प्रो0 गीता बाली एवं प्रो0 अशोक कोलारकर ने भी मंच की शोभा बढ़ाई। इस अवसर पर वर्ष 2011–12 के लिये 32 वैज्ञानिकों को भाविकाँए पुरस्कार भी प्रदान किये गये।

तकनीकी सत्र

इस विशाल आयोजन में विषय वार पृथक–पृथक प्लेनरी संशन्स, पेनल डिस्कशन, विशेष व्याख्यान, लोकप्रिय व्याख्यान व परिचर्चाओं हेतु तकनीकी सत्र हुये। 8 नोबल विजेताओं ने भी व्याख्यान दिये।

कुछ महत्वपूर्ण व्याख्यान :–

डा0के0 कस्तूरी रंगनः– (प्रख्यात वैज्ञानिक एवं सदस्य–योजना आयोग)

"विज्ञान नीति निर्माण" विषय पर अपने व्याख्यान में डा0 कस्तूरीरंगन ने कहा कि 12वीं पंचवर्षीय योजना में विज्ञान नीति द्वारा देश कृषि, शिक्षा, स्वास्थ व समाज कल्याण के विकास के लिये प्रयत्नशील है। यह भी प्रयास किये जा रहे है कि निर्माण क्षेत्र में रोजगार के अवसर पैदा किये जायें तथा युवा प्रतिभाओं का संरक्षण खोज एवं विकास किया जाये साथ ही शोध में सहभागिता बढ़ाकर औद्योगिक व अकादमिक क्षेत्रों में परस्पर सम्बंधों कों बढ़ावा दिया जाये।

डा0 वी0एम0 कटोचः– (सचिव, स्वास्थ एवं शोध विभाग, भारत सरकार एवं महानिदेशक, इण्डियन काउंसिल ऑफ मेडिकल रिसर्च–आईसीएमआर)

"सभी के लिये स्वास्थ" हमारा लक्ष्य है। डा0 कटोच ने डा0 मनमोहन सिंह की "मानसून लांचिंग सिस्टम" पर की गयी टिप्पणी की प्रशंसा करते हुये कहा कि हमें 'जलवायु परिवर्तन' व 'अर्थ सिस्टम' जैसे मुद्दों को महत्व देना होगा। आपके कहा कि एक स्वतंत्र नीति कार्यन्वित होनी चाहिये जिससे ढाँचागत पुनर्निर्माण का कार्य आरंभ हो।

डा0 सगीर के ब्रह्मचारीः– (डायरेक्टर जनरल, काउंसिल ऑफ साइंटिफिक एण्ड

इंड स्ट्रियल रिसर्च सीएसआईआर) अब तक बहुत सारी योजनायें व नीतियां बनायी गयी है लेकिन इनके जमीनी स्तर पर कार्यान्वयन व जन सहभागिता की आवश्यकता है। आपने कहा कि उच्च मूल्यों एवं श्रेष्ठता के साथ विश्वविद्यालयी व्यवस्था के नये मार्गों की आवश्यकता है। हमें विज्ञान और प्रौद्योगिकी में समन्वय स्थापित करके काम आगे बढ़ाना है।

डा0 एम0 राजशेखरन पिल्लई:– (उपकुलपति, इंदिरागांधी मुक्त विश्वविद्यालय, नई दिल्ली) डा0 पिल्लई ने विज्ञान नीति निर्माण में चुनौतियों का जिक्र करते हुये कहा कि असंतुलित अभिनवीकरण समाज के लिये उपयोगी नहीं होता। उन्होंने बताया कि विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी के लाभ आज भी आम आदमी की पहुँच के बाहर हैं।

डा0 बालाकृष्ण पिशुपति :– (चेयरमेन, नेशनल बायोडायवर्सिटी अथारिटी–एन.बी.ए) साइंस ऑफ बायोडायवर्सिटी एवं पॉलिसी ऑफ बायोडायबर्सिटी के बीच जुड़ाव व समन्वय होना चाहिये। आपने इस बात का भी समर्थन किया कि नीतियाँ सार्वजनिक व निजी भागीदारी से ही बनायी जानी चाहिये।

डा0टी0 रामासामी :– (सचिव, विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी विभाग, भारत सरकार) कि आज समय आ गया है जब हमें "विज्ञान के लिये जन नीतियों" के स्थान पर "आम जन के लिये विज्ञान नीतियों" के तथ्य का समझकर परिवर्तन करने हैं। उन्होंने कहा कि विज्ञान नीति निर्माण में युवाओं को महत्व दिया जाता है।

डा0 आर0 चिदंबरम् :– (प्रमुख वैज्ञानिक सलाहकार, भारत सरकार) "रिसर्च एण्ड **इनोवेशन**: मेनी डायमेंशन्स" विषय पर व्याख्यान देते हुये डा0 आर चिंदबरम ने कहा कि भारत में विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी कार्यक्रमों में बेसिक तथा एप्लाइड रिसर्च के अभिनवीकरण के साथ सन्तुलन भी कायम होना चाहिये। उन्होंने कहा कि देश में तीव्र औद्योगिक विकास और सामाजिक विकास इस बात का सबूत है कि विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी के कारण ग्रामीण क्षेत्रों में भी तेजी से परिवर्तन हो रहे हैं। डा0. चिदंबरम ने कहा कि विभिन्न उद्यमों को उच्च तकनीकी के नवीकरण हेतु मजबूती से शोध एवं विकास की आवश्यकता महसूस हो रही है। उसके लिये उद्योगों और अकादमिक संस्थाओं के बीच परस्पर परिचर्चायें व सम्बंध आवश्यक हैं। उन्होंने "शोध–विकास–वितरण की श्रृंखला का जिक्र करते हुये कहा कि औद्योगिक विकास में 'विकास एवं शोध" कड़ी कमजोर है जबकि ग्रामीण विकास में 'वितरण' आड़े आ रहा है। अतः इन समस्याओं से उद्योग व अकादमिक संस्थायें परस्पर मिलकर ही निपट सकते हैं और ग्रामीण विकास हेतु प्रौद्योगिकी में सुधार लाया जा सकता है।

डा0 वाई बी रामाकृष्णा :– (चेयरमैन, बायोफ्यूल बोर्ड, गवर्नमेंट ऑफ कर्नाटक) आज ऊर्जा का दुरुपयोग हो रहा हैं। कृषि अवशेषों व गोबर से बनने वाली बायोगैस को ग्रामीण क्षेत्रों में तथा ठोस व तरल कचरे से बनने वाली बायोगैस को शहरी क्षेत्रों में बढ़ावा दिया जाना चाहिये। इससे अल्पमात्रा में ही प्रदूषण होता है। आपने यह भी कहा कि हमारे पास काफी मात्रा में नवीकरणीय ऊर्जा भी है लेकिन हम इसका उपयोग नहीं कर पा रहे हैं।

डा0 शिर्नेश बी0 केदारे :– (आई.आई.टी–मुम्बई) सौर ऊर्जा को सोलर थर्मल एनर्जी के रुप में इस्तेमाल करना नवीकरणीय ऊर्जा के उपयोग का सबसे आसान तरीका है। इससे हम देश के एक बड़े भाग में ऊर्जा की कमी को पूरा कर सकते हैं।

इस अवसर पर देश एवं विदेश के प्रख्यात वैज्ञानिकों ने 'हैल्थ केयर विदाउट बॉर्डर्स–द टेलीमेडिसिन वे, मेटरनल एण्ड चाइल्ड हैल्थ केपर–न्यूट्रिशन सिक्योरिटी, क्लाइमेट चेंज एण्ड फूड सिक्योरिटी, फ्रन्टिअर्स इन एटमासफेअरिक साइंस, टेकिंग न्यूरोडिजेनरेटिव डिजीजेज, एन बी सी टेक्नालॉजीज फॉर आर्म्ड फोर्सेस एण्ड सिविलियन्स, ग्रीन बिल्डिंग टेक्नालॉजीज, नेनोसांइस एण्ड इमेजिंग, एनीमल अल्टरनेटिव्स इन टीचिंग एण्ड टेंस्टिंग, क्लीन एनर्जी फ्राम रिन्यूएबल सोर्सेस, केंसर स्टेम सेल, रिसेंट एडवांसेस इन फार्मास्युटिकल साइंसेस, रुरल लिवलीहुड एण्ड लाइवस्टॉक मेनेजमेंट तथा एनर्जी एण्ड सस्टेनेबिलिटी फॉर ए ग्रीनर टुमारो उपविषयों के अन्तर्गत विभिन्न शीर्षकों पर बड़े उपयोगी व्याख्यान दिये।

विज्ञान प्रदर्शनी

आयोजन के प्रथम दिवस ही केन्द्रीय विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी तथा पृथ्वी विज्ञान मंत्री श्री विलास राव देशमुख ने 'किट स्टेडियम में विशाल 'विज्ञान प्रदर्शनी' का उद्घाटन किया। इस अवसर पर 99वीं भाविकाँ के मुख्य संरक्षक एवं किट विश्वविद्यालय के संस्थापक डा0 ए. सांगत तथा जनरल प्रसीडेंट प्रो0 गीता बाली भी उपस्थित थीं। प्रदर्शनी 7000 वर्ग मी0 क्षेत्र में लगायी गयी थी। इसमें 700 प्रदर्शकों एवं 150 संगठनों ने भागीदारी की थी।

डिफेंस रिसर्च एण्ड डेवलपमेंट आर्गेनाइजेशन (डीआरडीओ) ने अपनी उपलब्धियों व गतिविधियों को अपने स्टॉल पर दर्शाया था। इसमें एरोनॉटिक्स, आर्मामेन्ट्स, काम्बेट वेहिकल एण्ड इंजीनियरिंग, इलेक्ट्रानिक्स एण्ड कम्प्यूटर सिस्टम, लाइफ साईसेंस, मेटेरियल्स, मिसाइल्स, नेवल सिस्टम्स, एनबीसी डिफेन्स एण्ड टेक्नालॉजीस और एल.आई.सी आदि बिन्दुओं को चित्रों एवं माडल्स के माध्यम से दर्शाया गया था।

भारतीय **चुंबकत्व** संस्थान (**नवी मुंबई**) के स्टॉल पर उनकी वेधशालाओं एवं आँकड़ा विश्लेषण, उच्चतर वायुमण्डलीय अध्ययन, भूभौतिकीय चुंबकत्व, अंकीय आयनोसोड एवं अंतरिक्ष मौसम के सम्बंध में जानकारी दी गयी थी। इस्टीट्यूट आफ मिनरल्स एण्ड मेटेरियल्स टेक्नोलॉजी (भुवनेश्वर) ने सस्ता टेराफिल वॉटर फिल्टर बनाने की विधि दिखायी जिसमें रेत, मिट्टी व लकड़ी का उपयोग किया गया था। जल संसाधन मंत्रालय भारत सरकार के अन्तर्गत सैण्ट्रल वॉटर कमीशन ने अपने स्टॉल पर अपने संगठनात्मक ढाँचे, गतिविधियां, उपलब्धियां, सिंचाई विकास, टेकनो–ट्कॉनोमिक एप्रेजल ऑफ प्रोजेक्ट्स तथा प्रोजेक्ट्स की मॉनीटरिंग की जानकारी दी थी। बायोटेक्नोलॉजी इ्ण्डस्ट्री रिसर्च असिस्टेंस प्रोग्राम–बीआईआरपी (बायोटेक्नोलॉजी विभाग, भारत सरकार) की ओर से लगाये गये स्टॉल में प्रोग्राम की विस्तृत जानकारी दी गयी थी जिनमे – स्मॉल बिजनेस इनोवेशन रिसर्च इनिशिएटिव टेक्नालॉजी डेबलपमेंट प्रोग्राम, इम्प्रूब्ड एग्रीकल्चरल प्रोडक्टिविटी, एफोर्डेबल हेल्थ केयेर, नेचुरल रिसोर्सेस डाटा मेनेजमेंट सिस्टम, विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी विभाग (भारत

सरकार) के स्टॉल पर स्कीम जेनरेटर युटिलिटी, ज्यो वेबसर्विस प्रोटोटाइप वेब बेस्ड सिस्टम फॉर हेल्थ, इंटीग्रेटेड बायोजियोडाटावेस, ट्रेनिंग एण्ड यूअर अवेयरनेस व मेनेजमेंट स्ट्रक्चर के विषय में बतलाया गया था।

इसी प्रकार राजीव गांधी जल कृषि केन्द्र (नागपट्टनम जिला, तमिलनाडु) यंग इण्डिया फिल्मस (चेन्नई, क्लेरिटी इण्डिया लर्निंग सोल्युशन्स (चेन्नई), राष्ट्रीय अस्थि विकलांग संस्थान (कोलकाता), नेशनल मिशन ऑन बम्बू एप्लीकेशन, कोकोनट डेवलपमेंट बोर्ड, एन्थ्रोपोलोजीकल सर्वे आफ इण्डिया, नेशनल काउंसिल ऑफ साइंस म्यूजियम (एनसीएसएम), गुजरात काउंसिल ऑन साइंस एण्ड टेक्नीलॉजी, कर्नाटक स्टेट बायोफ्यूल डेवलपमेंट बोर्ड, रीजनल साइंस सेंटर (भुवनेश्वर) तथा किट विश्वविद्यालय के विशाल स्टॉल्स पर ज्ञानबर्धक व उत्साहवर्धक जानकारियां दी गयीं थीं।

प्रथम महिला विज्ञान काँग्रेस

मुख्य विषय –

"विज्ञान में महिलायें एवं महिलाओं के लिये विज्ञान"

99वीं भाविकाँ के एक भाग के रुप में प्रथम महिला विज्ञान काँग्रेस भी आयोजित हुई जिसका उद्घाटन संयुक्त राष्ट्र अमेरीका में भारत की राजदूत श्रीमती निरुपमा राव ने किया। इसकी संयोजक थीं श्रीमती वीना गोस्वामी। अपने उद्घाटन भाषण में निरुपमा राव ने सहभागी महिला वैज्ञानिकों को उत्साहित करते हुये महिला शिक्षा को बढ़ावा देने तथा उनकी विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी में सहभागिता बढ़ाने पर जोर दिया। इस अवसर पर डा0 ग्रीटचेन कलोंगी (ए डी गी फॉर नेचुरल साइंस युनेस्को) प्रो0 गीता बाली, डा0 डी0 पुरंदेश्वरी (केन्द्रीय मानव संसाधन विकास राज्यमंत्री, भारत सरकार) एवं डा0 विजय लक्ष्मी सक्सेना (जनरल सेक्रेट्री, साईटिफिक एफियर्स–99वीं भाविकाँ) ने भी संबोधित किया। इस आयोजन में व्याख्यानां व प्रस्तुतिकरण के चार सत्र हुये। दो सत्रों में "विज्ञान में महिलायें" तथा दो सत्रों में "महिलाओं के लिये विज्ञान" विषयों को केन्द्रित करके व्याख्यानों व प्रस्तुतिकरण हुये। इनमें मुख्य रुप से देश की प्रख्यात 17 महिला वैज्ञानिकों ने अपना व्याख्यान प्रस्तुत किया, जिनमें श्रीमती गीता बर्धन (डायरेक्टर, एडीआरआईएन इसरो, डा0 चित्रा राजगोपाल (एसोसिएट डायरेक्टर सीएफईईएस) डा0 कमर रहमान जैसी महिला वैज्ञानिक शामिल थीं। महिला विज्ञान काँग्रेस में पोस्टर सेशन भी आयाजित हुआ। समापन सत्र मे ओडिसा सरकार की महिला एवं बाल विकास विभाग की कमीश्नर कम सेक्रेटरी आरती आहुजा भी पधारी।

5वाँ विज्ञान संचारक सम्मेलन

99वीं भाविकाँ के एक भाग के रुप में 5वाँ विज्ञान संचारक सम्मेलन भी आयोजित किया गया जिसकी संयोजिका थीं डा0 गीता सत्पथी (एसोसिएट डीन, स्कूल ऑफ ह्यूमनिटीज, किट विश्वविद्यालय)

आयोजन के दूसरे दिन 4 जनवरी 2012 को सम्मेलन का उद्घाटन हुआ जिसमें डा0 गीता सत्पथी ने कार्यक्रम के लक्ष्यों के विषय में बताया। राष्ट्रीय विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी संचार परिषद् (विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी विभाग, भारत सरकार के प्रमुख डा0 बी0पी0 सिंह ने सत्र को विशेष सम्बोधन दिया। उद्घाटन समारोह के मुख्य अतिथि थे प्रो0डी0 बाल सुब्रम्हण्यम (निदेशक, रिसर्च डिवीजन, एल.वी.पी.ई.आई, हैदराबाद)। कार्यक्रम में सारांश पुस्तिका का विमोचन भी हुआ। साईस टाइम्स न्यूज, व्यूज (शाहजहाँपुर, उ0प्र0 के सम्पादक श्री इरफान ह्यूमेन को डा0बी. सी.देव स्मारक पुरस्कार से सम्मानित किया गया। श्री ह्यूमेन ने इस अवसर पर अपना प्रस्तुतिकरण भी किया। सम्मेलन में मुख्य रुप से 18 व्याख्यान/प्रेजेंटेशन ही पोस्टर प्रजेंटेशन हुये। मुख्य रुप से प्रदीप के कुंदल (नागपुर), सचिन शर्मा (जयपुर), श्री निकुंज बिहारी साहू (भुवनेश्वर) प्रो0 एच.आर. जयभ्भा (बंगलौर) डा0 ज्योत्स्ना शर्मा (गाजियाबाद) ने अपने प्रस्तुतिकरण दिये। 5 जनवरी को आयोजित समापन सत्र में प्रो0 चितंरजन दास (चेयरमेन, स्टेट एन्वार्येमेंट इम्पेक्ट असेसमेंट अथारिटी, ओडिसा) भी पधारे।

बाल विज्ञान काँग्रेस

वैज्ञानिकों के इस भहाकुंभ में दस्तक देने के लिए बाल वैज्ञानिक भी पहुँचे थे। इन 80 बाल विज्ञाानियों ने राष्ट्रीय बाल विज्ञान काँग्रेस से तथा 30 बाल विज्ञानियों ने एन सी ई आर टी से आकर अपने अभिनव कार्यों का प्रदर्शन किया। महत्वपूर्ण बात यह रही कि ओडिसा राज्य के विभिन्न स्कूलों से लगभग 90,000 छात्र/छात्रायें इन बाल वैज्ञानिकों के अभिनव कार्यों को देखने और उनके उत्साहवर्धन हेतु पहुँचे।

बाल विज्ञान काँग्रेस के उद्घाटन समारोह में मुख्य अतिथि के रुप में भारत के पूर्व राष्ट्रपति एवं प्रख्यात वैज्ञानिक डा0 ए.पी. जे. अब्दुल कलाम भी पधारे। अपने प्रेरणास्पद उद्बोधन में डा0 कलाम ने बाल विज्ञानियों को "अपने सपनों को पंख दो और ऊँचा उड़ो" का मंत्र दिया। उन्होंने बच्चों से विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में अभिनव कार्य करने का आवाहन किया। उन्होंने कहा कि बच्चे एक बड़ी शक्ति हैं तथा उनका उर्वर मस्तिष्क पृथ्वी पर एक शक्तिशाली संसाधन है। डा0 कलाम ने बच्चों को प्रोत्साहित करते हुये कहा कि यदि तुम अपने में महान लक्ष्य सामने रखोगे और उसके लिये ज्ञान प्राप्त करके प्रयास करोगे तो कोई कारण नहीं है कि तुम उसे प्राप्त न करो।

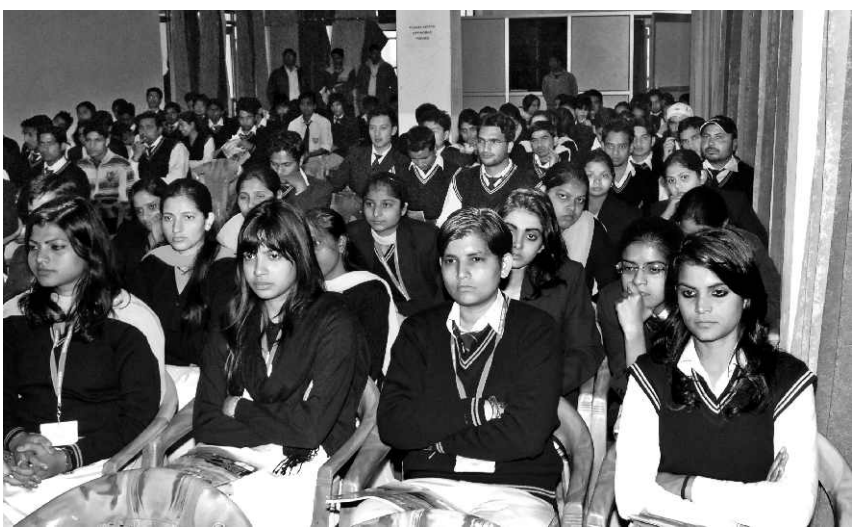

बाविकाँ में विद्युत परिषद इण्टर कालेज, पनकी, कानपुर, (उ0प्र0) के छात्र गौरव प्रजापति ने "द एनलिसिस ऑफ मेटेरियल्स यूज्ड इन मेकिंग सोयल आइडल्स फॉर इको फ्रेंडली डेवलपमेंट इन द एरिया" विषय पर अपना शोध पत्र प्रस्तुत किया। गवर्नमेंट सीनियर सेकेण्ड्री स्कूल बखेटा, रोहतक, (हरियाणा) के छात्र जोगेन्द्र कुमार ने "फसलों के अवशेष जलाये जाने से जैवविविधता पर पड़ने वाले दुष्प्रभाव एवं इसका प्रबंधन" विषय पर किये अपने अध्ययन का व्यौरा प्रस्तुत किया। गवर्नमेंट सी.से. स्कूल कल्याण, पटियाला (पंजाब) के छात्र गुरविन्दर सिंह ने "विकलांगों के लिये मेंकनिकल स्टडी टेबल पर प्रोजेक्ट तैयार किया था जबकि बी.जे.ई.एम. स्कूल (भुवनेश्वर) की छात्रा **स्वोस्तदा** प्रधान ने अपने समूह साथियों के साथ" भुवनेश्वर नगर के आस–पास भूमि उपयोग के बदलते तरीकों पर अपना शोध पत्र प्रस्तुत किया था।

यंग सांइटिस्ट अवार्ड 2011–2012

इस अवसर पर देश भर के 16 युवा वैज्ञानिकों को यंग साईटिस्ट अवार्ड 2011–12 से सम्मानित किया गया। ये वैज्ञानिक हैं:– विज्ञा केसरी (गुवाहाटी), नितिन पाठक (भोपाल), शबनम् (अमृतसर), महेश सुन्दरराजन (मुंबई) पौलागी घोष (जादवपुर विश्वविद्यालय), एस.पायोल (तेजपुर), सुरभि दीपाली (भुवनेश्वर), देवाराती चक्रवर्ती (कोलकाता), आशुतोष कुमार दूबे (कानपुर), दिलीप कुमार (केरल), सुचन्दन कायल (आईआईटी खड़गपुर), राजेन्द्र सिंह (लखनऊ), सजीत मुखर्जी (कोलकाता), राजेश के नायर (मुम्बई), रश्मि सिंह (भदोही), जमीदूखर (शिलांग),

सांस्कृतिक कार्यक्रमों का आयोजन

दिनभर परिचार्चाओं व व्याख्यानों में व्यस्त रहे वैज्ञानिकों व प्रतिनिधियों के मनोरजन के लिये प्रतिदिन संध्या समय उच्च कोटि के रंगारंग सांस्कृतिक कार्यक्रमों का आयोजन किया गया था। जिनमें प्रिंस ग्रुप, उदयशंकर ग्रुप, हरिहर ग्रुप, कमलेश भाई एच.पटेल, नित्यानंद ग्रुप, आर्टिक्यूलेट ग्रुप ने अपनी बेहतरीन प्रतिभाओं का प्रदर्शन किया। इस अवसर पर माधवा भजनम्, जटायूमोक्ष्य, तंत्र, गोटी पुआ, छाऊ नृत्य एवं संबलपुरी नृत्य जैंसे कार्यक्रम भी प्रस्तुत किये गये। सभी ने मुक्त कण्ठ से इन कार्यक्रमों की प्रशंसा की।

इस प्रकार पाँच दिनों तक चले इस बहुआयामी विज्ञान महाकुंभ का समापन हुआ। पूरे उत्साह, उमंगों और महत्वाकांक्षाओं के साथ सभी सहभागी/वैज्ञानिक अपने–अपने गंतव्यों की ओर रवाना हुए।

वालेण्टरी इंस्टीट्यूट फॉर कम्युनिटी एप्लाइड साइंस विकास

'नोबल विजेता जो 99वीं भाविकाँ में पधारे'

प्रो0 अमर्त्यसेन :– प्रो0 अमर्त्यसेन का जन्म 1933 में एक संभ्रात बंगाली परिवार में हुआ था। आपकी प्रारंभिक शिक्षा ढाका में हुई। आपने विश्वभारती में आगे पढ़ाई की। वर्ष 1998 में आपको 'इकॉनोमिक सांइस' में नोबल पुरस्कार प्राप्त हुआ। आपकी कई पुस्तकें तथा शोध पत्र कई जर्नल्स में प्रकाशित हैं। आपकी पुस्तके 30 से अधिक भाषाओं में अनूदित हो चुकीं हैं।

सुश्री कारोलिन डब्ल्यू ग्राइंडर :– आपका जन्म 1961 में केलीफोर्निया में हुआ था। अपने अध्ययन काल में विश्व विद्यालय में भी आपने कई अविष्कार किये। आपने मोलेक्यूलर बायोलॉजी में पीएच.डी. पूर्ण की। आपको 'रिसर्च ऑन द स्ट्रक्चर ऑफ टेलोमोर' के कारण वर्ष 2009 में फिजियोलॉजी और मेडिसिन के लिये नोबल पुरस्कार प्राप्त हुआ। इसके अलावा भी आपको एक दर्जन से अधिक सम्मान व पुरस्कार प्राप्त हुये हैं।

प्रो0 रिचर्ड रॉबर्ट अर्न्सट :– आपका जन्म 1933 में स्विटजरलैण्ड में हुआ था। फिजिकल केमिस्ट्री में आपने अपना डिप्लोमा व पीएच.डी. पूर्ण की। आपने वर्ष 1921 में रसायन विज्ञान में नोबल पुरस्कार प्राप्त किया। 99वीं भाविकाँ में आपने 'एकेडमिक अपॉर्चुनिटीज फॉर शेपिंग ए बेटर फ्यूचर' विषय पर अपना व्याख्यान दिया।

प्रो0 रोल्फ एम0 जिंकरनेगल :– आपका जन्म 1944 में स्विटजरलैण्ड में हुआ। आपने मेडिसिन एण्ड कैमिस्ट्री में अपने अध्ययन को आगे बढ़ाया। आपने आस्ट्रेलिया के पीटर सी डोहर्टी के साथ 1996 में फिजियोलॉजी और मेडिसिन में नोबल पुरस्कार प्राप्त किया। 99वीं भाविकाँ में "व्हाई डू वी नॉट हैव ए वेक्सीन अगेंस्ट एच आई वी ऑर टी बी" विषय पर अपना व्याख्यान दिया।

प्रो0 कुर्ट बीथरिच :– आपका जन्म सन् 1938 में स्विटजरलैण्ड के एक गाँव में हुआ था। ग्रामीण पर्यावरण, पेड़ पौधों एवं पशुओं से सम्पर्क ने कम आयु में ही नेचुरल साइंस में उनकी दिलचस्पी का बढ़ाया। गाँव के विद्यालय में अध्ययन के दौरान ही आपने अपने अकादमिक कार्य भी जारी रखे। आपने सन् 2002 में रसायन विज्ञान में नोबल पुरस्कार प्राप्त किया। 99वीं भाविकाँ में आपने 'बेसिक रिसर्च एण्ड ह्यूमेन डेली लाइफ' विषय पर व्याख्यान दिया।

राबर्ट जी एडवर्ड्स :– आप ब्रिटेन के एक फिजियोलॉजिस्ट हैं। आपने 1955 में पीएच.डी. पूर्ण। कई प्रतिष्ठित विश्वविद्यालयों में अध्यापन कार्य के साथ–साथ अपना अध्ययन व शोध भी जारी रखा। एक वैज्ञानिक व मेडिकल जर्नल के सम्पादक के रुप में आप अपने कैरियर को आगे बढ़ा रहे हैं।

गो0 युनुस:– मोहम्मद युनुस का जन्म 1940 में हुआ था। उनका बचपन गाँव में बीता तथा स्नातकोत्तर शिक्षा ढाका में प्राप्त की। आप प्रख्यान अर्थशास्त्री है तथा आपने बांग्लादेश में कई महत्वपूर्ण दायित्व निभाये हैं। आपने एक रिसर्च प्रोफेसर के रुप में सरल इकॉनोमिक प्रोग्राम स्थापित किया। आपको विश्व स्तर पर अनेक सम्मान प्राप्त हुये हैं। वर्ष 2006 में आपको नोबल शांति पुरस्कार से सम्मानित किया गया।

डेल टी. मॉर्टेसन:– आप 1939 में जन्मे एक अमेरिकी अर्थशास्त्री हैं। आपको सन् 2010 में इकॉनोसिक साइंस मे नोबल पुरस्कार प्राप्त हुआ। मई 2011 में आपको "एनालिसिस ऑफ मार्केट्स विद् सर्च फ्रिक्शन्स" के लिये 'डाक्टर ऑफ साईस' की मानद उपाधि से भी सम्मानित किया गया। आर्थस विश्वविद्यालय ने आपके सम्मान में एक भवन का नाम 'द न्यू डेल टी. मर्टिसन बिल्डिंग' रखा है जहाँ अन्तर्राष्ट्रीय शोध की गतिविधियाँ होती है।

कदली वृक्ष आस्था एवं वैज्ञानिक दृष्टि

पी0 सी0 पाण्डे एवं
भावना जोशी पाण्डे

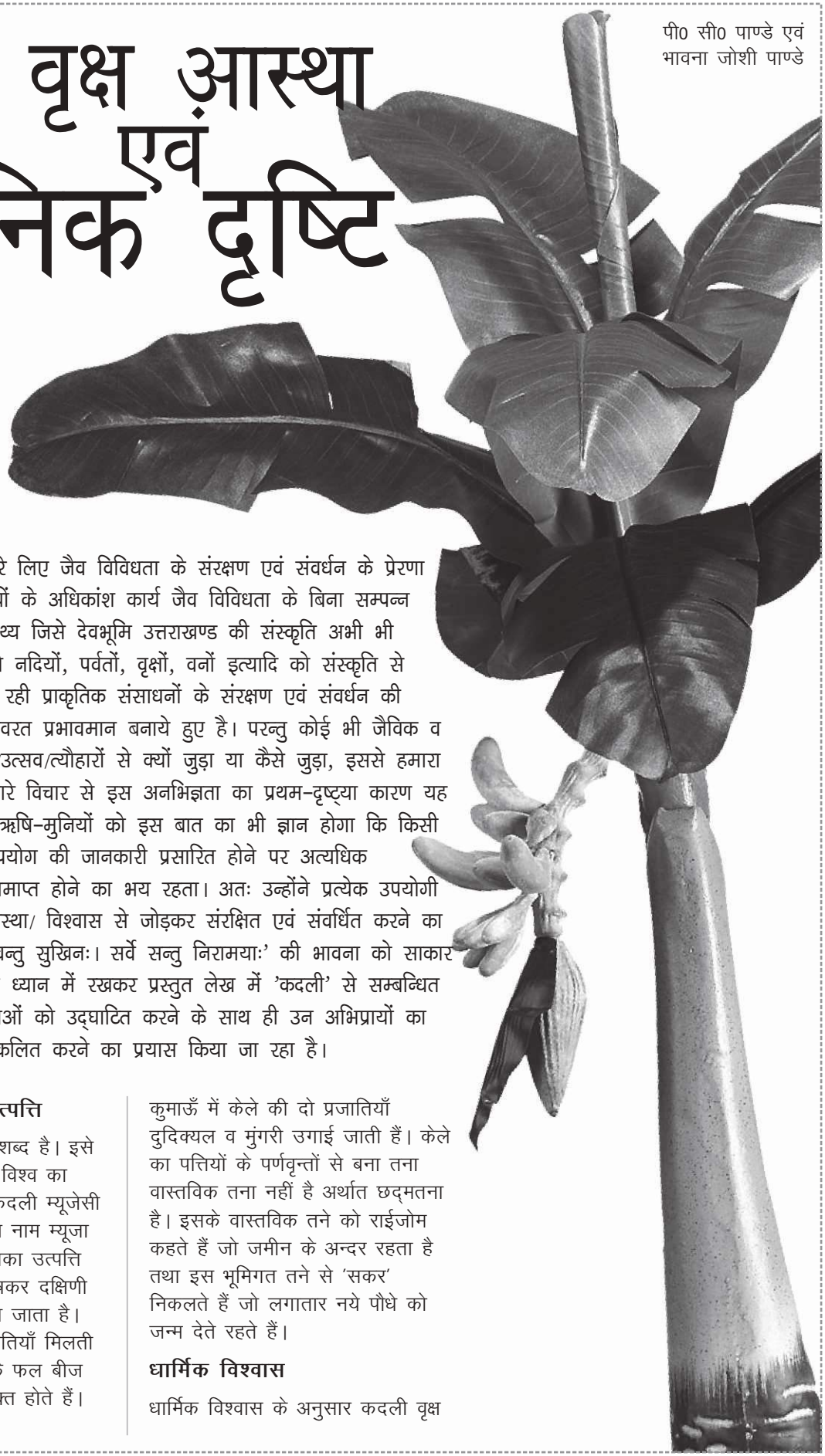

युग-युगान्तर से वेद हमारे लिए जैव विविधता के संरक्षण एवं संवर्धन के प्रेरणा स्रोत रहे हैं क्योंकि मनुष्यों के अधिकांश कार्य जैव विविधता के बिना सम्पन्न नहीं हो सकते हैं। यह तथ्य जिसे देवभूमि उत्तराखण्ड की संस्कृति अभी भी अपने में समेटे हुए है जो नदियों, पर्वतों, वृक्षों, वनों इत्यादि को संस्कृति से जोड़कर वेदों से चली आ रही प्राकृतिक संसाधनों के संरक्षण एवं संवर्धन की प्राचीन अवधारणा को अनवरत प्रभावमान बनाये हुए है। परन्तु कोई भी जैविक व अजैविक घटक किसी पर्व/उत्सव/त्यौहारों से क्यों जुड़ा या कैसे जुड़ा, इससे हमारा समाज अनभिज्ञ रहा। हमारे विचार से इस अनभिज्ञता का प्रथम-दृष्ट्या कारण यह जान पड़ता है कि हमारे ऋषि-मुनियों को इस बात का भी ज्ञान होगा कि किसी भी घटक के अत्यधिक उपयोग की जानकारी प्रसारित होने पर अत्यधिक दोहन से उस घटक के समाप्त होने का भय रहता। अतः उन्होंने प्रत्येक उपयोगी घटक/वनस्पति को धर्म/आस्था/ विश्वास से जोड़कर संरक्षित एवं संवर्धित करने का प्रयास किया जो 'सर्वे भवन्तु सुखिनः। सर्वे सन्तु निरामयाः' की भावना को साकार करता है। विषय वस्तु को ध्यान में रखकर प्रस्तुत लेख में 'कदली' से सम्बन्धित धार्मिक/सांस्कृतिक मान्यताओं को उद्घाटित करने के साथ ही उन अभिप्रायों का वैज्ञानिक अन्वेषण कर संकलित करने का प्रयास किया जा रहा है।

विवरण, वितरण एवं उत्पत्ति

'कदली' संस्कृत भाषा का शब्द है। इसे हिन्दी में 'केला' कहते हैं। विश्व का सबसे बड़ा शाकीय पौधा कदली म्यूजेसी कुल का है, जिसका लैटिन नाम म्यूजा पैराडिसिएका एल0 है। इसका उत्पत्ति स्थान दक्षिणी एशिया विशेषकर दक्षिणी चीन, मलाया व भारत माना जाता है। विश्वभर में इसकी 33 प्रजातियाँ मिलती हैं जिनमें कुछ प्रजातियों के फल बीज रहित तथा कुछ के बीजयुक्त होते हैं। कुमाऊँ में केले की दो प्रजातियाँ दुदिक्यल व मुंगरी उगाई जाती हैं। केले का पत्तियों के पर्णवृन्तों से बना तना वास्तविक तना नहीं है अर्थात छद्मतना है। इसके वास्तविक तने को राईजोम कहते हैं जो जमीन के अन्दर रहता है तथा इस भूमिगत तने से 'सकर' निकलते हैं जो लगातार नये पौधे को जन्म देते रहते हैं।

धार्मिक विश्वास

धार्मिक विश्वास के अनुसार कदली वृक्ष

की उत्पत्ति समुद्र मंथन से हुई थी, इसीलिए यह वृक्ष अनेक धार्मिक विश्वासों एवं मान्यताओं से जुड़ा है, यथा–

- इस शाकीय वृक्ष में सकर होने के कारण नये पौध लगातार बनते रहते हैं जिससे इसमें वर्ष भर फल आते रहते हैं। इसलिए इसे प्रजनन शक्ति, पुरुषत्व एवं वैभव (सम्पन्नता) का प्रतीक माना जाता है।
- उक्त मान्यतानुसार हमारे सांस्कृतिक कार्य–कलापों में यथा– विवाह स्थल के मुख्य द्वार, शादी का मंडप केले के वृक्षों से ही निर्मित किये जाते हैं। यहाँ तक कि शादी के आमंत्रण कार्ड/पत्र पर भी केले के वृक्ष को अलंकृत करने की परम्परा है।
- तुलसीदास द्वारा रचित 'रामचरितमानस' के अयोध्याकाण्ड (दोहा 5 की 3 चौपाई) में भी भगवान श्री रामचन्द्र जी के राज्याभिषेक की तैयारी के समय कुलगुरु वसिष्ठ जी ने वेदों का विधान बताकर केले के वृक्षों को आम, सुपारी के वृक्षों के साथ नगर की गलियों में चारों ओर रोपने को कहा–

  'बेद विदित कहि सकल बिधाना।
  कहेहु रचहु पुर बिबिध बिताना।।

  सफल रसाल पूगफल केरा।
  रोपहु बीथिन्ह पुर चहुँ फेरा।।'
- शिव पुराण में शिव–पार्वती विवाह वर्णन के अनुसार कदली वृक्ष एक अत्यन्त शुभ वृक्ष है।
- कदली वृक्ष को 'देवी–पार्वती' का अवतार माना जाता है एवं 'प्रभु ब्रह्मा की पत्नी' कहा जाता है। पश्चिमी घाट में इस वृक्ष को 'भगवती नन्दा देवी' माना जाता है। (भार्गव एवं खुल्बे, 2007)
- कदली वृक्ष भगवान विष्णु की भी प्रिय वनस्पति मानी जाती है। इसीलिए इसका उपयोग सत्यनारायण भगवान की कथा विशेष में किया जाता है।

'नैवेद्यं भक्तितोदद्यात्सपादंभक्ष्यमुत्तमम्। रम्भाफलंघृतं क्षीरं गोधूमस्य च चूर्णकम्।'

(श्री सत्यनारायण व्रत कथा, प्रथम अध्याय, बीसवीं पंक्ति)

'चढ़त प्रसाद सवायो कदली फल मेवा। धूप दीप तुलसी से राजी सत्यदेवा।।'

(श्री सत्यनारायण जी की आरती)

इसके अतिरिक्त कदली वृक्ष को भगवान विष्णु का रूप भी माना जाता है इसलिए हर वृहस्पतिवार के व्रत के दिन लोग 'कदली वृक्ष' या इसके फल की पूजा करते हैं। यह माना जाता है कि वृहस्पतिवार का व्रत करने वाले जन एवं उसके परिवार के सदस्य उस दिन केले के फल को नहीं खाते हैं।

मान्यताएं

- एक दन्त कथा के अनुसार हमारे ऋषि–मुनि (तत्कालीन वैज्ञानिक) इसी कदली वृक्ष के नीचे बैठकर ध्यान व मनन किया करते थे। इसीलिए इस वृक्ष को 'बुद्धिमान लोगों का फल' भी कहा जाता है। (कोचर, 1981)
- केले से जुड़ी एक मान्यता पाताल भुवनेश्वर की गुफा के सम्बन्ध में भी है। जनश्रुति है कि इस गुफा में कभी कदली वन था। (जगदीश्वरी प्रसाद, 1991; जोशी एवं बिष्ट, 2009)
- केले के वृक्ष को घर के दरवाजे के सामने रोपित नहीं किया जाता है। वास्तु शास्त्रानुसार इसके वृक्ष को या तो घर के पिछवाड़े या बगल में विशेषकर उत्तर, पश्चिम दिशा में ही लगाया जाता है। मान्यतानुसार घर के दरवाजे के सामने लगाने से यह कदली वृक्ष जब फलों से लद जाता है तब यह हवा के झोंकों से हिलते समय कष्टदायक चूँ–चूँ की आवाज करता है। यदि केले के पेड़ ठीक दरवाजे के सामने हों तो इसका प्रभाव (ठीक इसी तरह का कष्ट) घर में रहने वाली गर्भवती स्त्री पर भी पड़ता है।
- इसके अलावा ऐसी भी मान्यता है कि केले के वृक्ष को महिलायें न तो रोपित करती हैं और न ही काटती हैं। कहा जाता है कि इस वृक्ष की आयु बहुत कम होती है। अतः इस तथ्य को प्रभावहीन करने हेतु कदली वृक्ष को रोपित करने का समय ब्राह्ममुहूर्त या सन्ध्याकाल होना चाहिए ताकि इस वृक्ष की छाया रोपित करने वाले व्यक्ति पर न पड़े।

वैज्ञानिकता

भारत वर्ष में कदली वृक्ष को पवित्र समझा जाता है और सभी रीति–रिवाजों, संस्कारों, उत्सवों, पर्वों पर इसके फलों को चढ़ावे के रूप में अर्पित किया जाता है। केले के फलों को चढ़ावे में देने का वैज्ञानिक कारण यह हो सकता है कि कदली फल के बाहर मोटा छिक्कल होने से फल के खाये जाने वाले भाग पर बाहरी वस्तुओं (मन्दिर में चढ़ावे की अन्य वस्तुएं, पुजारी जी व अन्य लोगों के हाथों पर लगे पिठ्वा, हाथों का पसीना इत्यादि) का कोई प्रभाव नहीं पड़ता जो स्वास्थ्यकी दृष्टि से 'प्रसाद' ग्रहण करने वालों के लिए हितकर है। 'मां' भी तो यही चाहती है कि उनके बच्चे हमेशा स्वस्थ रहें। कहा भी गया है 'खाने की वस्तु को छीलकर खाओ, धोकर खाओ या उबाल कर खाओ वरना उसे भूल जाओ'। इसके अलावा कदली फल अन्य फलों की अपेक्षा सस्ता एवं सर्वसुलभ है तथा यह भी कहा जाता है कि कदली वृक्ष के पके फलों में कभी भी कीड़े नहीं पड़ते हैं।

एक कथा सुनाई जाती है। ऐसा प्रसंग आता है कि कुन्ती पुत्र भीम से युद्ध के पूर्व गांधारी ने अपने पुत्र दुर्योधन का शरीर वज्ररूपी बनाने हेतु उसे अपने समक्ष निर्वस्त्र होकर आने को कहा, परन्तु श्रीकृष्ण के कहने पर वह निर्वस्त्र न जाकर अधोभाग में कदली वृक्ष की पत्ती को लपेटकर मां गांधारी के समक्ष प्रस्तुत हुआ। भीम से युद्ध करते वक्त वही अंग दुर्योधन का कमजोर पडा। इसका वैज्ञानिक कारण खोजने की आवश्यकता है।

मां नन्दा देवी के संदर्भ में कदली वृक्ष

उत्तराखण्ड के पर्वतीय भागों में भाद्रमास की पंचमी तिथि से नन्दा महोत्सव का शुभारम्भ मंदिर में गणपति आदि देवी,

देवताओं व मां नन्दा देवी के पूजन के साथ किया जाता है। शर्मा (2007) के अनुसार इसके अगले दिन मां नन्दा व सुनन्दा की प्रतिमाएँ बनाने हेतु कदली वृक्ष का चयन किया जाता है। इसके लिए कदली वन में जाकर कदली वृक्षों की अक्षत, चंदन तथा दीप से पूजा की जाती है और फिर अभिमंत्रित अक्षतों को उनकी ओर उछाला जाता है, जिस वृक्ष के पत्ते पहले हिलें उसे देवी के लिए स्वीकार्य समझा जाता है। इस प्रकार चार वृक्षों का चयन किया जाता है। सप्तमी के दिन केले के वृक्षों के इन तनों को काटकर नन्दा देवी के मंदिर के प्रांगण में लाकर पूजा की जाती है। फिर उसमें से दो तनों (जो किसी प्रकार से विक्षत या विकृत न हों) को नियत आकार में काटकर कलाकारों द्वारा उन्हें नन्दा व सुनन्दा की प्रतिमाओं का रूप दिया जाता है। (मां नन्दा एवं सुनन्दा की प्रतिमाओं के निर्माण की विस्तृत जानकारी हेतु बिष्ट (1988: 25–27) एवं शर्मा (2007: 176–181)देखें)। मां नन्दा देवी की प्रतिमाएँ केले के स्तम्भों से क्यों बनाई जाती है इसके पीछे की एक किंवदन्ति के अनुसार 'नन्दा यहाँ के शासकों की इष्ट देवी होने के अतिरिक्त चन्द शासकों की एक बहन का नाम भी नन्दा था। एक दिन जब वह अपने मायके के लिए आ रही थीं तो मार्ग में उनके पीछे एक जंगली भैंसा पड़ गया। उससे बचने के लिए वह पास में ही स्थित कदली वृक्ष के झुण्ड में छिप गई। किन्तु उसी समय वहां पर एक बकरा आ गया और उसने कदली वृक्ष की वह पत्तियां खा दीं जिनकी ओट में वह छिपी हुई थी। फलतः उस भैंसे ने उन्हें मार दिया। बकरी एवं भैंसे की बलि भी इसीलिए दी जाती है तथा कदली वृक्ष को महत्व प्रदान करने हेतु उसके तने से देवी की प्रतिमाओं का निर्माण किया जाता है। (बिष्ट, 1988: 25–26; शर्मा, 2007: 180–181) इसके अतिरिक्त इसका दूसरा पहलू यह भी हो सकता है कि इस वृक्ष की सुन्दरता, मनमोहक, कोमलता, शीतलता, पुष्पक्रम, आकर्षण, उपयोगिता और आसानी से उपलब्धता तथा पौधे के तने को काट देने के बाद भी शीघ्र ही नए पौधे के बन जाने से पर्यावरण पर कोई विपरीत प्रभाव न होने

से इस कदली वृक्ष का उपयोग मां नन्दा देवी की प्रतिमाओं को बनाने में चला होगा। मां नन्दा देवी के मन्दिर पर्वत शिखरों पर घने जंगलों के मध्य बनाये गये हैं। धार्मिक मान्यतानुसार मंदिरों के आस–पास के वन एवं वृक्ष काटे नहीं जाते हैं और जीन पूल का काम करते हैं। फलस्वरूप ये वन एवं वृक्ष जैव विविधता का संरक्षण एवं संवर्धन करते रहते हैं जो यह दर्शाता है कि दिव्यशक्तिरूपा, मातृस्वरूपा, वन्दनीया मां नन्दा देवी का पर्यावरण संतुलन व संरक्षण से सीधा सम्बन्ध है।

साहित्य में कदली वृक्ष

सुन्दरकाण्ड के दोहा सं0 58 में भी तुलसीदास ने कदली वृक्ष को उदधृत किया है–

'काटेहिं पइ कदरी फरइ कोटि जतन कोउ सींच।
विनय न मान खगेस सुनु डाटेहिं पइ नव नीच।।'

कबीर एवं रहीम ने कदली वृक्ष एवं बेर का उदाहरण देते हुए कुसंगति से पड़ने वाले प्रभाव का दोहों में वर्णन किया है–

कह रहीम कैसे निभे बेर केर को संग।
वे डोलत रस आपने उनके फाटत अंग।।'
–रहीम

'केला तबहिं न चेतिया जब ढिग जामी बेरि।
अब के चेते क्या भया कांटों लीन्हा घेरि।।'
– कबीर

कालिदास प्रणीत 'कुमारसम्भवम्', 'रघुवंशम्', 'मेघदूतम्' आदि काव्यों में कदली वृक्ष की कोमलता, शीतलता एवं सरसता आदि का संदर्भ उपमा देने हेतु कई श्लोकों में हुआ है यथा–

नागेन्द्रहस्तास्त्वचि
कर्कशत्वादेकान्तशैत्यात्कदली विशेषाः।

लब्ध्वापि लोके परिणाहि रूपं
जातास्तदूर्वोरुपमानबाह्याः।।

(कुमारसम्भवम्, प्रथमः सर्गः)

अनेन यूना सह पार्थिवेन रम्भोरु
कच्चिन्मनसो रुचिस्ते।

क्षिप्रातरंगानिलकम्पितासु
विहर्तुमुद्यानपरम्परासु।।

(रघुवंश्म्, षष्ठः सर्गः,)

'राघवो रथमप्राप्तां तामाशां च सुरद्विषाम्।

अर्द्धचन्द्र मुखैर्बाणैश्चिच्छेद कदली सुखम्।।'

(रघुवंशम्, द्वादशः सर्गः)

'कुरुष्व तावत्करभोरु पश्चान्मार्गे
मृगप्रेक्षिणि दृष्टिपातम्।

एषा विदूरीभवतः समुद्रात्सकानना
निष्पततीव भूमिः।।'

(रघुवंशम्, त्रयोदशः सर्गः)

प्रकीर्ण साहित्य में कदली वृक्ष

कुमाऊँनी साहित्य में भी कई जगह कदली वृक्ष का वर्णन मिलता है, यथा–

- 'कथली आँवलक पात् में ले अटै जां, कथली क्यावक पात् में ले ठौर न हुनि।'
- कभी थोड़े सेवाभाव से प्रसन्न होना और कभी अत्यधिक सेवाभाव से भी अप्रसन्न रहना।
- बद्रीदत्त पाण्डे (1937: 264–267) द्वारा जगदीश्वरी प्रसाद के अनुसार (1991) केले के पत्ते में खीर खाने का एक प्रचलित किस्सा इस प्रकार है–एक बुढ़िया ब्राह्मणी द्वारा पुरुष पन्त, जो उनके यहाँ भूख लगने पर गये थे को केले के पत्ते में खीर देने के उपरान्त जब वे खीर पत्ते के बीच से खाने लगे और खीर पत्ते के किनारे से गिरने लगी तब बुढ़िया ने उनका उपहास कर कहा (विस्तृत कथानक हेतु सम्बन्धित साहित्य देखें)–

  'त्वील नी खै जाणी खीर,
  पुरूष पन्त लै नी ली सकि सीर।'

कदली वृक्ष के विविध उपयोग

- केले की कुछ प्रजातियाँ सौन्दर्यीकरण हेतु लगाते हैं।
- कदली वृक्ष की धार्मिक व सांस्कृतिक महत्ता से प्रभावित होकर शिल्पियों ने पुराने भवनों के काष्ठ अलंकरण में कदली वृक्ष के पुष्पक्रम का प्रयोग किया है। (चौधरी एवं पाण्डे, 2009) इसके अलावा धूलिअर्घ्य की वर चौकी में भी कदली वृक्ष का अलंकरण किया जाता है।
- केले के पत्तल खाना खाने हेतु प्रयुक्त किये जाते हैं।
- केले की सूखी पत्तियों का सिरौना बनाया जाता है जिसे सिर पर रखकर बोझ ढोने हेतु प्रयुक्त करते हैं।
- केले की पत्ती का प्रयोग मडुवे की रोटी बेलकर तवे में डालने हेतु प्रयुक्त की जाती है।
- केले की पत्तियों को सामूहिक रसोई में खाद्य पदार्थों से भरे बड़े बर्तनों को ढकने के काम में लाया जाता हैं।
- केले का तना (पर्णवृन्तों से बना) मछली मारने हेतु बनाये गये 'गोदा' में प्रयुक्त किया जाता है।
- केले के पर्णवृन्त पानी की धारा बनाने के लिये प्रयुक्त होता है।
- नदियों से पानी मोड़ने हेतु पत्थरों के साथ इसकी सूखी पत्तियाँ प्रयोग करते हैं।
- केले के पर्णवृन्तों के बीच में मछली को डाल के गर्म राख के अन्दर ढककर पकाते हैं ।
- इसकी सूखी पत्तियों को या पर्णवृन्त को गट्ठर बांधने हेतु भी प्रयोग करते हैं।
- कदली वृक्ष की जड़ों का प्रयोग बुरी आत्माओं के निवारण हेतु भी किया जाता है। (स्रोतः श्री बी0 डी0 पण्डा, अल्मोड़ा)
- केले के पेड़ को काटने के उपरान्त निकलने वाला तरल पदार्थ (सैप) का दाग वस्त्रों में स्थायी रूप में पड़ता है। अतः स्थानीय तौर पर इस पेड़ के रस (सैप) में रंग मिलाकर बैलों के सिरे पर लगाये जाने वाले फुन (रेशों से निर्मित) को रंगने के काम में लाते है।

आहार के रूप में कदली वृक्ष

- यह अक्सर सस्ता, स्वादिष्ट, पौष्टिक व आसानी से पचने वाला फल है जिसे लगभग सभी लोग खाते हैं।
- कदली फल बलकारक एवं जीवन शक्तिदायक होता है तथा वजन बढ़ाने के लिए भी पके केलों का सेवन किया जाता है।
- कच्चे फलों की सब्जी बनायी जाती है।
- पहाड़ में कहीं–कहीं पर केले की मुड़ी हुई नई पत्तियों को भी सब्जी के रूप में प्रयुक्त करते हैं।
- छद्मतने से पर्णवृन्तों को अलग कर बीच के भाग को सब्जी बनाने हेतु प्रयोग करते हैं।
- पुष्पक्रम के बीच का गूदा (सफेद रंग का) कच्चा खाया जाता है।
- पके केलों को मसलकर दही में मिलाके रायता बनाया जाता है।
- दूधिया किस्म के पके केलों को (जो आकार में छोटे होते हैं) दूध में मिलाकर खाया जाता है।
- मुंगरी किस्म के पके फलों को (जो आकार में बड़े होते हैं) घी के साथ मिलाकर खाते हैं। घी के साथ खाने से ये केले पेट में दर्द नहीं करते हैं और आसानी से पच जाते हैं।
- कच्चे केले के चूर्ण को शिशु आहार के रूप में तथा बिस्कुट/व चाकलेट बनाने में भी प्रयोग किया जाता है (सिंह तथा अन्य 1983)।
- इसकी पत्तियों एवं पर्णवृन्तों की राख पौटेशियम, मैग्नीशियम, फॉस्फोरस, कैल्शियम एवं सोडियम का अच्छा स्रोत है (भार्गव एवं खुल्बे, 2007)। केले के पके फल में 1.3% प्रोटीन, 0.2% वसा, 0.7% खनिज लवण, 36.4% कार्बोहाइड्रेट, 0.01% कैल्शियम, 0.05% फास्फोरस तथा 0.04% आयरन होता है (पाण्डे एवं चढ्ढा, 1996)।

औषधि के रूप में कदली वृक्ष

- आयुर्वेद में इस वृक्ष को लम्बी आयु देने वाला माना गया है। इसके अलावा इसके फूलों को श्वासनली शोध, दस्त, अल्सर में दिया जाता है। फूलों के रस को पेट में मरोड़ होने पर देते हैं। इसके फूलों को उबालकर दही के साथ खाने से रजोधर्म के समय अत्यधिक रक्तस्राव होने पर दिया जाता है। पुष्पकली के सिरे पर काटने के बाद जो भी रस की बूंदें निकलती हैं उसे कमजोर बच्चे को ताकत हेतु देते हैं। (भार्गव एवं खुल्बे, 2007)
- सिंह तथा अन्य (1983) के अनुसार मधुमेह, हृदय रोग, मूत्ररक्तदोष, गुर्दे की सूजन, वात रोग व अतितनाव की स्थिति में केले के पके फल उपयोगी होते हैं।
- इसके फूल एवं फलों को मसलकर अदरक, काली मिर्च, हरड़, जायफल एवं करौंदा के साथ पालतू पशुओं को दस्त लगने पर देते हैं। (भार्गव एवं खुल्बे, 2007)
- केले के पेड़ की जड़ के पास पाये जाने वाले केंचुओं को पीसकर काले भट्ट के साथ पकाकर बनाये गये पदार्थ को प्रसूता को दूध बढ़ाने हेतु खिलाते हैं। (स्रोतः श्रीमती प्रेमा सुवाल, नगुनिया, नैनीताल द्वारा शर्मा एवं पाण्डे, 2009)
- पशुओं से अधिक दूध प्राप्त करने हेतु पके हुए केलों को मसलकर पीसे हुए माष (उरद) के साथ खिलाते हैं। कुछ लोग कच्चे या पके केलों को उरद के छिक्कल या मैदा या गेहूँ के चोकर के साथ भी खिलाते हैं। (पाण्डे एवं पाण्डे, 2004)
- सिंह एवं अली (1998) के अनुसार कच्चे फल एवं पकाये गये फूल मधुमेह में उपयोगी होते हैं। इन्हीं के अनुसार कदली वृक्ष की जड़ों का 25 मिली अर्क प्रतिदिन सात दिन तक लेने से पुरुषों में बन्ध्यता होती है।
- इसके कच्चे फलों की सब्जी को आँव–अतिसार में खिलाते हैं।
- केले के फलों को पीसकर घी में तलकर (जिसे कुमाऊँ में 'स्राइ' कहते हैं) गर्भ धारण के उपरान्त गर्भ टिकाने हेतु महिला को देते हैं।
- गाय–भैसों को भी गाभिन होने के तुरन्त बाद कच्चे केलों व हरी पत्तियों को खिलाते हैं।
- केले के पेड़ को काटने के उपरान्त निकलने वाले तरल पदार्थ (सैप) का उपयोग जले के उपचार हेतु करते हैं।

श्री नन्दा देवी स्मारिका 2009 के पृष्ठ 196 से ज्ञात हुआ कि 'मां नन्दा महोत्सव पर श्री राम सेवक सभा, नैनीताल वालों ने यह निर्णय लिया है कि जिस गांव से मां नन्दा की प्रतिमा बनाने हेतु कदली वृक्ष लाया जाता है उस गांव में गांव वालों के सहयोग से मौसमानुकूल प्रतिवर्ष 21 पौधे रोपित करते हैं जो पर्यावरणीय दृष्टि से एक महत्वपूर्ण कार्य है। आस्था एवं विश्वास से जुड़े पौधे जो अत्यन्त ही उपयोगी होते हैं, में से किसी भी एक वृक्ष/पौधों को मन्दिरों या वानस्पतिक उद्यानों में लगाकर हम सभी लोग 'श्री राम सेवक सभा, नैनीताल' की तरह से इस मां नन्दा देवी महोत्सव के पावन अवसर पर पर्यावरण संरक्षण हेतु रचनात्मक सहयोग दे सकते हैं।

आभारः कालिदास के उद्धृत श्लोक डॉ. बी.डी. पण्डा जी से प्राप्त हुए।

संदर्भ

कोचर, इकोनोमिक बॉटनी

चौधरी एवं पाण्डे, मध्य हिमालय की सांस्कृतिक विरासत (सं पांडे एवं जोशी)

जगदीश्वरी प्रसाद, कुमाऊँ के देवालय

जोशी एवं बिष्ट, मध्य हिमालय की सांस्कृतिक विरासत में

नन्दा देवी स्मारिका, 2009

पाण्डे एवं चड़ढा, इकोनोमिक बॉटनी

पाण्डे एवं पाडे, मध्य हिमालय की परम्पराएं एवं पारम्परिक ज्ञान

बिष्ट, पी.सी. जोशी एवं निर्मल जोशी संपादित नंदा देवी सन्दर्भ पत्रिका में

भार्गव एवं खुल्बे, पलांट्स – फेथ एण्ड मेडिसिन

शर्मा, डी. डी., उत्तराखण्ड के लोकोत्सव तथा पर्वोत्सव

शर्मा एवं पाण्डे, मध्य हिमालय की सांस्कृतिक विरासत में
सिंह एवं अली, हर्बल ड्रग ऑफ हिमालया

सिंह व अन्य, डिक्शनरी ऑफ एकोनोमिक प्लांट्स इन इंडिया

वनस्पति विज्ञान विभाग,
कुमाऊँ विश्वविद्यालय,
एस0 एस0 जे0 परिसर,
अल्मोड़ा–263 601

बुद्धि के लिए खाद्य

दो अंकों वाली एक संख्या 1:2 के अनुपात में है। यदि इस संख्या में 1 जोड़ दें तो यह एक वर्ग संख्या बन जाती है। यदि इस संख्या के आधे में 1 जोड़ दें तो पुनः एक वर्ग संख्या प्राप्त होती है।

यह संख्या दो वर्गो का अंतर भी है जिसके अंक 2:1 के अनुपात में भी हैं। यही नहीं, यह पुनः दो वर्गो का अंतर भी है जिनके अंकों का योग 8 है। इस संख्या का संबंध कुछ अन्य संख्याओं से भी है जैसे 2304, 110592, 5308416।

यही नहीं, इस संख्या का संबंध रासायनिक तत्व कैडमियम से भी है। जरा बुद्वि पर जोर लगाइये और बताइये कि यह संख्या कौन सी है।

– विजय खंडूरी
(उत्तर इसी अंक में)

सावधान! मधुमेह जानलेवा है

प्रेमचन्द्र श्रीवास्तव

मधुमेह बहुत पुराना रोग है। आमतौर से हिन्दी भाषा में "मधुमेह" शब्द का प्रयोग डाइबिटीज मेलिटस के लिए होता है। डाइबिटीज मैलिटस नाम सर्वप्रथम 17वीं शताब्दी में प्रयुक्त हुआ था, क्योंकि यह मूत्र की ऐसा अवस्था है जिसमें मूत्र मधु (शहद) की भांति मीठा (मेलिटस) हो जाता है। मेलिटस लैटिन भाषा का शब्द है। मूत्र के मीठा होने का अर्थ है कि मूत्र में अधिक शर्करा आती है। वास्तव में यह एक उपापचयी (मेटाबॉलिक) गड़बड़ी है। इस अवस्था में शरीर या तो इंसुलिन का उत्पादन नहीं कर पाता अथवा यदि करता भी है तो इतनी कम मात्रा में कर पाता है कि उसका उपयोग नहीं हो पाता। इंसुलिन एक प्रकार का हार्मोन है। शरीर को इंसुलिन की जरूरत शर्करा और मण्ड (स्टार्च) और कुछ दूसरे खाद्य पदार्थों को ऊर्जा में परिवर्तित करने के लिए पड़ती है। मूत्र के अतिरक्त मधुमेह की पहचान खून में निरंतर अधिक मात्रा में शर्करा की उपस्थिति से भी की जाती है। मनुष्य के शरीर में शर्करा की मात्रा कम बनी रहे, अधिक न होने पाये, इसके लिए इंसुलिन और ग्लूकोगॉन की आवश्यकता होती हे। ये रक्त में शर्करा की मात्रा को बढ़ने नहीं देते हैं। ग्लुकोगॉन कोशिकाओं में संचित शर्करा को खून में भेजने के लिए प्रेरित करता है। ऐसा ऊर्जा उत्पन्न करने के लिए किया जाता है।

मधुमेह की मुख्य रूप से तीन किस्में होती हैः–

1. टाइप – 1, 2. टाइप – 2 और 3. जैस्टेशनल या गर्भावधिक। इनमें से टाइप–2 मनुष्य को मधुमेह का रोगी बना देता है। ऐसी स्थिति में शरीर वसा और प्रोटीन की ऊर्जा को इस्तेमाल करने लगता है। इसके परिणामस्वरूप मूत्रत्याग जल्दी–जल्दी होने लगता है, भूख–प्यास में वृद्धि हो जाती है और शरीर का भार या तो घटने या बढने लगता है। यदि उपर्युक्त लक्षण प्रकट होने लगें तो सावधान हो जाना चाहिए क्योंकि हो सकता कि आपका मधुमेह रोग की चपेट में आना प्रारंभ हो गया हो। ऐसी स्थिति में अविलम्ब चिकित्सक की सलाह लें और अपने शरीर की रक्त शर्करा की जाँच करायें। स्मरण रहे कि यह बिना भोजन किए 70 मिलीग्राम/डी.एल (डेसीलीटर) से कम और 110 मिलीग्राम/डी.एल. से आधिक न हो। 70 मिलीग्राम/डी.एल. से कम को हाइपोग्लाइसीमिया और 110 मिलीग्राम/डी.एल. से अधिक को हाइपरग्लाइसीमिया कहते हैं।

मधुमेह रोग के प्रति कभी भी लापरवाही नहीं करनी चाहिए। लम्बे समय से मधुमेह से पीड़ित व्यक्ति कभी–कभी असावधानी के कारण आँख की रोशनी खो देते हैं, कभी उनके गुर्दे काम करना बंद कर देते हैं। अथवा पैर की उँगलियॉ "गेंगरीन" के कारण सड़ने लगती हैं। ऐसी दशा में रोग को फैलने से रोकने के लिए प्रभावित अंग को काटना भी पड़ता है।

मधुमेह रोग की संभावना उन व्यक्तियों में अधिक पायी गयी है जिनके शरीर का

भार मोटापे के कारण आयु और लम्बाई के अनुपात में अधिक होता है, अथवा वे व्यक्ति जो मानसिक दबाव में रहते हैं या जिनके परिवार में यह रोग आनुवांशिक रूप से मौजूद रहता है। ऐसी स्थिति में अपने शरीर की रक्तशर्करा की नियमित जाँच अवश्य कराते रहना चाहिए। यदि रक्त में शर्करा अधिक है तो यह इस बात की संभावना का संकेत है कि गुर्दे खराब हो सकते हैं। और स्नायु रोग से संबंधित समस्याओं में वृद्धि हो सकती है। यही नहीं, मधुमेह रोगी को मधुमेह मुक्त व्यक्ति की तुलना में हृदयाघात होने की आशंका चौगुनी होती है। गर्भवती महिलायें यदि मधुमेह रोग से पीड़ित हैं तो यह स्थिति गर्भस्थ शिशु के लिए भी खतरनाक हो सकती है और गर्भस्थ शिशु की जान भी जा सकती है।

मधुमेह एक ऐसा रोग है जिससे ग्रस्त होने पर कभी पूरी तरह से छुटकारा नहीं प्राप्त हो सकता। फिर करें क्या? यहाँ रोगी की भूमिका महत्वपूर्ण है। रोगी को डॉक्टर के बताये अनुसार खान–पान और रहन–सहन में विशेष ध्यान देकर नियमित जीवन व्यतीत करना चाहिए। दवाओं को नियमित रूप से, चिकित्सक के निर्देशानुसार लेना चाहिए और ऐसी चीजें जो रक्त शर्करा में वृद्धि करती हैं, उनके सेवन से बचना चाहिए। मीठी चीजें उतनी ही मात्रा में लेनी चाहिए जिसकी अनुमति चिकित्सक ने दी हो। नियमित रूप से औषधि का सेवन और खान–पान में परहेज रोग को नियंत्रण में रखता है। इसकी पूरी जिम्मेदारी रोगी की है। वर्तमान में नई दवाओं के उपयोग से रोग को नियंत्रण में रखा जा सकता है।

टाइप 1

मधुमेह अधिकतर बच्चों में होता है। कभी–कभी बच्चों के अतिरिक्त वयस्कों, और मोटे लोगों को हो सकता है लेकिन उनमें इसकी संभावना अत्यन्त क्षीण होती है। इसके 10 प्रतिशत रोगी उत्तरी अमेरिका और यूरोप में पाये जाते हैं। इस रोग का कारण इंसुलिन पैदा करने वाली बीटा कोशिकाओं की कमी है। बीटा कोशिकायें लैंगर हैन्स के आइलैड (लैंगर हैन्स की कोशिका द्वीपिका) से जुड़ी होती हैं। वैसे इस रोग के संबंध में एक चौंकाने वाली बात यह है कि चिकित्सा विज्ञान में अत्यधिक प्रगति के बावजूद इसका उपचार अभी भी अज्ञात है।

टाइप 2

मधुमेह ग्रस्त रोगियों की संख्या अधिक होती है। मधुमेह का यह स्वरूप ही सामान्यतः पाया जाता है। इसकी पहचान इंसुलिन प्रतिरोधक के रूप में हुई है। यह आमतौर से कम इंसुलिन के स्राव के साथ मिल जाता है। रोग के बढ़ने के साथ ही साथ इंसुलिन का स्राव नुकसानदायक होता है। ऐसी विषम स्थिति में इंसुलिन का चिकित्सा की दृष्टि से परिवर्तन जरूरी हो जाता है। दवाओं के द्वारा ग्लूकोज के बनने में कमी लाई जा सकती है।

जेस्ट्रशन डायबिटीज या गर्भावधिक मधुमेह महिलाओं की गर्भावस्था में होता है। अनेक मामलों में इसकी समानता टाइप–2 मधुमेह से पाई गई है। यह रोग गर्भवती महिलाओं में 2 से 5 प्रतिशत पाया जाता है। इस रोग के साथ एक अच्छाई यह है कि शिशु को जन्म देने के बाद सुधार आ जाता है और महिला रोगमुक्त हो जाती है किन्तु गर्भकाल के दौरान महिला की चिकित्सा और भली भाँति देख–भाल की जरूरत होती है। फिर भी आगे चलकर 20 से 30 प्रतिशत प्रभावित महिलायें टाइप–2 मधुमेह की शिकार हो जाती हैं।

टाइप –1 और टाइप –2 मधुमेहों में इस दृष्टि से काफी समानता है कि दोनों तरह के मधुमेहों का कारण इंसुलिन की कमी है और इंसुलिन की कमी से शरीर द्वारा अधिक शर्करा के उत्पादन से खून में शर्करा की मात्रा बढ़ जाती है। औषधियों के सेवन से रक्त शर्करा की मात्रा कम हो जाती है, रोग के लक्षण नहीं दिखते हैं और स्वास्थ्य से संबंधित समस्याओं में भी कमी होने लगती है।

वास्तविकता यह है कि टाइप–1 मधुमेह के प्रभाव से अग्न्याशय (पैनक्रियाज) इंसुलिन उत्पन्न करना बंद कर देता है। इंसुलिन न रहने से शरीर की कोशिकायें एडिनोसिन ट्राइफॉस्फेट (ए टी पी) यूनिट पैदा करने के लिए जितनी मात्रा में ग्लूकोज चाहिए होता है उतनी मात्रा में ग्लूकोज नहीं ले पाती हैं। इसका परिणाम यह होता है कि शुरू शुरू में रोग के लक्षण मिचली और उल्टी के रूप में दिखते हैं। बाद में जब शरीर ऊर्जा पैदा करने के लिए मांसपेशियों के ऊतकों और वसा का प्रयोग करने लगता है तो भार में कमी आती है। एक और उल्लेखनीय बात यह है कि इलेक्ट्रोलाइट की कमी के कारण निर्जलीकरण (डीहाइड्रेशन) की स्थिति सामने आ जाती है। यही नहीं, निर्जलीकरण की अवस्था में बेहोशी और कभी–कभी मृत्यु भी हो जाती है।

टाइप –2 मधुमेह रोग की दशा में कोशिकायें ग्लूकोज के चयापचय या मेटाबोलिज्म के लिए अक्षम होती हैं इसलिए शरीर ऊर्जा प्राप्त करने के लिए वसा का चयापचय प्रारंभ कर देता है। जब वसा शरीर में पिघल जाती है तब शरीर ग्लूकोज की तुलना में वसा का अधिक प्रयोग करता है। किन्तु वसा से शरीर की कैलोरी की मात्रा की पूर्ति नहीं हो पाती और परिणामस्वरूप थकान महसूस होती है, प्यास अधिक लगती है। अधिक ग्लूकोज के कारण मूत्र अधिक

उत्पन्न होता है। मूत्र के साथ ही अतिरिक्त रक्त शर्करा बाहर निकलती है। इससे शरीर से अधिक पानी भी निकलता है। अधिक पानी निकलने से निर्जलीकरण की स्थिति उत्पन्न हो जाती है।

इंसुलिन हार्मोन का एक और कार्य है और वह यह कि इंसुलिन हार्मोन भूख लगने के लिए भी उत्तरदायी है। कम भूख का सामना करने के लिए शरीर अधिक इंसुलिन पैदा करता है, जिससे भूख बढ़ती है। भूख बढ़ने से शरीर का भार भी बढ़ता है। साधारणतया बहुमूत्र (पॉलायूरिया) ग्लूकोसूरिया, प्रोटीन की कमी और वसा का चयापचय कुछ ऐसे कारक हैं जिनके कारण शरीर के भार में कमी आ जाती है। इसके विपरीत किसी–किसी मधुमेह रोगी के शरीर का भार अधिक भूख लगने के कारण बढ़ने भी लगता है। कुछ मधुमेह रोगियों में यह भी देखा गया है कि उनके शरीर का द्रव–पदार्थ ऊतकों और आँख के लेंस से बाहर निकलने लगता है। ऐसी स्थिति में कुछ दृष्टि दोष भी उत्पन्न हो जाता है। यह स्थिति हाइपरोस्मोलर हाइपर ग्लाइसीमिया नानकेटोनिक सिंड्रोम कहलाती है।

दृष्टिदोष का उत्पन्न होना अर्थात धुँधला दिखाई देना रक्त में शर्करा की बढ़ी हुई मात्रा की पहचान है। रक्त में शर्करा की मात्रा के बढ़ने से मधुमेह रोगी थका–थका सा महसूस करते हैं क्योंकि मस्तिष्क और अन्य अंगों को ग्लूकोज की आपूर्ति ठीक से नहीं हो पाती है। रक्त शर्करा की मात्रा के बढ़ने अथवा घटने से प्रतिरक्षण प्रणाली (इम्यून सिस्टम) भी प्रभावित होती है और मूत्र नली में (फंगस) या जीवाणु (बैक्टीरिया) का संक्रमण हो जाता है। रक्त में शर्करा की अधिक मात्रा के कारण श्वेत रक्त कणिकाओं (डब्लू बी सी) का विकास बाधित होता है। यहाँ यह जान लेना आवश्यक है कि श्वेत रक्त कणिकाएँ शरीर की प्रतिरक्षण प्रणाली के लिए जिम्मेदार होती हैं। ऐसा प्रायः देखने में आता है कि एक तो मधुमेह रोगियों के घाव जल्दी नहीं भरते हैं और दूसरे मधुमेह रोगी यदि लम्बे समय से रोगग्रस्त हैं तो उनकी रक्त की धमनियाँ मोटी हो जाती हैं। धमनियों के मोटी होने से रक्त का संचार शरीर के विभिन्न अंगों में ठीक से नहीं हो पाता है।

उपरोक्त गड़बड़ियों के कारण मधुमेह रोगी की देखभाल की विशेष रूप से आवश्यकता होती है। रोगी की देखभाल में अनेक कठिनाइयाँ सामने आती हैं। पहली कठिनाई तो यह है कि रोग का वास्तविक कारण पता नहीं है अतएव रोकथाम में कठिनाई होती है। दूसरे मधुमेह की चपेट में आया रोगी जीवनपर्यन्त मधुमेह रोगी बना रहता है। कहते हैं रोग रोगी के साथ ही जाता है। इसलिए रोगी को स्वयं अपने स्वास्थ्य की देखभाल करनी पड़ती है, खान–पान में नियंत्रण रखना पड़ता है और चिकित्सक की सलाह से औषधियों का सेवन नियमतः करते रहना होता है।

मधुमेह रोगी को दैनिक जीवन में कुछ सावधानियाँ बरतनी आवश्यक हैं। उदाहरण के लिए

1. रोग की गम्भीरता के अनुसार नियत समय पर रक्तशर्करा का परीक्षण कराते रहना चाहिए।
2. चिकित्सक द्वारा बताई गई औषधियों का सेवन बिना नागा किए समय पर करना चाहिए और आवश्यकतानुसार इंसुलिन लेते रहना चाहिए।
3. खून में शर्करा की मात्रा को बढ़ने न देने के लिए चिकित्सक द्वारा बताए गए व्यायाम को करते रहना चाहिए। सुबह–शाम खुली हवा या पार्क में टहलना मधुमेह रोगी को अधिक लाभ पहुँचाता है।
4. शर्करा का रक्त में स्तर आवश्यकता से अधिक घट जाने पर अन्य प्रकार की जटिलताएं उत्पन्न हो जाती हैं इसलिए ऐसी अवस्था में फल का रस, ग्लूकोज का पेय या कुछ मीठा ले लेना चाहिए। इससे रक्त शर्करा सामान्य हो जाती है।
5. शरीर का भार या मोटापा मधुमेह रोगी के लिए खतरनाक होता है। इसलिए वे सभी उपाय अपनाने चाहिए जिससे शरीर का भार बढ़ने न पाये।

चूँकि मधुमेह जीवनभर साथ रहने वाला रोग है इसलिए इसे नियंत्रण में रखना ही एकमात्र उपाय है। रोगी को रोग के साथ रहने और उसे नियंत्रण में रखने की आदत डाल लेनी चाहिए।

साधारणतया मधुमेह रोगी आगे चल कर उच्च रक्त चाप और हृदय रोग की चपेट में भी आ जाते हैं। ऐसे रोगियों में धूम्रपान भी कोलेस्टेरॉल बढ़ाता है। उच्च रक्त चाप का बढ़ना, रक्त धमनियों में कोलेस्टेरॉल का जमाव और मोटापा घातक हो सकते हैं। इस बात को भली भांति समझ लेना चाहिए।

इसलिए रोगी का रोग के प्रति शिक्षित होना, खान–पान पर नियंत्रण रखना और नियमित व्यायाम की सहायता से रोग को नियंत्रण में रखना ही इसकी एकमात्र चिकित्सा है। इसी का अनुसरण करके जीवन का भरपूर आनन्द उठाया जा सकता है। बस आपको अपनी जीवन शैली पर नियंत्रण और अपने चिकित्सक में पूरा विश्वास होना चाहिए।

मधुमेह की चेतावनी

अब मधुमेह रोग से ग्रसित होने की चेतावनी 10 वर्ष पूर्व मिल सकती है। ब्रिटेन के बैज्ञानिकों ने रक्त – परीक्षण के माध्यम से एक ऐसी तकनीक विकसित की है जो मधुमेह का पूर्वानुमान कर सकती है।

किंग्स कॉलेज, लंदन के वैज्ञानिकों के एक दल ने दावा किया है कि उनके द्वारा विकसित तकनीक की सहायता से सामान्य मधुमेह (टाइप 2 मधुमेह) का पहले से पता लगाया जा सकता है। यह भी पता किया जा सकता है कि किन्हें यह रोग अपनी चपेट में लेगा और किन्हें नहीं। रक्त शर्करा की जाँच से यह भी पता करना संभव है कि किन व्यक्तियों को मधुमेह से संबंधित हृदयाघात (हार्टअटैक), पक्षाघात और असामान्य रक्त–संचार की गड़बड़ियाँ हो सकती हैं। अब परीक्षण द्वारा मधुमेह रोगियों के रक्त में आनुवांशिक अणुओं के स्तर को मालूम करना भी संभव हो गया है। इन्ही अणुओं को माइक्रो आर एन ए (MiR) कहते हैं। "डेली टेलिग्राफ" के अनुसार ये सूक्षम आर एन ए (राइबोस न्यूक्लिक एसिड) हृदयाघात के खतरे और शिराओं की गड़बड़ियों का सही पता दे सकते हैं। अग्रणी विज्ञानी मैनुयल मेर ने कहा है कि पारंपरिक परीक्षणों के साथ ही इस नई परीक्षण तकनीक की भी सहायता ली जा सकती है। इस तकनीक का सबसे बड़ा लाभ यह है कि इससे यह अनुमान लगाया जा सकता है कि इससे रक्त–नलिकाओं को कितना नुकसान पहुँचा है।

पूर्व सम्पादक 'विज्ञान पत्रिका',
विज्ञान परिषद, प्रयाग, इलाहबाद

आइवर यूशिएल

हिन्दी में बाल विज्ञान साहित्यः एक दृष्टि

आज का युग जिसमें हम जी रहे हैं, पूरी तरह विज्ञान का युग है। विज्ञान से अलग रहकर जीवन की कल्पना कर पाना भी अब संभव नहीं रह गया है। अतः एक स्वतंत्र राष्ट्र के जिम्मेदार नागरिक की हैसियत से हम सबका यह कर्त्तव्य बनता है कि हम अपनी आने वाली पीढ़ी के लिए एक ऐसे आधुनिक वातावरण का निर्माण करें जहाँ विज्ञान उनके साथ शुरू से एक शुष्क व नीरस विषय के बजाय मजेदार दोस्त की भूमिका अदा करे और इस दिशा में रोचक वैज्ञानिक बाल साहित्य आशातीत प्रभाव पैदा कर सकता है।

ज्ञान चाहे पुस्तक और पत्र–पत्रिकाओं के प्रकाशन के रूप में हो या रेडियो, टी.वी. द्वारा प्रस्तुत कार्यक्रमों के प्रसारण के रूप में पर लेखन का महत्व अपनी जगह पूरी तरह बना ही रहता है। इसी महत्व को स्वीकारते हुए कुछ इस तरह के साहित्य का लेखन आज की सबसे बड़ी जरूरत है जो 'शुगर कोटेड' दवाई की तरह हमारे बाल–पाठकों के लिए सुग्राह्य भी हो और लाभप्रद भी।

हिन्दी भाषा का यह बहुत बड़ा दुर्भाग्य रहा है कि हमारे बुद्धिजीवी जब भी बाल–साहित्य या बाल–लेखन की चर्चा करते हैं तो वे इसे केवल कहानी–कविता के दायरे में समेट कर उस पक्ष की पूरी तरह अवहेलना कर देते हैं जो आज के समय की सबसे बड़ी जरूरत है और वह है विज्ञान आधारित लेखन, विज्ञान सम्बन्धी साहित्य जिसके बिना विकसित हुई पीढ़ी भविष्य में सुनहले पंखों वाले सफेद घोड़े पर बैठकर सिर्फ काल्पनिक रूप से ही अन्तरिक्ष की सैर कर पाएगी और उस दौर में भी महज 'हम होंगे कामयाब एक दिन' का राग अलापते हुए ही हमें विदेशों से आयातित तकनीक पर आधारित रहना होगा।

हमारे देश में अभी तक स्तरीय व प्रामाणिक वैज्ञानिक साहित्य का अपनी भारतीय भाषाओं में अभाव क्यों हैं – इस महत्वपूर्ण प्रश्न को लेकर किये गये एक सर्वेक्षण के दौरान सबसे पहले जो बात सामने आयी वह शायद पाठक की भाषा और उसकी आर्थिक स्थिति से मिले जुले तौर पर सम्बन्धित थी। अंग्रेजी में प्रकाशित पुस्तकों के ऊँचे दामों पर बिकने की संभावना भले ही हो पर संख्या में निश्चित रूप से उनकी पहुँच एक खास पाठक वर्ग तक ही सीमित है। हिन्दी में ऐसे पाठकों की संख्या निःसंदेह कहीं अधिक है पर इस वर्ग की आर्थिक स्थिति ऐसे उपयोगी साहित्य को खरीदने से इन्हें अधिकतर वंचित रखती है। यहाँ के उच्च स्तरीय वर्ग का विदेश से आयातित पुस्तकों के प्रति झुकाव या मोह देसी प्रकाशकों की अंग्रेजी पुस्तकों पर जहाँ एक सीधा प्रहार करता है, वहीं प्रायः हिन्दी प्रकाशनों का निम्नस्त चाहे वह विषय का कमजोर प्रस्तुतिकरण हो, अनाकर्षक चित्र व छपाई या फिर मोटा–मोटा कागज, अपने पाठकों को किसी ऐसे मोहपाश में नहीं बाँध पाता जहाँ वे अपनी सीमा से निकलकर भी इसे खरीद लें।

दूसरी मुख्य समस्या सामने आयी लेखकों से सम्बन्धित! हमारे देश में आज भी विज्ञान की ऊँची शिक्षा अंग्रेजी माध्यम से ही हासिल कराई जा रही है। एक भाषा के माध्यम से प्राप्त किये गये ज्ञान को दूसरी भाषा में प्रस्तुत करना लेखक के लिए आसान नहीं होता। विशेष तौर पर उन पाठकों के लिए लिखना जिनके मन में विषय के प्रति रुचि भी जगानी हो और साथ–साथ उन्हें सीधी–सरल भाषा में समझाना भी हो तो यह कार्य दोहरे उत्तरदायित्व को वहन करने जैसा हो जाता है। चूंकि लेखक के पास इस चुनौती को स्वीकारने के लिए नाम या दाम जैसा कोई भी आकर्षण नहीं होता अतः बहुत कम रचनाशील मस्तिष्क इस क्षेत्र की और रुख करते हैं।

तीसरा और शायद बहुत ही महत्वपूर्ण पक्ष जो इस समस्या से सम्बन्धित है सीधे तौर पर प्रकाशन व्यवसाय से जुड़ा है। यह बहुत दुर्भाग्यपूर्ण स्थिति है कि प्रकाशन से जुड़े व्यक्तियों का एक बहुत बड़ा प्रतिशत लगभग अशिक्षित और पूरी तरह व्यापारिक प्रवृत्ति का रहा है। सरकारी खरीद के अन्तर्गत लायब्रेरियों के लिए पुस्तकों की खरीद फरोख्त करने वाले भ्रष्ट अधिकारियों के साथ साँठ–गाँठ करके ऊँचे दामों पर छपी नीचे स्तर की पुस्तकों की घर बैठे सप्लाई कर देने वाले इन लालची किस्म के प्रकाशकों से समाज हितकारी कोई नई पहल करने की आशा भी भला कैसे की जा सकती है। प्रकाशन से जुड़े लेखक चित्रकार का शोषण करना जिस व्यवसाय का एक आम रिवाज बन गया हो वहाँ अच्छे स्तर के बुद्धिजीवी इस क्षेत्र में कुछ नया करने के प्रति आकर्षित हों भी तो कैसे?

लेखन और प्रकाशन की पूरी प्रक्रिया से गुजर कर जो सामग्री तैयार होती है उसका अन्तिम पड़ाव पाठक के रूप में होता है जिसके बारे में वातानुकलित कक्षों में बैठकर की गई समीक्षाओं पर आधारित आँकडे कुछ कहते हैं, जबकि वास्तविकता इससे कहीं भिन्न कुछ और ही होती है। सन 1984 में विज्ञान के आधारभूत सिद्धान्तों को दर्शाती छोटे–छोटे प्रयोगों पर आधारित मेरी एक पुस्तक '108 साइंस गेम्स' ने उन पूर्व निर्धारित समस्त धारणाओं को निर्मूल सिद्ध कर दिया जिनके अन्तर्गत हमेशा यह भ्रम उपजाया जाता रहा कि हमारे यहाँ ऐसी पुस्तकों के प्रति बच्चों का झुकाव ही नहीं है और व्यापारिक तौर पर ऐसे प्रकाशक द्वारा की गई इस साहसिक और चुनौती पूर्ण पहल का स्वागत देश भर के बच्चों ने जिस उत्साह से किया उसकी तो कभी कल्पना भी नहीं की जा सकती थी।

इस पुस्तक ने न सिर्फ लोकप्रियता का एक अलग स्तर दर्शाया बल्कि, अंग्रेजी अतिरिक्त कई अन्य भारतीय भाषाओं में अनुवाद के साथ ही बिक्री के नए मानदण्ड स्थापित किये। पुस्तक के प्रकाशन पर देश के कोने कोने से बाल पाठकों द्वारा प्रेषित हजारों पत्रों ने इस विकासशील पीढ़ी के अन्दर की उस पिपासा को उजागर किया जिसे शान्त करने के लिए आज न जाने कितने कर्त्तव्यनिष्ठ एवं पूर्णतया समर्पित लेखकों व प्रकाशकों की हमारे समाज को बेहद आवश्यकता है। परन्तु हर बार यही यक्ष प्रश्न हमारे सामने आ खड़ा होता है कि इस क्षेत्र में आखिर ऐसा है क्या जो जीवनयापन के आज जैसे कठिन दौर में प्रतिभाशाली और प्रबुद्ध लेखकों को अपनी ओर आकर्षित कर सके। कुटिया में बैठकर तेल के दीयों से उत्पन्न प्रकाश में चाणक्य की भाँति निश्चिंत भाव से लेखन का कार्य करते रहने की अपेक्षा आज के लेखक से नहीं की जा सकती, यह तो निश्चित है। हाँ, अगर हमें इस क्षेत्र में लगे लेखकों से कुछ बेहतर परिणाम हासिल करने की आशा है तो उनके स्तर और सुविधाओं में निश्चित तौर पर सुधार किया जाना आवश्यक है क्योकि इतिहास गवाह है कि समर्थ लेखक समाज की सिर्फ दिशा ही नही बदलता बल्कि दशा भी बदल देता है।

बाल विज्ञान लेखन के क्षेत्र में कार्य करते हुए मुझे पच्चीस वर्ष पूरे हो चुके हैं। जहाँ तक मुझे स्मरण है जीव–जन्तुओं के ऊपर उनके अपने मुख से अपने गुण–दोषों को बखान कराती मेरी पहली पुस्तक दिसम्बर 1981 में बाजार में आयी थी। नन्ही सी चींटी से लेकर विशालकाय ह्वेल जैसे पचास प्राणियों के क्रिया कलापों का वर्णन समेटे इस पुस्तक को बच्चों ने शुरू शुरू में शायद इसके लेखों के शीर्षकों की वजह से ही उठाया।

'तैरता टापू तेल का, किस्सा मुझ ह्वेल का' 'भीतर से नाजुक बाहर कड़ी, सीपी हूँ मैं मोती जड़ी', 'रेशम देता मैं रेशम का कीड़ा, झेलकर स्वयं मौत की पीड़ा', मुझ मेन्टिस की बात, जुड़े हाथ शिकार की घात', क्षण में दुश्मन कर दूँ ढेर, ऐसा हूँ में बब्बर शेर। और 'थल पर बसता, जल भाता, मैं पेन्गुइन पक्षी कहलाता' जैसे शीर्षकों में पाठकों को कुछ ऐसा नयापन व ताज़गी लगी जिसके बारे में इन्हे लिखते समय तो मैंने सोचा भी नहीं था। उस समय तक बाल लेखन के कार्य को मैंने बहुत साधारण स्तर का आँकते हुए इसे वास्तव में बच्चों के खेल जैसा ही कुछ समझा था। परन्तु इस पुस्तक के प्रकाशन के साथ ही व्यक्तिगत और पत्रों के माध्यम से बच्चों द्वारा किये गये सम्पर्कों के आधार पर मुझे जल्दी ही अपनी गलतफहमी का अन्दाजा हो गया और मैं समझ गया कि यह काम उतना आसान नहीं है जितना मैं अभी तक समझे हुए था। इस विशेष क्षेत्र में लेखन के लिए सहज सरल भाषा के साथ तथ्यों की प्रामाणिकता का पूरा ध्यान तो रखना ही होता है; साथ ही विषय की रोचकता का सही अर्थों में एहसास कराने के लिए उस आयु वर्ग में आपकी वापसी आपके लिए सफलता की गारंटी बन जाती है जिस वर्ग के लिए पठन सामग्री तैयार की जा रही होती है। इसी आधार पर लिखी गई मेरी अगली पुस्तकों को बाल पाठकों का जो प्यार व स्नेह मिला वो किसी भी लेखक के लिए सिर्फ सन्तुष्टि ही नहीं बल्कि गौरव की बात है। विशेष कर इसका महत्व तब और बढ़ जाता है जब यह प्रयास हिन्दी के क्षेत्र में किया जा रहा हो और सीधे तौर पर विज्ञान जैसे विषय के लोकप्रियकरण से जुड़ा हो। परन्तु मैं यहाँ यह भी स्पष्ट करना चाहूंगा कि बाल विज्ञान लेखन के क्षेत्र में मिली इस सफलता को न तो कभी मैंने अपनी लेखनी का करिश्मा माना और न ही इसका श्रेय सम्बन्धित प्रकाशक के देशभर में फैले सबल विक्रय तंत्र को दिया जिसने दूरदराज इलाकों के पाठकों तक वी.पी.पी. द्वारा अपनी पहुंच और पकड़ बनाने का एक गैर–पारम्परिक सशक्त व स्वतंत्र माध्यम खोजा और इस तरह सरकारी खरीद के भंवरजाल से हमेशा दूरी बनाये रखकर इन पुस्तकों को लायब्रेरी के शेल्फों पर सड़ते रहने से बचाया। काश कि इस उदाहरण से प्रेरणा लेकर हिन्दी के दूसरे प्रकाशक भी इसका अनुसरण करते तो निश्चित तौर पर वे अपने लाभ के साथ, समाज का भी बहुत बड़ा हित कर सकते थे।

वैसे प्रारम्भ से अब तक मेरी तो यही धारणा रही है कि इन पुस्तकों की अकल्पनीय सफलता के पीछे जो मुख्य कारण रहा वह था देश के सुदूर अंचल में बसी इस विकसित होती पीढ़ी के अंदर नई–नई जानकारियाँ पाने की ललक जो अन्यथा उपयुक्त साधनों के अभाव में समय के साथ धीरे–धीरे दम तोड़ देती हैं। सर्वेक्षणों के आधार पर यह तथ्य जरूर सामने आये कि विषय और

इसके प्रस्तुतिकरण ने बच्चों को इन पुस्तकों की ओर आकर्षित कर इन्हें अपनाने के लिए प्रेरित किया और प्रकाशक द्वारा प्रयोग में लायी गई वी.पी. पी. प्रणाली ने पाठकों के दरवाजों तक इन पुस्तकों को पहुंचाकर इन्हें सर्वसुलभ बनाने का एक नया विकल्प खोला। वैसे भी इन पुस्तकों को क्योंकि सिर्फ पुस्तकालयों में खपाने के विचार से तैयार नहीं किया गया था बल्कि हर दृष्टिकोण से इन्हें बालपाठकों की रुचि और उनके रुझान के अनुरूप ढाला गया था ताकि अप्रत्यक्ष रूप में चीनी चढ़ी दवाई की तरह ज्ञान को उनके अंदर पहुँचाया जा सके, शायद इसीलिए बालपाठकों ने इन्हें बेहद पसन्द किया।

एक विश्लेषण के आधार पर यह चौंकाने वाला सत्य भी उभरकर सामने आया कि आधुनिकता के रंग मे रंगते महानगरों और दूसरे बड़े शहरों में बसे सम्पन्न परिवारों की बनिस्पत छोटे शहरों और यहाँ तक कि कस्बों व गाँवों के साधारण परिवारों के बच्चों में पढ़ने की ललक कहीं ज्यादा है। अपने परिवार और आसपास के समाज में पलनेवाले अभावों को समाप्त करने का संकल्प ले आई.ए. एस. जैसे आसमान छूते लक्ष्यों तक पहुँचने के लिए प्रयासरत युवावस्था की दहलीज की तरफ तेजी से बढते ये कदम उचित सुविधाओं के अभाव में अपनी मंजिल तक पहुंचने के बहुत पहले ही टूटकर यदि बिखर जाते हों तो इसमें दोष उनका नहीं समाज का है, सरकार का है।

आज के युग में भला कौन ऐसा होगा जो यह न जानता हो कि सब्जी और फलों की तरह पुस्तकें भी सभ्य मानव समाज के लिए जरूरी पौष्टिक भोजन जैसी हैं। एक से शरीर को पोषण मिलता है तो दूसरे से मस्तिष्क को। परन्तु शहर के हर मोड़ पर शराब के ठेके खुलवाने की फिराक में रहने वालों को अपने स्वार्थ से उपर उठकर अगर अपनी विकसित होती इस पीढी की थोड़ी–सी फिक्र होती तो आज छोटे–छोटे पुस्तकालय जगह–जगह नज़र आ रहे होते और समाज में पुस्तकों और इसके लेखकों के प्रति दिन पर दिन बढती उपेक्षा का यह हाल न होता।

आश्चर्य की बात तो यह है कि अपनी पुस्तकों से सम्बन्धित मुझे जो पत्र मिलते रहे हैं उनमें शिक्षित एवं सम्पन्न परिवारों के बच्चों की संख्या लगभग नगण्य ही है और हमेशा ही ज्यादातर उन बाल पाठकों ने पत्रों के माध्यम से मुझ तक पहुंच बनाने का प्रयास किया है जो न सिर्फ आर्थिक रूप से बेहद कमजोर हैं बल्कि नगरीय सभ्यता की चमक दमक से अभी तक अछूते, दूर दराज और पिछड़े कहे जाने वाले इलाकों में बसे हुए हैं। पुस्तकों की प्राप्ति हेतु आज भी वी.पी.पी. उनके लिए एक मात्र साधन बना हुआ है या फिर विकल्प के तौर पर अपने क्षेत्र के निकटतम बस अड्डे पर स्थित वहाँ का इकलौता 'बुक स्टॉल' कभी–कभी उनकी फरमाइश पूरी करने में मददगार बन जाता है। कैसी विड़म्बना है कि पुस्तक प्रेम की सुगबुहाहट वहाँ है जहाँ एक पाठक को बीस–पच्चीस रूपये की पुस्तक के लिए भी दो तीन साझेदार तलाशने पड़ते हैं और तब कहीं जाकर सप्ताह में बंटे केवल अपने हिस्से के दिनों में उसे इच्छित पुस्तक के रसास्वादन का आनंद मिल जाता है।

अपने इन बाल पाठकों के पत्रों में अभिव्यक्त प्रतिक्रियायें और प्रकाशकों के सहयोग से समय–समय पर किये गये सर्वेक्षण पढने के प्रति रुचि दर्शाती बाल मानसिकता का एक ऐसा दस्तावेज बन सकते हैं जो आने वाले समय में आज के शिक्षा क्षेत्र के नीति निर्धारकों को कटघरे में खड़ा करने के लिए काफी होंगे। सजे–धजे ड्रॉइंगरूमों में बैठकर कॉफी या उससे भी अधिक कड़वे तरल पेय से गले तर करता आज का जो सम्भ्रांत वर्ग बच्चों की पढने के प्रति उदासीनता का राग अलापता रहता है उसे पहले अपने गिरहबान में झाँककर भी देख लेना चाहिए कि उसने वास्तव में इस पीढ़ी के लिए क्या पठन सामग्री परोस रखी है। आज बाजार में बच्चों को उनके स्तर पर उतरकर रोचकता के साथ आधुनिक जानकारी देनेवाला ऐसा कितना साहित्य है जो मूल्य और उपलब्धता के आधार पर उनकी पहुँच के दायरे में है। साथ ही हमें यह विश्लेषण भी करना होगा कि इन जिज्ञासु बालपाठकों को उनके अभिभावक व अध्यापक इस तरह के साहित्य को पढने के लिए कितना प्रेरित करते हैं?

वर्तमान दौर में यह बात समझ लेना बहुत जरूरी है कि विज्ञान सिर्फ एक विषय भर नहीं है, यह हमारे जीवन का एक बहुत महत्वपूर्ण भाग है। पर इसे विषय के रूप में समेटकर जिस तरह कक्षाओं और पाठ्य पुस्तकों के दायरे में कैद कर दिया गया है, उससे इसका कम, हमारा अहित ज्यादा हुआ है। विद्यालयों में पढाये जाने वाले विज्ञान व गणित ये दो ऐसे विषय हैं जिनसे देशभर के बच्चों का एक बहुत बड़ा प्रतिशत बेहद घबराता है। उनकी यही घबराहट आगे चल कर इतनी बलवती हो जाती है कि वे किसी भी रूप में इसे स्वीकारने की बात तक नहीं सोच पाते। दुर्भाग्यवश अपने अंदर जन्मी इसी सोच के कारण वे अपने दो ऐसे मजेदार व उपयोगी दोस्त खो बैठते हैं जिनसे बिछुडकर जीवन में वे सफलता के शायद उस पायदान तक शायद नहीं पहुंच पाते जिसके वे वास्तव में हकदार थे।

नई पीढ़ी में इन विषयों के प्रति बैठे डर के लिए हमारी वर्तमान शिक्षा प्रणाली पूरी तरह जिम्मेदार है। भारी भरकम पाठ्यक्रम में समाये रूखे सूखे पाठों को किसी तरह रट रटाकर केवल अच्छे अंक हासिल कर लेने का दबाव बनाती यह प्रणाली यदि इन बाल छात्रों को स्वयं कुछ करके देखने व प्रोत्साहित करते हुए इनमें जिज्ञासा और उत्सुकता पैदा कर पाती तो निश्चित तौर पर हमारे यहाँ आज सिर्फ इंजीनियर और डॉक्टर ही नहीं, अच्छे अन्वेषक और आविष्कारक भी जन्मे होते। काश कि स्वतंत्र भारत की शिक्षा नीति का निर्धारण करते समय बच्चों की शिक्षा और उनके लिए वैज्ञानिक सोच बाले बेहतर साहित्य की जरूरत को भी पूरी तरह समझा जा पाता तो सन 1930 में सी बी रामन को नोबेल पुरस्कार के रूप में मिले अन्तर्राष्ट्रीय सम्मान के बाद हमारे देश के लिए इतना बड़ा समय का शून्य न उपस्थित होता।

किसी प्राचीन विदेशी विचारक के ये शब्द कितने सटीक हैं कि जो देश अपने स्तरीय बाल–साहित्य के सृजन के प्रति सचेत नहीं वह अपने भविष्य के साथ खिलवाड़ करने का जोखिम उठाता है और हमारी वीरभूमि भारत ने मानों इन

शब्दों को चुनौती के रूप में स्वीकार कर यही जोखिम उठाया। स्वतंत्रता के बाद चतुर्दिक विकास की योजनाओं का निर्माण करते समय भी वैज्ञानिक सोच वाले बाल साहित्य जैसे महत्वपूर्ण क्षेत्र की उपेक्षा करना उपर्युक्त चुनौती को स्वीकारना नहीं तो और क्या माना जाएगा?

अतः संक्षेप में कहा जाए तो आज जरूरत इस बात की है कि हमारे समाज के विभिन्न वर्ग इस जटिल समस्या का स्वयं मिलजुल कर हल निकालें। इसके लिए देश भर में जगह–जगह वैज्ञानिकों, शिक्षाविदों उद्योगपतियों, व्यापारियों (जिनमें प्रकाशक प्रमुख हैं) विज्ञान लेखको, समाज सेवियों और चित्रकारों को साथ साथ बैठकर व विचार विमर्श कर कुछ ऐसे रास्ते तलाशने होंगे जो इन सबके आपसी सहयोग से कम से कम बदलाव की कुछ संभावना तो ला सकें। विज्ञान सम्बन्धी विभिन्न स्तरों की पत्र–पत्रिकाओं के प्रकाशन तथा मौजूदा पत्र–पत्रिकाओं में विज्ञान के लिए कुछ स्थान प्रायोजित कराये जाने की व्यवस्था के बारे में विचार विमर्श के अलावा टी. वी. व रेडियो पर होने वाले प्रायोजित कार्यक्रमों के ढर्रे पर ही विज्ञान सम्बन्धी रोचक प्रसारण की दिशा में यदि इन बैठकों में कुछ निर्णय लिए जा सकें तो निश्चय ही यह समाज की ओर से एक ठोस पहल होगी।

इसके साथ ही मीडिया को सिर्फ नेताओं अभिनेताओं के पीछे भागते रहने और डकैती, अपहरण व बलात्कार की सनसनीखेज घटनाओं की प्रमुखता से प्रचार–प्रसार की अपनी प्रवृत्ति के साथ अपना नैतिक दायित्व समझते हुए विज्ञान को आम जनता तक पहुँचाने वाले हर एक कदम को प्रमुखता और प्राथमिकता देनी होगी तभी इस दिशा में निकट भविष्य में कुछ बेहतर परिणामों की आशा की जा सकती है वरना इस अन्देशे की गुंजाइश ज्यादा है कि कहीं जय जवान जय किसान के साथ लगाया जय विज्ञान भी महज नारे का एक भाग बनकर ही न रह जाए।

वरिष्ठ विज्ञान लेखक,
बरेली

विज्ञान लेखन के प्रकाश स्तम्भ
डा० रमेश दत्त शर्मा

अर्चना बहुगुणा

उत्तर प्रदेश ने हिन्दी जगत को कई प्रसिद्ध कवि लेखक इस देश को दिए हैं जिनकी कविताएँ व कहानियाँ आज भी हमें रोमांचित करती है। इसी उत्तर प्रदेश के एटा जिले से इस देश में ऐसे एक विज्ञान लेखक भी हुए जिनकी कलम ने विज्ञान में हिन्दी का दबदबा बनाया व इस देश में अंग्रेजी में पढ़े जाने वाले विज्ञान को, जो कुछ लोगों तक सीमित हो जाता है हर वर्ग में रोचक बनाकर पहुँचाया। ऐसे थे ड़ॉ0 रमेश दत्त शर्मा जिनका निधन 6 फरवरी 2012 को हो गया।

15 फरवरी 1939 में एटा के जलेसर कस्बे में पैदा हुए ड़ॉ0 रमेश दत्त शर्मा का विज्ञान से लगाव बचपन से ही रहा। जलेसर कस्बे में कुछ पढ़े लिखे लोगों ने एक अच्छा पुस्तकालय बना रखा था जहाँ रमेश जी बचपन से ही जाया करते। वहीं उन्होंने विज्ञान की कई पुस्तकें पढ़ डाली। आगरा कॉलेज से वनस्पति विज्ञान में स्नातकोत्तर परीक्षा उर्त्तीण की। परन्तु परीक्षा में अच्छे क्रोमोसोम यानि गुणसूत्र की स्लाइड़ बनाने के फेर में, उन्होंने अच्छी बनी स्लाइड़ कूड़ेदान में ड़ाल दी और अंकों में पिछड़ गए। क्योंकि मैं उनकी बेटी हूँ तो उन्होंने यह बात बहुत अफसोस के साथ, जब मैं विज्ञान की छात्रा थी बताई। तभी से मैंने यह सीख ली कि प्रेक्टिकल परीक्षा में आपका जो बेहतर है उसे ही परोस देना चाहिए। और बेहतर बनाना हैं तो पहले वाले काम को सहेज कर रखने के बाद। यह मैं आज वैज्ञानिक होने के बाद भी अपने प्रयोग में लागू करती हूँ।

जलेसर कस्बा छोड़ रमेश जी दिल्ली आ गए क्योंकि दिल्ली में भारतीय कॉउन्सिल कृषि अनुसंधान आई0 सी0 ए0 आर0 के अन्तर्गत आने वाले दफतर कृषि भवन में उनकी नौकरी लग गयी।

कृषि को उस समय हिन्दी के माध्यम से लिखे जाने की आवश्यक्ता महसूस की गयी। रमेश जी को इस दतर से छपने वाली पत्रिकाओं के संपादन का भार दिया गया। बचपन से ही उन्हें कविताएँ पढ़ने और स्वयं लिखने का भी शौक था क्योंकि वह उस माहौल में पले बढ़े थे। दिल्ली जैसे शहर में राणा प्रताप बाग में रहते हुए, कृषि पत्रकारिता करते हुए वह कवि सम्मेलनों के आयोजनों में जुट गए। उसी दौरान एक कवि सम्मेलन के आयोजन के लिए उन्होंने प्रसिद्व कवि हरिवंशराय बच्चन जी को आंमत्रित किया। उनसे बातचीत के दौरान बच्चन जी ने उन्हें सुझाव दिया कि आप विज्ञान को हिन्दी में जनजन तक पहुँचाइए। रमेश जी को हिन्दी व विज्ञान के इस मेल का सुझाव भा गया और उन्होंने विज्ञान को जनजन पहुॅचाने का जिम्मा उठा लिया। सप्ताहिक हिन्दुस्तान, धर्मयुग, नवनीत जैसी पत्रिकाएँ जो कहाँनियों व राजनीति से जुड़े लेखों से भरी पड़ी थीं, उन्होंने विज्ञान को हिन्दी में उचित स्थान देना आरम्भ कर दिया। 1965 से 1975 के दस साल के अन्तराल में रमेश जी ने हिन्दी में बहुत उच्च स्तर के लेख इन पत्रिकाओं में लिखे और घर – घर में विज्ञान लोकप्रिय हो गया। इस बीच उनकी प्रेरणा से कई और विज्ञान लेखक हिन्दी से जुड़ गये।

कृषि के मुश्किल वैज्ञानिक तरीकों को सरलीकरण से किसानों तक पहुँचाने के लिए दूरदर्शन से डॉ0 रमेश ने कृषि दर्शन कार्यक्रम का आरम्भ किया। उसकी मजबूत नींव उन्होंने ही रखी और उसमें भी वह लोक गीतों व नृत्यों को भी जगह देते रहे व बहुत ही रोचक तरीके से दर्शकों को खाद, फसलों की कटाई के तरीके, बीमारियों के उपचार आदि की जानकारी देते रहे। यह कार्यक्रम वे जब तक स्वस्थ रहे लगातार करते रहे। इस कार्यक्रम की विशेषता यह रही कि उन्होंने वैज्ञानिकों को किसानों के बहुत नजदीक ला दिया। यह कार्यक्रम आज भी किसानों के लिए जानकारी देने वाला सबसे लोकप्रिय कार्यक्रम है। इससे कृषि विषय

पढ़ने वाले छात्रों की जानकारी ही नहीं बढ़ी बल्कि शहरी महिलाएँ व पुरुष जो घर में बागवानी का शौक रखते है, उन्हें भी कई जानकारियाँ इस कार्यक्रम से मिलने लगी।

अपने चालीस वर्ष में हिन्दी में विज्ञान के योगदान में 1000 से अधिक कृषि विज्ञान व तकनीक पर लेख लिखे। 500 से अधिक कार्यक्रम दूरदर्शन पर दिये। 200 से अधिक किताबों का संपादन किया। उन्होंने कई प्रसिद्व वैज्ञानिकों पर फिल्में बनाईं और 12 किताबें विज्ञान के प्रचार और प्रसार के लिए लिखीं। हमारे देश में जहाँ अभिनेताओं व नेताओं की चर्चा रहती हैं वहाँ आम आदमी तक वैज्ञानिकों को पहुँचाया। लोग हरित क्रान्ति से जुड़े प्रसिद्व वैज्ञानिक ड़ॉ0 स्वामीनाथन के योगदान को हिन्दी में पढ़ने लगे और ऐसे ही कई वैज्ञानिक उनकी कलम से छात्रों और आम आदमी तक पहुँचे। इसी बीच वह कई कार्यक्रम रेड़ियो पर देते रहे। जिसमें कई कार्यक्रम बच्चों में विज्ञान पहुँचाने के भी रहें।

उनका एक बहुत बड़ा योगदान हिन्दी में मॉलीक्यूलर जीव विज्ञान लिखना रहा। जिसे पढ़कर मैं स्वयं सातवीं कक्षा से डी0 एन0 ए0 जिसे उन्होंने विषाणु का नाम दिया को जानने की इच्छुक रहीं। शायद इसी का असर था कि मैंने कोशिका विज्ञान में विशेषज्ञता ली और आणविक जीव विज्ञान में अनुसंधान करने में आज मैं सबसे अधिक आनन्द ले रही हूँ।

उत्तराखंड के जी0 बी0 पंत विश्व विद्यालय में वह 1968 से 70, कृषि व तकनीकी की पत्र पत्रिकाओं के संचालन के लिए एसोसिएट डायरेक्टर रहे। उसके बाद 1970–1995 तक उन्होंने दिल्ली कृषि मंत्रालय के दफ्तर कृषि भवन में अपनी सेवाऐ दी। अंतर्राष्ट्रीय सी0 ए0 बी0 आई0 में 2002–2003 तक मीड़िया कन्सलटेंट रहें। फिलीपींस, के चावल के अन्तर्राष्ट्रीय संस्थान आई आर आर आई में विशेष रूप से सरकार द्वारा मीड़िया कन्सलटेंट भेजे गए।

मुख्य पुरस्कार

1. राष्ट्रीय पुरस्कार सबसे अच्छे कार्यक्रम के लिए विज्ञान व तकनीकी मंत्रालय द्वारा।
2. जीवनपर्यन्त विज्ञान के प्रसार के योगदान के लिए राष्ट्रपति ड़ॉ शंकर दयाल शर्मा द्वारा
3. इन्दिरा गॉधी आवार्ड आई एन एस ए द्वारा।
4. डॉ0 आत्माराम पुरस्कार।

अपने अंतिम दिनों में वह इग्नू में जैव तकनीक, बायोटेक्नोलॉजी विषय के मुख्य परामर्शकर्ता रहे।

उनकी पाँच किताबें उनकी मृत्यु के एक महीने बाद छपीं जिसमें से एक किताब उनकी लिखी कविताओं का संग्रह है गुस्ताखी माफ। उन्होंने विज्ञान में अंग्रेजीयत की घुसपैठ व अफसरी को हिन्दी से मात देने की गुस्ताखी की और आम आदमी व किसानों के बीच विज्ञान को लोकप्रिय किया।

इस देश के दूर इलाकों में जहाँ स्नातक तक छात्र हिन्दी में विज्ञान पढ़ने के बाद, शहरी क्षेत्रों में आकर भाषा के द्वंद्व में फंसकर विज्ञान से परहेज कर लेते हैं उनके लिए विज्ञान व शिक्षा से जुड़े समाज का क्या दायित्व है यह समझाने की कोशिश ड़ॉ रमेश दत्त शर्मा जी ने अपने जीवनकाल में की। हिन्दी में विज्ञान को रोचक बनाकर आम जनता व छात्रों तक पहुँचाने का प्रयत्न यदि सच्चे मन व सोच से किया जाए तो वह दिन दूर न होंगे जब अन्तर्राष्ट्रीय पत्रिकाओं (जर्नल) में हिन्दी को वही स्थान मिलने लगे जो जर्मन व फ्रेंच को मिलता है।

और अंततः अपनी मृत्यु से भी उन्होंने विज्ञान को योगदान दिया। अपनी आँखें व शरीर को चिकित्सा अनुसंधान के लिए उन्होंने दान कर दिया। उनकी ऑखों से दो लड़कियाँ आज दुनिया देख रही हैं, जिनसे ड़ॉ रमेश शर्मा जी ने हिन्दी में विज्ञान लिखकर उसके प्रचार प्रसार का सपना संजोया था।

उत्तरी क्षेत्रीय केन्द्र,
भारतीय प्राणी सर्वेक्षण विभाग
218, कौलागढ़ रोड़, देहरादून
उत्तराखण्ड़

हाथियों की बुद्धिमानी

दिनेश चन्द्र शर्मा

वयोवृद्ध हिरण ने मौन तोड़ा, "अकेले हिरणों का ही क्या कहना, मानव ने तो हाथियों का जीना भी दुश्वार कर रखा है।"

"क्या हाथियों को भी मानव दुखी कर रहा है, अंकल? सुना है हाथी तो बड़ा बुद्धिमान और शांत प्रकृति का पशु होता है।" शावक ने प्रतिक्रिया व्यक्त की।

वयोवृद्ध हिरण ने हामी भरी, "हाँ बेटा, हाथी बहुत ही बुद्धिमान और सूझबूझ वाला पशु होता है। उसकी बुद्धिमानी की तो अनेक कहानियां प्रसिद्ध है।"

कहानी का नाम सुनकर शावक चहक कर बोल उठा, "हाथी की बुद्धिमानी की कोई कहानी मुझे भी सुनाइये अंकल! मुझे कहानियां बहुत अच्छी लगती हैं।"

वयोवृद्ध हिरण थोड़ा सोचकर बोला, "यदि ऐसा है तो ठीक है, मैं तुम्हें हाथियों की बुद्धिमानी और सूझबूझ की एक ताजी कहानी सुनाता हूँ। ध्यान से सुनो

"नजीबाबाद–कोटद्वार मार्ग पर कोटद्वार के पास सुखरो नामक नदी बहती है जो कि आगे जाकर 'खोह नही में मिल जाती है। वर्ष 2006 में लालवाला से काफी ऊपर एक हथिनी अपने बच्चे के साथ इसी नदी में पानी पीने आयी। पानी पीते समय ढाँग ढह जाने के कारण बच्चे का सन्तुलन बिगड़ गया और वह नदी में गिर गया। बच्चा नदी के पानी के तेज बहाव में बहने लगा। अपने बच्चे को बहता देखकर हथिनी घबरा गयी और उसने कई बार जोर–जोर से चिंघाड़ मारी। हथिनी की चिंघाड़ सुनकर आनन–फानन में चार हाथी वहाँ आ गये। और उसके बाद का दृश्य तो बड़ा ही अद्‌भुत था बेटा, मैने स्वयं वह दृश्य अपनी आँखों से देखा था। आज भी जब मैं उसे याद करता हूँ तो मेरा रोम–रोम पुलकित हो जाता है। उसके बाद से तो मैं हाथियों की बुद्धिमानी के सामने नतमस्तक हो गया हूँ।

शावक ने उत्सुकता से पूछा, "क्या था वह अद्‌भुत दृश्य जरा मुझे भी तो बतलाइये?"

"हाँ बेटा, बतलाता हूँ। दरअसल हाथियों के आने तक की अवधि में बच्चा नदी में बहकर लगभग एक फर्लांग दूर तक जा चुका था। चारों हाथी व हथिनी बड़ी तेजी से बच्चे के नीचे की ओर आये। एक हाथी नदी के बीचों–बीच आकर खड़ा हुआ और शेष हाथियों ने एक–दूसरे की पूछ व सूंड जकड़कर पकड़ी तथा एक श्रृंखला बनायी। आगे वाले हाथी ने बच्चे की गर्दन को मजबूती से अपनी सूंड़ से पकड़ा और सभी ने मिलकर बच्चे को सुरक्षित नदी से बाहर निकाल लिया।"

शावक ने खुशी से उछलते हुये कहा, "और छोटे बच्चे की जान बच गयी। वाह मई वाह!"

वयोवृद्ध हिरण ने कहा, "हाँ बेटा इस तरह हाथियों ने अपने बच्चे की जान बचा ली। हम पशुओं को लिये तो यह बड़ी अद्‌भुत और प्रेरणास्पद घटना थी।"

हिरण ने भी अपनी राय दी, "बेटा, हाथी वास्तव में बड़ा बुद्धिमान पशु होता है। यहाँ तक कि जंगल में भी वह अपने सुनिश्चित रास्तों से मजबूरी में ही इधर–उधर भटकता है।"

वयोवृद्ध हिरण ने भी सहमति व्यक्त की, "हाँ, दरअसल हाथियों को यह भली भाँति पता होता है कि उनका क्षेत्र कहाँ खत्म होता है और मानवीय क्षेत्र कहाँ से

आरंभ होता है। वे सदैव मानवीय क्षेत्रों में जाने से कतराते हैं और किसी परेशानी में या बाध्य होकर ही ऐसा करते हैं।"

शावक ने पूछा, "अंकल, ऐसे कौन से कारण है जिनसे हाथियों को मानवीय क्षेत्रों में जाने को बाध्य होना पड़ता है?"

वयोवृद्ध हिरण ने समझाया, "दरअसल हाथियों के आवासीय व भ्रमण क्षेत्रों में मानव का अतिक्रमण बढ़ता ही जा रहा है। जंगल काटने व जलस्रोतों को नष्ट करने के साथ ही उन क्षेत्रों से होकर सड़कें व रेलमार्ग भी बना दिये गये हैं।"

हिरण ने कहा, "इन्हीं बातों का विरोध करने के लिये ही तो दिसंबर 2006 में एक हाथी ने देहरादून – ऋषिकेश मार्ग जाम कर दिया था।

"मार्ग जाम कर दिया था?" शावक ने उत्सुकता से पूछा।

"हाँ, एक हाथी जंगल से निकलकर सड़क पर आ गया और काफी देर तक चहलकदमी करता रहा। यदि किसी ने उसें ओवरटेक करने की कोशिश भी की तो उसके पीछे दौड़कर और चिंघाड़कर उसे धमकाया। इस तरह उसने अपना विरोध व्यक्त किया।" वयोवृद्ध हिरण ने अपने बात पूरी की।

हिरण ने बात को आगे बढ़ाया, "मार्च–2009 की घटना याद है न भाई जब राजाजी राष्ट्रीय पार्क की चीला रेंज के अन्तर्गत चण्डी पुल बेरियर के पास एक हथिनी ने बीच सड़क पर एक बच्चे को जन्म दिया था जिसके कारण लगभग चार घण्टे तक सड़क पर यातायात रोक देना पड़ा था। जब हथिनी अपने बच्चे को लेकर जंगल में चली गयी थी तभी यातायात सुचारु हो सका था।"

शावक ने खुशी से चहकते हुये कहा, "अरे वाह, नन्हे अप्पू का जन्म सड़क पर हुआ था। हिरण ने बताया, "हाँ बेटा, लेकिन ऐसी घटनायें तभी घटती हैं जब हाथी जंगल में असुविधा महसूस करते हैं। आज मानव की हरकतों के कारण हाथियों में गुस्सा और आक्रोश भी बढ़ रहा है।"

"हाथियों में गुस्सा और आक्रोश बढ़ रहा है? वह कैसे?" शावक ने पूछा "मानव की ऐसी कौन सी हरकतें हैं जरा मुझे भी बतलाइये?"

हिरण ने कहा, "यदि जानना ही चाहते हो तो सुनो...।"

क्रमशः

राज्य अकादमिक समन्वयक
राष्ट्रीय बाल विज्ञान कांग्रेस, उ० प्र०

कृपया इसे अवश्य पढ़ें

छात्रों, शिक्षकों, शोधार्थियों व आमजन में विज्ञान के लाकव्यापीकरण के निमित्त प्रकाशित त्रैमासिक पत्रिका विज्ञान परिचर्चा का अंक आपके हाथों में है। पत्रिका जिस भी प्रकार से जिन–जिन तक पहुँचाई जा सकी उन सभी ने इसे हाथों–हाथ लिया और पत्रिका की सदस्यता प्राप्त करने व अनवरत रूप से इसकी प्राप्ति का अनुरोध किया है। मैं आपके संज्ञान में लाना चाहती हूँ कि विज्ञान परिचर्चा निःशुल्क वितरण हेतु प्रकाशित की जाती है किन्तु सुधी पाठकों तक इसे पहुँचाने का डाक–व्यय बहुत अधिक है जिससे हर जिज्ञासु तक इसे पहुँचाना संभव नहीं हो पा रहा है। इस अंक को हम बुक–पोस्ट /स्पीड पोस्ट/कुरियर से आपको भेज रहे हैं। यदि पत्रिका आपको मिल जाती है तो हमारा अनुरोध है कि –

1. टेलीफोन, ई–मेल अथवा लिखित रूप में इसी प्राप्ति की सूचना हमें अवश्य दें और अपने पते में आवश्यक संशोधन (पिन कोड, फोन नम्बर आदि सहित भी) करके भेजने का कष्ट करें ताकि आगामी अंको को आप तक पहुँचाना सुनिश्चित किया जा सकें।
2. देहरादून शहर के बाहर की संस्थायें और जिज्ञासु यदि पत्रिका की सुनिश्चित प्राप्ति चाहते हैं तो आगामी अंकों की प्राप्ति हेतु रू० 25/ (पच्चीस रूपया मात्र) के चार पोस्टल टिकट भेजने का कष्ट करें।
3. देहरादून व पिथौरागढ़ की स्थानीय संस्थायें व जिज्ञासु पत्रिका को पहल कार्यालय मानस मंदिर, कैन्ट रोड, पिथौरागढ़ तथा मुत्युंजय धाम, 18 शास्त्रीनगर, देहरादून से किसी भी कार्य दिवस पर निःशुल्क प्राप्त कर सकते हैं।
4. अपनी प्रतिक्रियायें, सुधार हेतु सुझाव तथा प्रकाशन हेतु सामग्री स्पीड पोस्ट या कूरियर से पत्रिका के निम्नांकित प्रकाशकीय कार्यालय के पते पर ही भेजने की कृपा करें –

प्रबन्ध सम्पादक

मृत्युंजय धाम, 18 शास्त्रीनगर, हरिद्वार रोड,
देहरादून, पिन – 248001
फोन – 0135 – 2669236, मो० – 9412047994
Email-pahal_uttarakhand@yahoo.co.in,
Website-www.pahal_understanding.org

अपना विज्ञान ज्ञान बढ़ाइए

न उड़ सकने वाले, पक्षी!

पक्षी दिवस (5 जनवरी) पर विशेष :

'विज्ञान परिचर्चा' के पिछले अंको में हमने प्रश्नावली व लेखों के माध्यम से प्रकृति की अभूतपूर्व कृतियों से सम्बंधिक रोचक ज्ञान को सुधी–पाठकों के समक्ष रखने का प्रयास किया। पत्रिका (वर्ष–1) के अंक–2 में हमने लगभग 57 ऐसे पक्षियों के बारे में लेख प्रस्तुत किया था, जो न जाने कितनी दूरी तय कर, आकाश में उड़कर व अपने मूल आवसों को छोड़ कर शरद काल में भारत व अन्य समीपस्थ क्षेत्रों में प्रवास हेतु आते हैं। आश्चर्य है, जहाँ एक ओर **'उत्तरी ध्रुवीय टर्न'** नामक पक्षी अपनी प्रवासी यात्रा में शीतकाल के समय 'दक्षिणी ध्रुव' की ओर, 200 कि0मी0 प्रति दिन की दर से उड़ान भर कर लगभग 18,000 कि0मी0 दूर पहुँच जाता है, और ग्रीष्म ऋतु आने पर पुनः अपने मूल आवास लौट आता है; वहाँ दूसरी ओर पक्षियों की कुछ जातियाँ ऐसी भी हैं, जो उड़ नहीं सकती। वे या तो धरती पर रहते हुए दौड़ती हैं या जल में तैरती हैं। ऐसे ही कुछ **'न उड़ने वाले पक्षियों'** से पाठकों का साक्षात्कार, इस अंक में होगा।

नोट : लेख में संदर्भित 'चित्रों' के लिए कृपया **पिछले कवर पृष्ठ के अन्दर** देखें।

दीपाली राणा

"कीवियों को धोनी के धुरंदरों ने धुना"..... इस प्रकार के समाचार की हेडलाईन समाचार पत्रों के खेल समाचारों में आपने अक्सर पढ़ी होगी। इस हेडलाईन में प्रयोग किया गया शब्द **'कीवी'** उस उड़ानविहीन पक्षी का नाम है, जो न्यूज़ीलैंड का राष्ट्रीय पक्षी है। उसी नाम से वहाँ के रहने वाले पुकारे जाते हैं।

ऐसे बहुत से उड़ानविहीन (फ्लाईटलेस) पक्षी हैं जो विश्व के कुछ सीमित क्षेत्रों में ही पाये जाते हैं, जैस आस्ट्रेलिया, न्यूज़ीलैंड, अफ्रीका, अरब व दक्षिण अमेरिका।

आपने किसी 'फ्रिज़' के विज्ञापन के साथ एक पक्षी का चित्र देखा होगा। वह पक्षी भी उड़ानविहीन ही है, परन्तु वह दक्षिणी ध्रुव के बर्फीले समुद्री तटों पर जल में ही जीवन व्यतीत करने वाला **'पैंग्विन'** नामक पक्षी है। तभी तो, 'फ्रिज' के विज्ञापन के साथ उसका दिखाया जाना शून्य से भी कम तापक्रम को दिखाने या अधिक ठंडा करने का संकेत होता है।

अंग्रेजी में एक कहावत है, **"ऐन ऑस्ट्रिच स्टमक"** (अर्थात् 'एक शुतुरमुर्ग पेट') जिसका अर्थ यह है, कि ऐसा पेट जो सब कुछ हज़म कर जाए। (इस मुहावरे का प्रयोग शायद यूँ कर सकते हैं, "चिन्ता न करो, इतना खा लेने के बाद भी तुम्हारा मित्र बीमार नहीं होगा, क्योंकि, "ही हैज़ ऐन ऑस्ट्रिच स्टमक")। **'ऑस्ट्रिच'** भी एक उड़ानविहीन अफ्रीकी/अरबी पक्षी है, जो रोड़ा, पत्थर, लोहा, सब–कुछ निगल लेता है, और अपने भोजन को इनकी सहायता से अपने पेट की विशेष रचना, **'गिजार्ड'**, में पीसता है। सभी उड़ानविहीन पक्षी थल पर रहने वाले पक्षियों जैसे ही होते हैं, परन्तु ये सामान्यतः काफी बड़े (2.5 मीटर से भी अधिक ऊँचे) होते हैं और इनके **अवशेषी पंखो** (विंग) पर रोंयेंदार **'पर'** (फ़ेदर) होते हैं। इसी कारण ये उड़ नहीं सकते और अपनी फुर्तीली दौड़ पर ही अपनी सुरक्षा के लिए निर्भर रहते हैं। रोचक तथ्य यह है कि विश्व के जिन क्षेत्रों में ये पाये जाते हैं वहाँ एक समय बिल्ली व भेड़ियों जैसे छोटे या बड़े मांसाहारी जन्तु नहीं पाये जाते थे। शायद उड़ने वाले पूर्वजों व उड़ने के बहुत से अनूकूलनों के होने के बावजूद भी उन्होंने उड़ानविहीन होना ही उचित समझा क्योंकि थल पर ही उनके लिए भोजन की प्रचुर मात्रा उपलब्ध थी और वहाँ उनको किसी माँसाहारी का खतरा नहीं था।

आइये! कुछ विचित्र व उपयोगी उड़ानविहीन पक्षियों का परिचय प्राप्त करें।

1. शुतरभुर्ग या अफ्रीकी ऑस्ट्रिच *(स्ट्रूथियो कैमेलस)* : यह सबसे बड़ा (2.5 मीटर, 150 कि0ग्रा0) पक्षी अफ्रीका व अरेबिया के शुष्क क्षेत्रों में पाया जाता है, व 2.0° से0 से 50° सें0 तक के तापक्रम में जीवित रह सकता है। इनकी लम्बी टाँगे, जेब्रा व नीलगायों जैसी तीव्र गति के लिए उपयुक्त होती हैं। ये 80 कि0मी0 प्रति घंटा की रफ्तार से दौड़ सकते हैं, और एक छलाँग में 8 मीटर से भी अधिक कूद जाते हैं। इनके पैरों में लम्बें पंजे वाली केवल 2 ही उँगलियों होती हैं। चोंच बड़ी मज़बूत होती है। सिर, गर्दन व पैरों पर छितरे हुए 'फ़ेदर' होते हैं। नर में पूँछ व पंखों के सफेद परों के अतिरिक्त सभी 'पर' काले होते हैं, जबकी मादा के सभी 'पर' भूरे होते हैं। इनकी आखों की ऊपरी पलकों पर सूर्य के प्रकाश से बचने के लिए रोंयें होते हैं और इनकी आँखे किसी भी थलीय रीढ़धारी की तुलना में काफी बड़ी (2 इंच) होती हैं। शुतुरमुर्ग प्रायः झुँड में रहते हैं और प्रत्येक झुँड में एक नर व 4–5 मादाएँ होती हैं। 2–4 वर्ष की आयु में ये परिपक्व हो जाते हैं। इनका प्रजनन काल मार्च–अप्रैल में प्रारम्भ होकर सितम्बर तक चलता है। 60–70 वर्ष तक की आयु वाले इन पक्षियों की मादाएँ एक प्रजनन काल में औसतन 60 अंडे देती हैं। प्रत्येक अंडा पीले–सफेद रंग का, लगभग 1.5 कि0ग्रा0 (मुर्गी के 24 अंडों के वज़न के बराबर) व 1.4 लिटर आयतन वाला होता है। इसे उबालने में लगभग 1 घंटा लग जाता है। मादाएँ अपने अंडों को 30–60 सें0मी0 गहरे व 3 मीटर चौड़े गड्ढों में रखती हैं। ये गड्ढे नर बनाते हैं। कमजोर अंडों को त्यागने पर एक गड्ढे में लगभग 20 अंडे रखे जाते हैं।

अंडों को सेने का कार्य दिन में मादाओं

द्वारा व रात्री में नर द्वारा किया जाता है। 35–45 दिन सेने के बाद चूज़े निकलते है। प्रायः नर द्वारा चूज़ों की सुरक्षा व उनको भोजन करना सिखाया जाता है।

ऑस्ट्रिच के माँस, महिलाओं के लिए 'परों' से निर्मित सजावट के सामान, खाल से निर्मित चमड़े की उपयोगिता विश्व भर में सिद्ध हो चुकी है।

ऑस्ट्रिच फ़ार्मिंग

आधुनिकता के युग में स्वास्थ्य के प्रति जागरुकता बढ़ने के कारण विविध भोजन रुचियाँ अपनाई जाने लगी हैं। स्वास्थ्य की दृष्टि से ऑस्ट्रिच के माँस को, शून्य वसा प्रतिशत, कम कैलोरी व अल्प कोलेस्ट्रोल, प्रोटीन व लौह की अधिकता वाला माना जाता है। विशेष प्रकार के व्यंजनों के विकसित हो जाने के कारण शुतुरमुर्ग के माँस की यूरोप, जापान, आस्ट्रेलिया व चीन में अत्यधिक माँग होने लगी है। माँस के अतिरिक्त, शुतुरमुर्गों से उच्चकोटि के 'पर', वसा–तेल, चमड़ा आदि भी प्राप्त होते हैं।

'परों' को प्राप्त करने के लिए प्रथम संगठित **'ऑस्ट्रिच फार्म'**, दक्षिणा अफ्रीका के कारु व पूर्वी केप क्षेत्र में 1863 में स्थापित किया गया। उसी काल में उत्तरी व दक्षिणी अमरीका व आस्ट्रेलिया में भी **'ऑस्ट्रिच फार्मिंग'** के लिए उनका आयात किया गया। 1881–1905 के मध्य बहुत से पक्षी आस्ट्रेलिया ले जाये गये। **'ऑस्ट्रिच फार्मिंग'** की लोकप्रियता इतनी बढ़ी की आस्ट्रेलिया में एक **'आस्ट्रेलियन ऑस्ट्रिच संघ'** की स्थापना हुई, जिसके आज लगभग 4000 सदस्य है और जिनके पास कुल 70,000 पक्षी हैं। इसके अतिरिक्त सिंगापुर, हाँग–काँग, इण्डोनेशिया, इज़राईल, यू0एस0ए0 व फ्राँस मे भी ऑस्ट्रिच फार्म हैं।

1991 में उदार अर्थिक नीतियों को अपनाने के फलस्वरुप भारत में कृषि को काफी प्रोत्साहन मिला है। मुर्गी पालन में आशातीत सफलताएँ मिल जाने पर **'ऑस्ट्रिच–पालन उद्योग'** की अपार संभावनाएँ भारत में भी उत्पन्न होने लगी हैं। यहाँ हिमालयीय क्षेत्रों के शून्य व राजस्थान के 45^{0} से भी अधिक तापमान वाले क्षेत्रों में 'ऑस्ट्रिच फार्म' स्थापित किये जाने की आदर्श परिस्थितियाँ उपलब्ध हैं। 25 फरवरी, 1997 को बंगलूरु में **'एडवांस्ड फूड टेक्नोलॉजी एवं ऑस्ट्रिच फार्मिंग'** पर भारत–फ्राँस सहयोग से एक संगोष्ठी का अयोजन किया गया। बाद में 3–4 नवम्बर, 1997 को, आस्ट्रेलिया की एक कम्पनी के संयुक्त तत्वावधान में **'ग्लोबल ऑस्ट्रिच (इण्डिया) प्राईवेट लिमिटेड'** ने **'अस्ट्रिच फार्मिंग पर एक संगोष्ठी व प्रदर्शनी'** का भी आयोजन किया। ऐसे कई आयोजनों के फलस्वरुप बहुत से कृषक व व्यवसायी ऑस्ट्रिच–पालन के प्रति आकर्षित हुए। कर्नाटक व तमिलनाडू सरकारों ने फार्मिंग के लिए बैंको से ऋण व सरकारी भूमि उपलब्ध कराने की पहल की है, ताकि इस उद्योग को एक लाभकारी व्यवसाय के रुप में अपनाया जा सके।

'फोरम ऑन टेक्नोलॉजी फॉर आस्ट्रिचेज' एक ऐसी संस्था स्थापित हो चुकी है, जिसके माध्यम से ऑस्ट्रिच–पालन के लिए विश्व–स्तरीय विचार–विर्मश किया जा सके और तकनीकी ज्ञान प्राप्त हो सके। 30–35 कि0ग्रा0 माँस, 1.40 वर्ग मीटर चमड़े व कोमल 'परों' को प्रदान करने वाले एक ऑस्ट्रिच की औद्योगिक उपयोगिता ने ऑस्ट्रिच फार्मिंग के उज्जवल भविष्य की स्थापना कर दी है।

2. रिया या अमरीकन ऑस्ट्रिच *(रिया अमेरिकाना)* (चित्र 2) :
दक्षिण अमरीका में पाया जाने वाला यह सबसे बड़ा पक्षी लगभग 1.5 मीटर ऊँचा (23–25 कि0ग्रा0) होता है और इसके पिछले पैर के पंजो में 3 उँगलियाँ होती हैं। इसके सिर व गर्दन पर 'पर' होते हैं, परन्तु अफ्रीकी आस्ट्रिच की तुलना में इनके 'पर' ज्यादा सुंदर नहीं होते और पूँछ पर भी नहीं होते। इनके 'पर' सलेटी–भूरे रंग के होते हैं। प्रायः नर का रंग मादा से अधिक गहरा होता है। अर्जेनटाईना में सफेद 'पर' व नीली आँखों वाले पक्षी (ऐल्बिनो) भी विकसित हो गयें हैं। चूज़ों पर धारियाँ होती हैं। पत्तियों, फलों व बीजों पर निर्भर करने वाले ये पक्षी विषैले ततैयों, मधुमक्खियों, बिच्छुओं को खाने के अतिरिक्त चूहों, सर्पों, छिपकलियों व छोटे–छोटे पक्षियों को भी खा लेते हैं। कुछ माँसाहारी शिकारी (वहाँ पाये जाने वाले जेगुआर, जंगली कुत्ते, आर्माडिलो नामक जन्तु) इनका शिकार करते हैं। अगस्त व जनवरी के मध्य इनका प्रजनन काल होता है। नर कई मादाओं से समागम करते हैं। मादाएँ भी क्रमानुसार नरों से समागम करती हैं, जिसका तात्पर्य यह है कि एक नर से समागम के बाद वे उस नर के सहयोग से अंडे देती है, और फिर अन्य नर के साथ समागम कर यह प्रक्रिया दोहराती है। नरों द्वारा अंडे रखने के लिए गड्ढे–नुमा घोंसले बनाए जाते हैं और सामूहिक रुप से कई मादाओं द्वारा उनमें अंडे रखे जाते हैं। एक दर्जन से भी अधिक मादाओं द्वारा उनमें 80 अंडे तक रखे जा सकते हैं। एक बार में एक मादा 5–10 अंडे दे देती है। **'रिया'** द्वारा दिये गये अंडे हरे –पीले (सूखने पर पीले–सफेद) व लगभग 130×90 मी0मी0 (600 ग्राम) होते हैं। अंडों को सेने का समय 29–43 दिन होता है। सभी अंडे 36 घंटों में फूट जाते हैं और चूज़े बाहर आते हैं, जो 14 महीनों बाद लैंगिक–परिपक्वता प्राप्त कर पुनः अपनी वंश–परम्परा का निर्वाह करते हैं।

यद्यपि शुतुरभुर्ग की तुलना में इनके **'परों'** की गुणवत्ता कम होती है, फिर भी इनसे झाड़न बनाये जाते हैं। उत्तरी अमरीका व यूरोप में माँस व अंडों के लिए इनका संवर्धन किया जाता है। **'रिया'** से प्राप्त तेल को साबुन व सौन्दर्य प्रसाधन बनाने में प्रयुक्त किया जाता है।

ऑस्ट्रिच की खाल से बना बैग

पक्षियों व अन्य जन्तुओं को संरक्षण! सम्मान!!

- **पक्षी दिवस** : यह एक अवकाशों का प्रतीक दिन है, जिस दिन पक्षियों का उत्सव मनाया जाता है। इस दिन की स्थापना प्रथम बार 1894 में **पेनसिल्वेनिया** (संयुक्त राज्य अमरीका) के स्कूलों के अधीक्षक **चार्ल्स बेबकोकिन** ने की थी। उनका विचार था कि पक्षियों का संरक्षण करना हम सबका नैतिक दायित्व है। यह दिवस **प्रतिवर्ष 4 मई** को मनाया जाता है।

- **राष्ट्रीय पक्षी दिवस** : संयुक्त राज्य अमरीका व अन्य देशों के निवासी पक्षियों को पालतू बनाकर उनके प्रति हो रहे अत्याचार व शोषण की ओर ध्यान आकर्षित करने के लिए, अमरीका के दो संगठनो, **(बॉर्न फ्री यू0एस0ए0 यूनाईटेड विद ऐनीमल प्रोटेक्शन इन्स्टीटयूट तथा ऐवियन वेलफेयर कोलीशन),** ने **प्रतिवर्ष 5 जनवरी** को **'राष्ट्रीय पक्षी दिवस'** मनाने का आह्वान किया। इस दिन लाखों लोग पक्षियों का अध्ययन, पक्षियों को निहारना (बर्ड वाचिंग) व अन्य ऐसी गतिविधियाँ करते हैं, जिनसे पक्षियों के संरक्षण की ओर ध्यान केन्द्रित हो। यूनाईटेड किंगडम में **'राष्ट्रीय पक्षी दिवस' 22 जनवरी** को मनाया जाता है।

- **विश्व प्रवासी पक्षी दिवस** : **प्रवासी पक्षियों (माईग्रेटरी बर्डस्)** व उनके आवासों की सुरक्षा के प्रति जागरुकता – अभियान को 2006 में प्रारम्भ किया गया। संयुक्त राज्य अमरीका व कनाडा में यह दिवस **मई** माह के द्वितीय शनीवार को, लैटिन अमेरिका में **अक्टूबर** माह के द्वितीय शनिवार को, कोलम्बिया में **अक्टूबर** माह में व कोस्टारिका में **अप्रैल** माह में मनाया जाता है।

- **विश्व गौरैया दिवस** : हर घर के आँगन में चहचहाने वाली **'गौरैया'** का जीवन खतरे में पड गया है। आधुनिक आवासों, मोबाईल टावर–तरंगों व अन्य कारणों से यह 'गौरैया' लुप्त–प्रायः हो गई है। गौरैया के संरक्षण के लिए वर्ष 2010 से **'विश्व गौरैया दिवस'** मनाने की घोषणा की गई है। यह दिवस प्रतिवर्ष **20 मार्च** को मनाया जाता है। सबसे अपेक्षा की जाती है कि वे अपने घर–आँगन में ऐसे लकड़ी के बक्से लगाएँ जिनमें गौरैया अपना आश्रय बना सकें। छतों पर अनाज के दाने डालें ताकि वे पुनः आपके आंगन की ओर आकर्षित हो सकें।

- **विश्व जन्तु दिवस** : सभी प्रकार के जन्तुओं के प्रति सम्मान व सरंक्षण की दृष्टि से पर्यावरण–विज्ञानियों के एक सम्मेलन में, जो 1931 में इटली के फ्लोरेंस स्थान पर आयोजित किया गया था, **'विश्व जन्तु दिवस'** मनाने की घोषणा की गई। यह दिवस प्रतिवर्ष **4 अक्टूबर** को मनाया जाता है।

3. ईमू *(ड्रोमेयस)* **(चित्र 3)** : यह उड़ानविहीन पक्षी, अफ्रीका के शुतुरमुर्ग के बाद विश्व का दूसरा (लगभग 2.0 मीटर व 18 से 55 कि0ग्रा0) व ऑस्ट्रेलिया का सबसे बड़ा पक्षी एवं का राष्ट्रीय पक्षी है। यह ऑस्ट्रेलिया का सांस्कृतिक प्रतीक – चिन्ह भी है। सैकड़ों स्थानों का नाम इन पर आधारित है, वहाँ की धार्मिक चर्चाओं में इनका संदर्भ आता है, व शस्त्रों के आवरणों, सिक्कों आदि पर इनको चित्रांकित किया जाता है। भूरे परों वाले ये पक्षी 50 कि0मी0 प्रति घंटा की दर से दौड़ सकते हैं और 2.75 मीटर तक की छलाँग लगा सकते हैं। जल में डुबकी लगाना व तैरना इन्हें बहुत पसंद है। पत्तियों, फलों, बीजों के अतिरिक्त ये कंकड़, पत्थर, काँच के टुकड़े, धातु के टुकड़े भी खा जाते हैं, जिनकी सहायता से ये **'गिजार्ड'** (शुतुरभुर्ग के समान) में भोजन को पीसते हैं। नर व मादा दोनों एक समान लगते हैं परन्तु आवास के अनुसार इनके **'परों'** का रंग गहरा भी हो सकता है। इनकी आँखों पर एक झिल्ली–नुमा तीसरी पलक भी होती है, जिसे आवश्यकता पड़ने पर, आँखों पर आगे से पीछे की ओर चढ़ाया जा सकता है। वास्तव में धूल भरे शुष्क क्षेत्रों में धूल के कारणों से, यह झिल्ली आँखों की सुरक्षा करती है। मई–जून इनका प्रजनन काल होता है। ये प्रतिदिन या हर दूसरे दिन समागम करते हैं, और दूसरे या तीसरे दिन एक मादा औसतन 11 (अधिकतम 20 मोटे कवच वाले, गहरे हरे रंग के अंडे (13.5×9.0मि0मी0; 700–900 ग्राम) देती है। जब मादा अंडे देने लगती है तो नर उन्हें सेने का कार्य प्रारम्भ कर देता है। वह न खाता है, न पीता है और न ही मल–त्याग करता है, बस केवल दिन में उनके पास ही रहता है, और कम से कम 10 बार उन्हें पलटता है। रात्री में ही वह अंडों से दूर जाता है क्योंकि 'ईमू' के अंडों के शिकारी ज़्यादातर रात्रिचर नहीं होते। एक बार यदि नर अंडों की सुरक्षा में लग जाता है तो मादा अन्य नरों के साथ समागम करके और अधिक अंडे देती है। 60 दिन के पश्चात् अंडों से धारीदार चूजे बाहर आते हैं। 'ईमू' का जीवनकाल 10 से 20 वर्षों तक हो सकता है। चील, बाज व जंगली कुत्ते इनका शिकार करते पाये गये हैं।

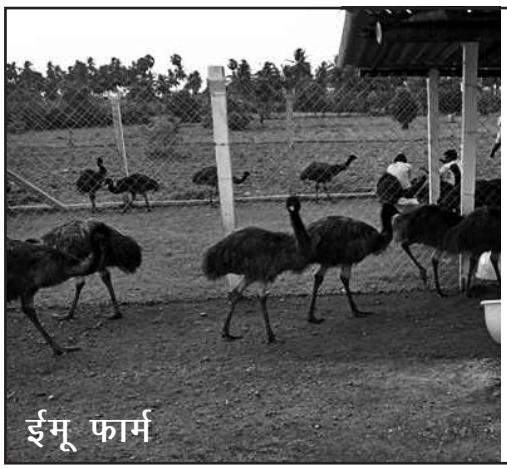
ईमू फार्म

ईमू – आस्ट्रेलिया का राष्ट्रीय प्रतीक चिन्ह

ईमू फार्मिंग

ईमू बिरियानी, ईमू कटलेट, ईमू पीज्ज़ा आदि ऐसे व्यंजन हैं, जो भारत में शीघ्र ही अन्य जन्तु–उत्पादों के समान प्रचलित होने वाले हैं। 'ईमू' को उनके माँस, चमड़ी व तेल के लिए अधिक उपयोगी माना गया है। इनके माँस को कम वसा (1.5% से भी कम) व कम कोलेस्ट्रोल (85 मि0ग्रा0 प्रति 100 ग्राम) के कारण अधिक वरीयता दी जाने लगी है। यही कारण है कि 1987 में पश्चिमी आस्ट्रेलिया में व्यावसायिक दृष्टि से ईमू की फार्मिंग प्रारम्भ हुई। इसके अतिरिक्त उत्तरी अमरीका, पेरु, चीन आदि देशों में 'ईमू' का उत्पादन व्यापक स्तर पर किया जा रहा है। आज भारत में गुड़गाँव, जयपुर, पुडुचैरी, बंगलूरु आदि में ईमू–आधारित रेस्टोरेंट श्रृंखला प्रारम्भ करने के योजना गति पकड़ रही है।

तामिलनाडु के इरोड जिले में पेरुनतुराई एक ऐसी छोटी जगह है जहाँ पर 28 ऐसी कम्पनियाँ हैं जो 'ईमू' के चूज़ों को कृषकों में वितरित करने का कार्य करती हैं। उन्हें प्रतिमाह एक चूज़े को पालने–पोसने व बड़ा करने के लिए 1000 रुपया दिया जाता है। **'सुसी ईमू फार्म'** नामक एक ऐसा 'फार्म' है जिसे ईरोड़ जिले में 5 वर्ष पूर्व प्रारम्भ किया गया था और इसका मालिक एक बुनकर होने के साथ–साथ इस अनोखे व्यवसाय में जुट गया और आज वह एक अच्छा ईमू–व्यवसायी है। उसने कुछ समय पूर्व बंगलूरु–कोच्ची मार्ग पर एक ऐसा रेस्टोरेन्ट प्रारम्भ किया जहां ईमू बिरयानी, ईमू कटलेट, ईमू पीज्ज़ा, ईमू–फ्राई, ईमू–रोस्ट जैसे व्यंजन प्रचलित हो गये और बहुत से व्यवसायी इस ओर आकर्षित होने लगे हैं। दो वर्ष के 'ईमू' की अनुमानित लागत 21,000 होती है व इनका माँस 300–400रु0 प्रति कि0ग्रा0 बिकता है। कोएम्बटूर में यह एक अच्छा व्यवसाय होने वाला है। वीरप्पन के गढ़ 'सत्यमंगलम' में 100 एकड़ भूमि पर आस्ट्रेलिया के विशेषज्ञों की सहायता से ईमू के माँस, अंडो, परों, नाखूनों व खाल से उत्पन्न उत्पादों को बनाने की योजना बनाई गई है। **'एशियन ईमू फार्म्स्'** द्वारा ऐसी औद्योगिक इकाईयाँ शीघ्र स्थापित होने वाली हैं जहाँ ईमू के माँस व अंडों से, पकाने व सौंदर्य प्रसाधन बनाने के लिए, तेल का उत्पादन किया जायेगा।

व्यवसायों की कमी नहीं है। बस आवश्यकता है तो इमानदार, परिश्रमी उद्यमियों की। उत्तराखण्ड में भी यह व्यवसाय असाध्य नहीं है।

4. कैसोवेरी *(कैजूएरियस)* (चित्र 4) : यह पक्षी उत्तर–पूर्व ऑस्ट्रेलिया के न्यूगीनिया व समीपस्थ टापुओं के ऊष्ण–कटिबन्ध वनों में पाया जाता है। प्रजनन काल को छोड़कर ये सभी अकेले ही विचरण करते हैं। शुतुरमुर्ग व ईमू के बाद यह **तीसरा सबसे ऊँचा** (1.5–2.0 मीटर) व **दूसरा सबसे भारी** (58.5 कि0ग्रा0) पक्षी है। सभी कैसोवेरी जातियाँ शर्मीली व रात्रिचर होती हैं। वयस्कों का रंग काला व चूज़ों का भूरा होता है। इनके पंख काफी छोटे व शरीर से लटके **'पर'** कंटीले (साही जैसे) होते हैं। पंख (अगला पैर) की दूसरी उँगली पर एक नुकीला पंजा होता है। पिछले पैरों में नुकिले पंजे वाली 3 उँगलियाँ होती हैं, जिनमें से दूसरी पर 12.5 सें0मी0 लम्बा, कटार–नुमा एक **घातक पंजा** होता है, जिसकी सहायता से ये मानव व अन्य शत्रुओं पर जानलेवा हमला करते हैं। कीर्तिमानों की **'गिनीज बुक'** में कैसोवेरीज़ को विश्व का सबसे घातक पक्षी लिखा गया है।

ये पक्षी मुख्यतः फलाहारी होते हैं, परन्तु आवश्यकता पड़ने पर पुष्प, फफूँद, घोंघे, कीट, मेंढक, पक्षी, मछली, चूहे आदि भी खा लेते हैं। थल पर रहकर 50 कि0मी0 प्रति घंटा की रफ्तार से दौड़ने व 1.5 मीटर तक की छलांग लगाने वाले ये

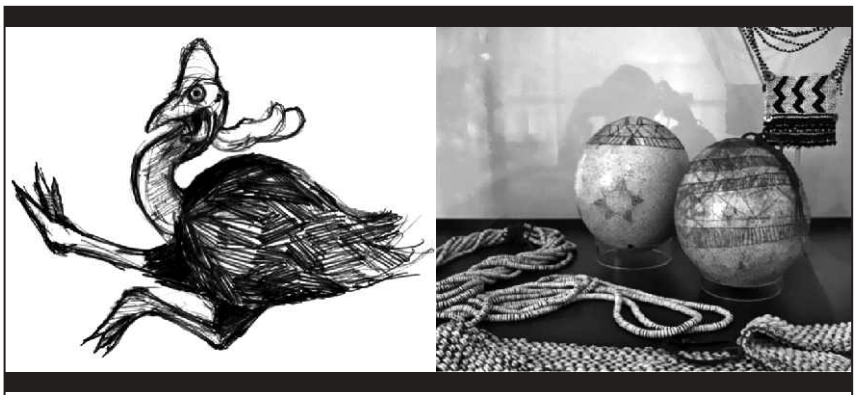

कैसोवेरी **ऑस्ट्रिच के अन्डों से सजावट की वस्तु**

पक्षी अच्छे तैराक भी होते हैं और समुद्र व बड़ी–बड़ी नदियों में तैर सकते हैं।

सभी उड़ानविहीन जीवित पक्षियों से ये पक्षी, अपने **सिर पर सींग जैसी, कोमल व स्पंजी, लगभग 18.0 सें0मी0 उठी हुई संरचना** (जिसे **'कैस्क'** कहा जाता है) के कारण, आसानी से पहचाने जाते हैं। ऐसा माना जाता है कि यह संरचना, घने जंगलों में विचरण करते व 30 मीटर से भी अधिक ऊँचाईयों से गिरने वाले कठोर फलों से इनकी सुरक्षा करती है। कुछ का मानना है, कि भोजन की तलाश करते समय ये **'कैस्क'** की सहायता से कूड़े–करकट को इधर–उधर हटाते हैं, और कुछ तो यहाँ तक मानते हैं कि शायद ध्वनि ग्रहण करने या ध्वनि द्वारा सम्पर्क स्थापित करने में भी इनकी भूमिका है।

इनका प्रजनन काल मई–जून में होता है। नर सामान्यतः 7 वर्ग किलोमीटर तक अपने सीमाओं की सुरक्षा करते हैं। मादाओं द्वारा एक बार में 3–8 बड़े (9.0–14.0 से0मी0), गहरे हरे या हरे–नीले अंडों को सूखी पत्तियों के ढेर में रखा जाता है। नरों द्वारा अंडों को 50–52 दिनों तक सेया जाता है, फिर लगभग 9 माह तक भूरी धारी वाले चूज़ों की देखभाल व सुरक्षा की जाती है। कैसोवेरीज का जीवन काल लगभग 40–50 वर्ष का होता है।

5. कीवी ***(एपटेरिक्स)*** **(चित्र 5)** : घरेलू मुर्गियों के माप (45से0मी0; 1.3–4.5 कि0ग्रा0) के **न्यूज़ीलैंड निवासी,** वहाँ के ये **राष्ट्रीय पक्षी** सभी उड़ानविहीन पक्षियों में **सबसे छोटे** होते हैं और अपने शरीर के अनुपात की तुलना में, विश्व के अन्य पक्षियों के सापेक्ष **सबसे बड़े अंडे** देते हैं।

1886 व 1887 में क्रमशः इन पक्षियों को **राष्ट्रीय प्रतीक–चिन्ह** के रुप में **दक्षिणी केन्टरबरी बटालियन व हेस्टिंग्स राईफल वॉलन्टीयर** सेनाओं के **बिल्लों** (बैजेज़) पर अंकित किया गया था। 1906 में जब अमेरिका व ब्रिटेन में **'कीवी शू पॉलिश'** का व्यापार हुआ तो यह प्रतीक चिन्ह और भी प्रचलित हो गया। प्रथम विश्व युद्ध के समय न्यूज़ीलैंड के सैनिकों को **'कीवी'** नाम से जाना जाने लगा। यही कारण है कि अपने देश में व विदेशों में न्यूज़ीलैंड वासियों को **'कीवी'** कहकर पुकारा जाता है।

13वीं शताब्दी में जब मनुष्य ने न्यूज़ीलैंड की धरती पर कदम रखा तब वहाँ के स्थायी स्तनधारी निवासी केवल 3 प्रकार की चमगादड़ जातियाँ ही थीं। मनुष्य द्वारा अन्य स्तनधारी जैसे कुत्ते, बिल्लियाँ, घोड़ें वहाँ ले जाये गये। वहाँ मनुष्य की **'माओरी'** नामक जन–जातियों ने **'कीवी'** पक्षी को काफी हानि पहुँचाई। माँस, अण्डों व **'परों'** के लिए उनका इतना शिकार किया गया कि **'कीवी'** का अस्तित्व ही ख़तरे में पड़ गया। **'कीवी'** शब्द भी माओरी भाषा से ही लिया गया है।

ये पक्षी शर्मीले व रात्रिचर होते हैं। शरीर पर लाल या सलेटी–भूरे रंग के बाल–समान **'पर'** होते हैं। गर्दन पर छोटा सिर व छोटी आँखें होती हैं। स्टील की छोटी तलवार जैसी **मुड़ी हुई इनकी लम्बी चोंच** के सिरों पर नासाछिद्र होने के कारण इनकी सूँघने की शक्ति अधिक तीव्र होती है (अन्य सभी पक्षियों में नाक के छिद्र चोंच के आधार पर होते हैं।) इसी कारण ये मिट्टी में छिपे कीटों व कृमियों को बिना उन्हें देखे खोज लेते हैं। छोटे–मोटे कीड़े–मकोड़ों के अतिरिक्त ये फल, छोटे झींगों, मेंढ़कों आदि का भी भक्षण करते हैं। दिन के समय सुंरगों में विश्राम कर, ये रात्रि में ही बाहर निकल कर अपने भोजन की तलाश करते हैं। नर की तुलना में मादाएँ बड़ी होती हैं।

इनका प्रजनन काल जून से मार्च तक होता है। **'कीवी'** अत्यधिक क्षेत्ररक्षणकारी **(टेरीटोरियल)** होते हैं। नरों में क्षेत्ररक्षण को लेकर संघर्ष भी होता है। इस संघर्ष में वे एक दूसरे को मार भी डालते हैं। 100 हेक्टेयर से भी अधिक इनकी सीमाएँ होती हैं। एक नर, एक मादा के साथ ही रहता है। एक बार जोड़ा बन जाने पर वे जीवन पर्यन्त एक साथ रहते हैं। 18 महीने की आयु पर नर परिपक्व होते हैं। मादाओं के दोनो अण्डाशय (ओवरी) सक्रिय होते हैं (अन्य सभी पक्षियों में केवल बाईं ओवरी ही सक्रिय होती है) और यदि एक प्रजनन काल में एक से अधिक अंडे दिये जाते हैं तो यह कार्य एकान्तर क्रम में दोनो अण्डाशयों से होता है। प्रथम बार एक मादा 3–5 वर्ष की आयु होने पर अंडे देती है। गर्भवती मादा कीवी के अंडे उनके शरीर के भार का 15–20 प्रतिशत होते हैं, और जब सापेक्ष रुप से इतना बड़ा अंडा (120 मि0मी0 लम्बा व 80 मि0मी0 व्यास) उनके शरीर में होता है तो उनका उदर भाग इतना फैल जाता है कि ज़मीन छूने लगता है। इस कष्टकारी समय में आराम पाने के लिए

कीवी – न्यूज़ीलैंड का राष्ट्रीय प्रतीक चिन्ह

'कीवी' कभी–कभी अपने उदर भाग को ठंडे पानी पर टिका देती है। अंडा दिये जाने से पूर्व वह शरीर का इतना स्थान घेरे रहता है कि पेट में भोजन रखने में भी कठिनाई होती है। यही कारण है कि अंडे देने से 2–3 दिन पूर्व मादा कीवी भोजन नहीं कर सकती। अंडा दे देने के पश्चात् मादा तुरंत सुरंग को छोड़ देती है और नर द्वारा अंडे को सेने का दायीत्व ले लिया जाता है। लगभग 2–3 महीने में चूज़े बाहर आते हैं। क्योंकि चूज़ों का आकार बड़ा होता है, वे केवल 3 सप्ताह तक माँ–बाप के साथ रह सकते हैं। तत्पश्चात् उन्हें धकेल कर सुरंग से बाहर कर दिया जाता है।

6. टिनेमू ***(टिनेमस)*** **(चित्र 6)**: भारतीय **'तीतर'** जैसे ये पक्षी उड़ानविहीन पक्षियों के सबसे पुरातन सम्बंधी हैं जो मध्य व दक्षिणी अमेरिका में पाये जाते हैं। सलेटी–भूरे, लम्बे–पतले, गठीले शरीर पर छोटा सा सिर व लम्बी, पतली, नीचे को मुड़ी चोंच होती है। इनकी लगभग 47 जातियों में सबसे छोटी 20 सें0मी0 (43 ग्राम) व सबसे बड़ी 53 सें0मी0 (2.3 कि0ग्रा0) तक होती हैं। इनके पंख छोटे होते हैं, परन्तु अन्य उड़ानविहीन पक्षियों के तुलना में ये कुछ उड़ान भर लेते हैं। वास्तव में इन्हें तेज़ दौड़ने वाला माना जाता है। भोजन प्राप्त करने के लिए ये 10 सें0मी0 तक उछल सकते हैं। इनका भोजन मुख्यतः ऐसे छोटे–छोटे फल व बीज होते हैं जो खासतौर से नीचे पड़े होते हैं या पौधों पर धरती के समीप लगे होते हैं। इसके अतिरिक्त ये अपनी चोंच की सहायता से कूड़े–करकट को इधर–उधर कर, या 2–3 सें0मी0 मिट्टी की गहराई से कलियों, कोमल जड़ों व पत्तियों, कीटों व उनके लार्वों, कृमियों, घोंघों आदि को भी खा लेते है। एक नर कई मादाओं या एक मादा कई नरों के साथ रहते हैं। घास–फूस, पत्तियों व झाड़ियों की बीच ये बहुत से (1 से 12), चटकीली रंगों व चीनी मिट्टी के बरतनों जैसी चमक वाले अंडे (चित्र 6) देते हैं। नर द्वारा अंडे सेये जाते हैं।

टिनेमू

7. पेंग्विन *(एप्टेनोडाईट्स, स्फेनिस्कस आदि)* (चित्र 7) : वर्गीकरण के आधार पर ये उड़ानविहीन पक्षी ऊपर लिखे गये 6 पक्षियों से भिन्न समूह के हैं, परन्तु उड़ानविहीन हैं, इसलिए इनका संदर्भ यहाँ लिया गया है। **'केल्वीनेटर फ्रिज'** के विज्ञापन के साथ काफी दिनों तक एक पक्षी दर्शाया जाता था। वह पेंग्विन पक्षी ही है, जो दक्षिणी ध्रुव पर बर्फीले, समुद्री वातावरण में रहता है। वैसे इन पक्षियों की लगभग 20 जातियाँ **दक्षिणी गोलार्ध** में पायी जाती हैं, जिनमें सबसे बड़ी (1.1 मीटर; 35 कि0ग्रा0) जाति **(एम्परर पेंग्विन)** दक्षिणी ध्रुव के ठंडे क्षेत्रों में व सबसे छोटी (40 सें0मी0; 1.0 कि0ग्रा0) जाति **(फेयरी पेंग्विन)** समशीतोष्ण या ऊष्ण कटिबन्ध क्षेत्रों में पायी जाती हैं।

पूर्णतः जल में तैरने के लिए अनुकूलित इन पक्षियों के शरीर की पीठ पर काले व नीचे सफेद **'परों'** का आवरण होता है और इनके पंख जल में तैरने के लिए **'चप्पू'** जैसे (फ्लीप्पर समान) होते हैं। जल में तैरते हुए ये मुख्यतः झींगों, मछलियों व सीपियों को खाते हैं। गोता लगाकर जीवन व्यतीत करने वाले इन विचित्र पक्षियों की गति 6 से 27 कि0मी0 प्रति घंटा व **एम्परर पेंग्विन** की गोता लगाने की गहराई 556 मीटर तक हो सकती है। ये अपने जालीदार पिछले पैरों पर चलते हैं या कभी–कभी बर्फ पर अपने उदर के सहारे फिसलते (**टोबोगेनिंग** गति) हैं। ऊँची चट्टानों को पार करने के लिए ये अपने पिछले पैरों पर उछलते भी हैं। समुद्री जल पी लेने के बाद शरीर में एकत्र अधिक लवण की मात्रा को ये अपने नासा द्वारों से बाहर स्त्रावित करते रहते हैं।

3 से 8 वर्ष की आयु में ये परिपक्व होते हैं व अधिकाँश जातियों का प्रजनन काल वसन्त से ग्रीष्म ऋतु के मध्य होता है। दक्षिणी ध्रुव के एम्परर पेंग्विन वार्षिक रुप से वहाँ की शरद् ऋतु (जून/अगस्त) में शून्य से 60° सेल्सियस नीचे, 200 कि0मी0 गति से चलने वाली बर्फीली हवाओं व अंधकार–पूर्ण पर्यावरणीय परिस्थियों में प्रजनन करते हैं। कुछ वैज्ञानिकों का मानना है कि ये दक्षिणा–ध्रुवीय पेंग्विन शायद इतने कठोर पर्यावरण में इसलिए प्रजनन करते हैं कि 5 महीने बाद (जनवरी–फरवरी) जब वहाँ की ग्रीष्म ऋतु आती है तो उनके चूज़े आत्मनिर्भर हो चुके होते हैं। भिन्न–भिन्न जातियों में प्रेम–प्रसंग **(कोर्टशिप)** विधि अलग–अलग होती है। अधिकाँश जातियाँ **'मोनोगैमस'** (एक नर, एक मादा) होती हैं, परन्तु उपयुक्त साथी का चयन मादा ही करती है। गुफाओं, चट्टानों, चट्टानों के बीच दरारों, घाटियों, बर्फीले समुद्री तटों, तटीय वर्षा वनों, घनी झाड़ियों आदि विविध स्थानों पर अंडे देने के सुरक्षित स्थान (घोंसले) खोजे जाते हैं। एम्परर एवं किंग पेंग्विन द्वारा किसी प्रकार का घोंसला नहीं बनाया जाता, बल्कि वे एक अंडे को अपने पंजों व उदर की ढीली त्वचा के बीच रखकर सेते हैं (चित्र 6)। अंडों का रंग नीले–सफेद से हरा व आकृति गोलाकार से नाशपाती के आकार की होती है। अंडों की माप (5.5–8.6 या 11. 0–12.7 सें0मी0 लम्बे) व भार (61–154 या 345–515 ग्राम) में भी काफी भिन्नता होती है। अंडे सेने का कार्य (लगभग 2 माह) नर करते हैं और जुलाई–अगस्त में चूज़े बाहर आ जाते हैं।

8. डोडो *(रेफस)* (चित्र 8) : समय के अन्तराल में बहुत से पक्षी इस पृथ्वी पर जीवित रहे और फिर वे विलुप्त हो गये। **'डोडो'** नामक उड़ानविहीन पक्षी हिंद महासागर के **मोरेशियस** नामक टापू पर पाया जाता था। वास्तव में यह पक्षी मूलतः कबूतर जातियों का निकट सम्बंधी था, परन्तु भोजन की अधिकता व शिकारियों की अनुपस्थिति के कारण इनके उड़ने की क्षमता समाप्त हो गई। ये लगभग 1 मीटर ऊँचे व 20 कि0ग्रा0 भार वाले थे। उपलब्ध प्रमाणों के अनुसार डच सैनिकों ने इन्हें सर्वप्रथम 1598 में देखा और 1681 तक सैनिकों व उनके पालतू जानवरों ने इनका शिकार कर इन्हें समाप्त कर दिया। इनकी शारीरिक रचना के बारे में जो भी विवरण मिलते हैं वे 17वीं शताब्दी के चित्रों या लिखित उद्धरणों से मिलते हैं। इन पक्षियों के शरीर पर सलेटी–भूरे **'पर'** थे, पूँछ पर हल्के रंग के **'परों'** का गुच्छा होता था,

सिर सलेटी व नग्न था, चोंच हरी–काली–पीली थी व टाँगे मज़बूत, पीली और काले पंजों वाली थी। पंखों के स्थान पर 3–4 बड़े, काले **'पर'** निकले रहते थे। फलों पर निर्वाह करने वाले ये पक्षी धरती पर घास–फूस का घोंसला बनाते थे और केवल एक बार में एक अंडा देते थे।

'डोडो' के लुप्त होने की बहुत सी प्रचलित, रोचक कहानियों व तथ्यों ने प्रमाणित करने का प्रयास किया है कि किस प्रकार एक जन्तु विलुप्त हो जाता है, और **'डोडो'** के विलुप्तिकरण में तो मनुष्य के हस्तक्षेप का बड़ा योगदान रहा। आज मोरेशियस में **'डोडो'** का अपना **सांस्कृतिक महत्व** है। वह वहाँ का राष्ट्रीय प्रतीक है और वहाँ से जारी डाक टिकटों आदि पर उसे चित्रांकित किया गया है। साहित्य में तो कुछ मुहावरे, जैस **'मृत ऐसा कि, जैसे डोडो' (डैड एज़ ए डोडो),** उपयोग में लाये गये, जिसका तात्पर्य यह था कि अमुक व्यक्ति की 'मृत्यु में तो कोई संशय ही नहीं है।' **'टू गो द वे ऑफ दी डोडो' ('डोडो के रास्ते पर चल पड़ना')** एक अन्य मुहावरा था, जिसका अर्थ था–विलुप्त हो जाना, किसी वस्तु का नियमित अभ्यास या उपयोग से दूर हो जाना अर्थात वह वस्तु जो किसी समय महत्व की थी। ये सभी इस बात को प्रमाणित करते हैं कि उस पक्षी का विनाश/ विलुप्तीकरण असामयिक था। वास्तव में **'डोडो'** शब्द, **डच भाषा** में प्रयुक्त होने वाले शब्द **'डूड'** से बना है, जिसका अर्थ होता है, **'मृत'।**

डोडो – मॉरिशस का राष्ट्रीय प्रतीक चिन्ह

शोध छात्रा,
जन्तु विज्ञान विभाग,
डी0बी0एस0 (पी–जी) कालेज, देहरादून

साइटेशन इंडेक्स की बात केरके मुझे जलील मत करिये। फेस बुक में मेरे दो हजार से ज्यादा फ्रेड हैं।

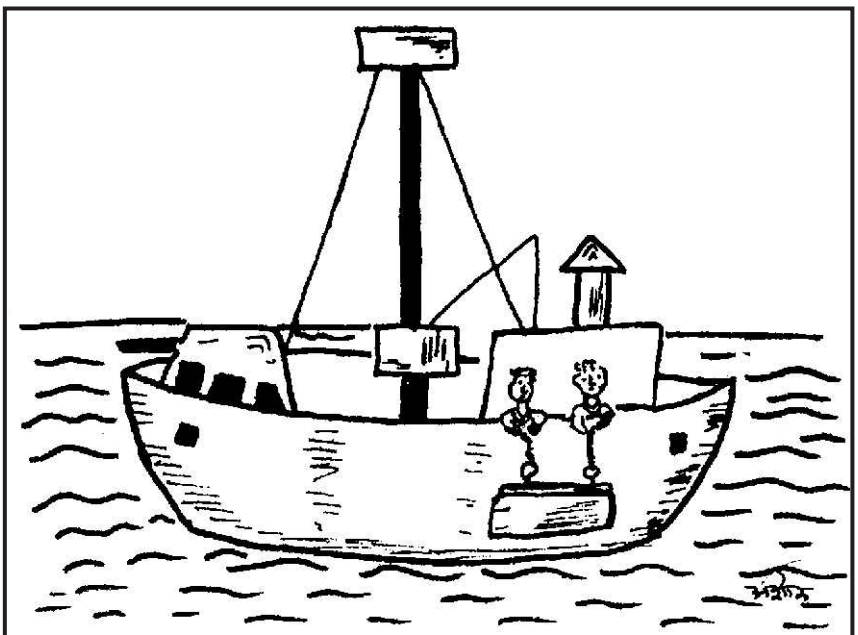

हम इसे समुद्र में दफना तो रहे हैं मगर आने वाले समय में भूवैज्ञानिक समझेंगे कि मानव की एक प्रजाति समुद्र में पानी के अंदर रहती थी।

बुद्वि के लिये खाद्य का उत्तर

यह सख्या है 48।

$48+1 = 49 = 7^2$

$48/2 = 24+1 = 25 = 5^2$

$48 = 8^2 - 4^2$ या 7^2-1^2

$48^2 = 2304$

$48^3 = 110592$

$48^4 = 5308416$

48 = कैडमियम की परमाणु संख्या

यह वास्तव मे चिंता की बात है कि हमारे आज के अधिकांश बुद्विमान विद्यार्थी विषय की जटिल और कठिन समस्याओं का हल प्राप्त करने के लिये पाठय पुस्तकों पर निर्भर रहते है। बहुत ही कम ऐसे होते हैं जो इन समस्याओं पर मौलिक ढंग से सोच सकते या अपना स्वतन्त्र चिन्तन कर सकते हैं। उन्हें नई, अप्रचलित या अस्वाभाविक सी दिखने वाली कल्पनाएँ करना किसी ने सिखाया ही नहीं। आज की पढ़ाने तथा परीक्षा लेने की पद्वति में इस बात के लिये कोई स्थान नहीं। किसी एक विषय का अध्ययन करने वाले विद्यार्थी केवल उसी विषय में जमे रहते हैं। दूसरे विषय पढ़ते ही नहीं। उदाहरण के लिये उन्हें यह नहीं बताया जाता कि एक अच्छा भौतिक विज्ञानी बनने के लिये रसायन शास्त्र का भी अच्छा ज्ञान होना आवश्यक है। क्या हम इस बात का प्रयोग कर सकते हैं कि बारहवीं कक्षा तक के विज्ञान के विद्यार्थियों के पाठ्यक्रम में कला वर्ग के भी एक या दो विषय जैसे दर्शनशास्त्र, समाजशास्त्र रखें जांय? ऐसा करें तो विज्ञान के पाठ्यक्रम का कुछ बोझ कम करना पड़ेगा।

आज हमारा ध्यान केवल इस तरफ है कि हम विद्यार्थी को अपने विषय की अधिक जानकरी दे दें और कल्पना तथा प्रतिक्रिया के किये कोई जगह न छोडें। हम भूल जाते हैं कि यदि किसी का मस्तिष्क उत्तम हो तो जानकारियों को वह स्वयं ही प्राप्त कर लेगा। कुछ हद तक विद्यालय या ग्रेजुएट स्तर तक जानकारियों को केन्द्रीकृत करने से रोका जाय तो विद्यार्थियों के ज्ञान की सीमाएँ बढ़ जाऐगी। विज्ञान शिक्षा संबंधित व्यक्तियों को इस बारे में विचार करना चाहिए। विज्ञान की शोध परियोजनाएँ बनाने वाले पुराने अनुभवी व्यक्ति नई बातें सोच ही नहीं सकते। यह कार्य तो प्रखर बुद्वि वाले युवा तर्ग को ही करना होगा। यह स्वाभाविक है कि अधिकांश शोधकर्ता लहर के सबसे ऊँचे स्थान पर बैठना पसन्द करते हैं परन्तु किसी न किसी को नई लहर उत्पन्न भी तो करनी चाहिए।

प्रो० पी. एन. घोष
(क्षेत्र संपादक, भौतिक तथा पृथ्वी विज्ञान,
एवरीमैन्स साइंस,
फरवरी–मार्च 2005)

विज्ञान वर्ग पहेली - 5 का हल

		1 प्ली		अ	प	3 घ	ट	4 न
	5 नि	हा	रि	का		न		स
6 पि	को			र्ब				
	टि		7 डे	नि	य	8 ल		9 डे
10 जे	न	11 र		क		12 ता	13 लि	का
ली		14 वि	कि	र	ण		थि	
				सा			15 य	क्ष्मा
16 से		17 हु		18 य	ट्रि	19 य	म	
20 मी	ट्रि	क	ट	न		म		

विज्ञान वर्ग पहेली - 6

1		2	3	4			5
6	7		8			9	
10				11			
			12			13	
14		15			16		
17	18				19		20
21				22			15
23						24	

संकेत

बांये से दांयें

2. रीढ़धारी जीवों की पाचन प्रणाली में आत से पहले की वह थैली जहाँ भोजन मुख्य रूप से पचता है (4)
6. कीड़ा; विशेषकर पेट के अंदर का (2)
8. कठोर फल; बोल्ट का साशी (2)
9. एक हजारवां भाग (2)
10. जो बहे (द्रव तथा गैस) (3)
11. शरीर में बनी गाँठ (3)
13. दूरी की इकाई जो 1760 गज के बराबर होती है (2)
15. 1000 किलोग्राम (6)
17. जौ का संस्कृत नाम; लंबाई तथा भार नापने की एक भारतीय इकाई (2)
19. एक ऐसा काल्पनिक पत्थर जिसके स्पर्श से लोहा सोना हो जाता है (3)
21. वजन तौलने का यंत्र (3)
22. एक पेड़ जिसके रेशों से टाट, बोरे आदि बनते हैं; पटसन (2)
23. मानव निर्मित नदी (3)
24. डेनमार्क के एक अणु वैज्ञानिक (1885–1962) जिन्होंने अणु संरचना समझने में क्वांटम सिद्धान्त का प्रयोग किया (2)

ऊपर से नीचे

1. शरीर के अंदर पित्त बनाने वाला अंग (3)
3. परिमाण; पैमाना; नाप; तौल (2)
4. बंद करने वाला; कैमरे में फोटो खींचने के लिये इसे दबाना होता है (3)
5. तिलहनों का छिलका (2)
7. अचानक बेहोशी लाने वाला एक रोग; फिअ (3)
9. एक मीटर का एक हजारवाँ भाग (5)
12. द्रव आयतन नापने की एक इकाई (3)
16. दरवाजा; बॉल्व (3)
18. सुअर (3)
20. गंधक का अंग्रजी नाम (3)
22. कार्य या ऊर्जा की एक इकाई (2)

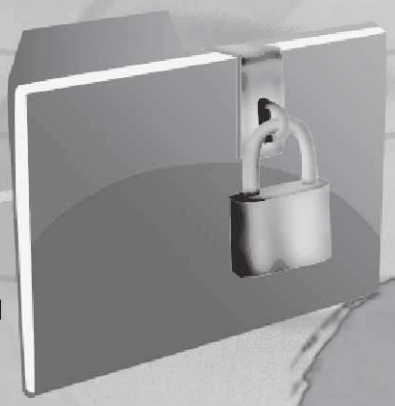

PATENT INFORMATION CENTRE (PIC)

वर्तमान में बौद्धिक सम्पदा अधिकार को सुरक्षित करना विश्व स्तर पर एक महत्वपूर्ण विषय बन गया है। प्रदेश में विभिन्न प्रकार के परम्परागत ज्ञान के साथ-साथ गैर परम्परागत ज्ञान उपलब्ध है। इस तारतम्य में विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी विभाग, भारत सरकार, नई दिल्ली के वित्तीय एवं तकनीकी सहयोग द्वारा प्रदेश के विभिन्न अनुसंधानकर्ताओं / औद्योगिक क्षेत्रों / अनुसंधान व विकास संस्थानों / विश्वविद्यालयों एवं अन्य की सुविधा के लिए उत्तराखण्ड राज्य विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी परिषद् (यूकॉस्ट) में पेटेन्ट सूचना केन्द्र की स्थापना की गई है। इस केन्द्र में अनुसंधान से होने वाली विकसित प्रौद्योगिकी को पेटेन्ट कराया जा सकता है।

केन्द्र के मुख्य उद्देश्य

- बौद्धिक सम्पदा अधिकारों का प्रचार प्रसार एवं विश्वविद्यालयों, शोध संस्थानों, उद्योगों एवं शासकीय विभागों को माँग के आधार पर पेटेन्ट सर्च की सुविधा उपलब्ध करवाना।
- पेटेन्ट सूचनाओं का परीक्षण तथा अनुसंधान एवं विकास से जुड़ी संस्थाओं को नयी योजनाओं के निर्धारण में सहायता देना।
- अन्वेषकों को उनके कार्य का पेटेन्ट दिलवानें हेतु मार्गदर्शन करना।
- प्रदेश में उपलब्ध बौद्धिक सम्पदा की सुरक्षा के उपाय करना।

मत्स्य पालन योग्य मछलियाँ

(चित्रों की संख्या का संदर्भ अन्दर लेख में देखें)

उड़ानविहीन पक्षी

(चित्रों की संख्या का संदर्भ अन्दर लेख में देखें)

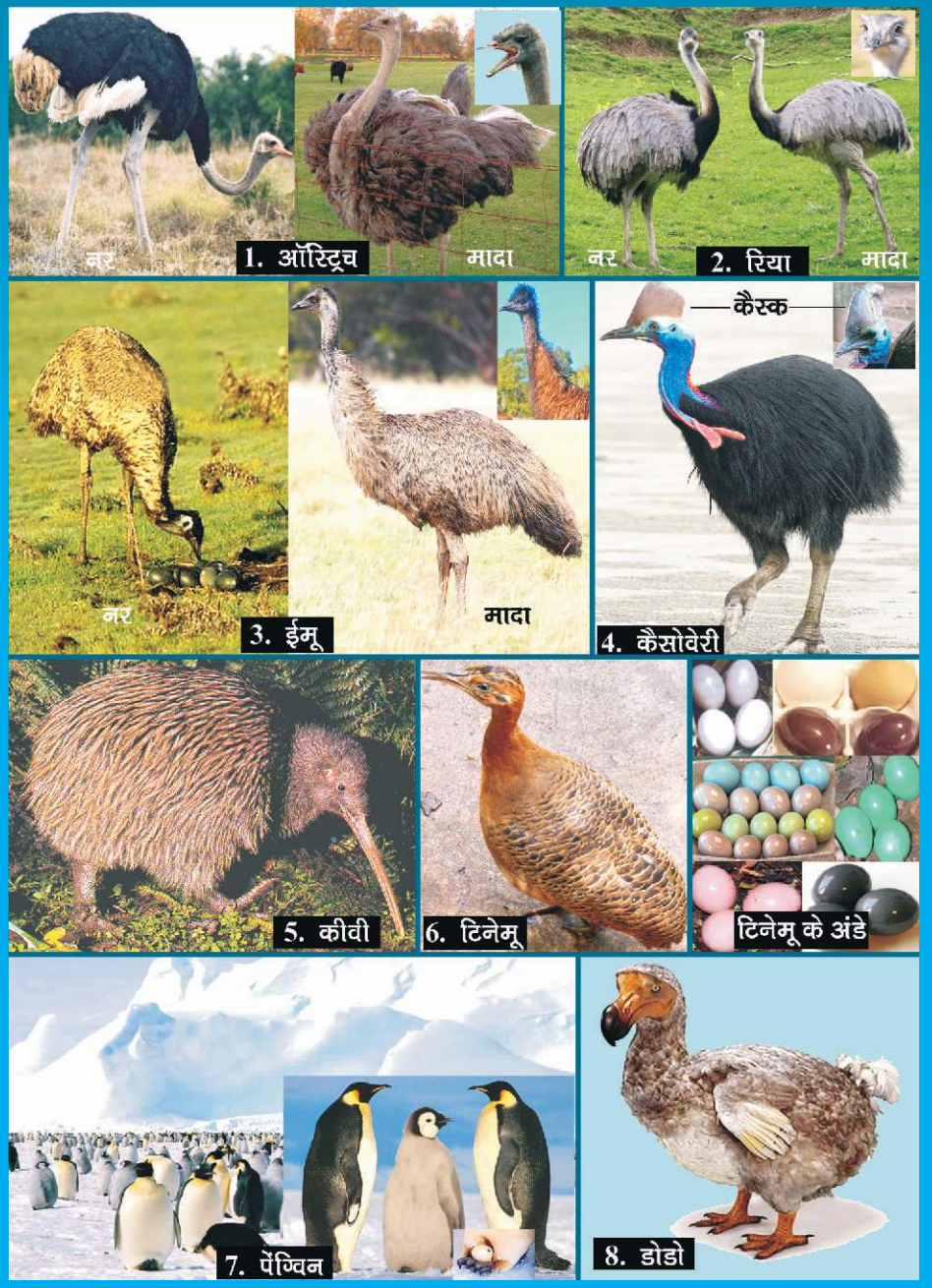

उत्तराखण्ड राज्य विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी परिषद (यूकॉस्ट) दिनांक 21 से 23 नवम्बर, 2012 तक 3 दिवसीय सप्तम उत्तराखण्ड राज्य विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी कांग्रेस-2012 का आयोजन देहरादून में करने जा रही है। मौखिक एवं पोस्टर प्रस्तुतिकरण हेतु निम्न 16 विषयों में शोध पत्र के सारांश आंमत्रित किये जाते है :-

1. कृषि विज्ञान
2. जैव प्रौद्योगिकी, जैव रसायन एवं सूक्ष्म जैविकी
3. वनस्पति विज्ञान
4. रसायन विज्ञान
5. पृथ्वी विज्ञान सह भू-विज्ञान, भू-भौतिकी
6. अभियान्त्रिकी विज्ञान एवं तकनीकी
7. पर्यावरण विज्ञान एवं वानिकी
8. गृह विज्ञान
9. मैटिरियल साइंस एण्ड नैनो टैक्नोलॉजी
10. गणित, सांख्यिकी तथा कम्प्यूटर विज्ञान
11. चिकित्सा विज्ञान एवं फार्मास्यूटिकल साइंस
12. भौतिक विज्ञान
13. विज्ञान एवं समाज/विज्ञान संचार
14. पशु चिकित्सा एवं पशुपालन विज्ञान
15. जन्तु विज्ञान
16. रूरल टैक्नोलॉजी (ग्रामीण प्रौद्योगिकी)

ucost
यूकॉस्ट
विज्ञानम् लोकहिताय

7th STATE SCIENCE AND TECHNOLOGY CONGRESS 2012

केन्द्रीय विषय:

विज्ञान में महिलाओं की भागीदारी

साथ ही एक नासी लोकप्रिय व्याख्यान शीर्षक ''लाईफस्टाइल डिजिजेस'' का भी आयोजन किया जायेगा।

उक्त कांग्रेस में प्रत्येक विषय के अन्तर्गत युवा वैज्ञानिक पुरस्कार (मौखिक व पोस्टर प्रस्तुति) तथा एक अन्वेषक पुस्कार-2012 भी प्रदान किया जायेगा।

उक्त कांग्रेस में निम्नलिखित 05 विषयों प मस्तिष्क मंथन सत्रों का आयोजन भी कि जायेगा जिसमें देश भर से विभिन्न उत्कृष्ट वैज्ञानिकों द्वारा विचार विर्मश किया जायेगा:-

1. न्यूक्लियर सांइस एण्ड टैक्नोलॉजी
2. हाईड्रोकार्बनसः सस्टेनेबिलिटी एण्ड रिसाईकलिंग
3. साइंस एण्ड इनोवेशन
4. वूमैन इन सांइस एण्ड टैक्नोलॉजी
5. प्रोस्पेक्टस ऑफ एप्लाईड मैथेमेटिक्स

उक्त Demand Draft कार्यकारी अध्यक्ष (Executive Chairman), सप्तम उत्तराखण्ड राज्य विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी कांग्रेस-2012 के नाम से देय होगा जो शोध पत्र के सारांश की एक प्रति के साथ (बैवसाईट www.ucost.in में दिये गये प्रारूप व editable MS Word में) प्रभारी वैज्ञानिक, सप्तम उत्तराखण्ड राज्य विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी कांग्रेस-2012 को उपरोक्त पते पर डाक एवं ईमेल (usstc7@ucost.in) द्वारा दिनांक 30 जून, 2012 तक अवश्य पहुँच जानी चाहिए।

डा० राजेन्द्र डोभाल,
महानिदेशक

उक्त कांग्रेस हेतु रजिस्ट्रेशन फीस निम्नवत् निर्धारित की गयी है :-

1. वैज्ञानिक/प्रवक्ता - ₹ 750.00
2. शोधार्थी (छात्रवृत्ति प्राप्त) - ₹ 500.00
3. शोधार्थी (बिना छात्रवृत्ति प्राप्त) /छात्र- शून्य

उत्तराखण्ड राज्य विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी परिषद
विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी विभाग (उत्तराखण्ड शासन)
6 वसंत विहार, फेज-I, देहरादून-248 006, उत्तराखण्ड
Ph. 0135-2762759; 2762766 (O); 2761063 (Fax); Email: ucost@ucost.in